बापू

मैंने क्या देखा, क्या समझा ?

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

बापू

मैंने क्या देखा, क्या समझा ?

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-१४

पहली आवृत्ति २०००, सन् १९५४
पुनर्मुद्रण ३०००, सन् १९५८

रु० ०.५०

सितम्बर, १९५८

समर्पण

सन् १९०८की बात है। मैं सातवे दर्जेमें पढता था। अेक रोज शामको जयपुरके रामनिवास बागसे खेल कर लौट रहा था। रास्तेमें अेक अंधी बुढिया रास्ता दिखानेकी मदद माग रही थी। मैंने अुसकी बैसाखी पकड कर अुसे अपने घर पहुचा दिया और हृदयमें अेक अनोखा सुख अनुभव किया। वास्तवमें अुसने मुझे आनन्ददायिनी विशुद्ध सेवाका रास्ता बताया। अुसी अज्ञात प्रज्ञाचक्षु वृद्धाको यह पुस्तक कृतज्ञतापूर्वक समर्पित है।

रामनारायण चौधरी

दो शब्द

जिन लोगोने मेरी 'वर्तमान राजस्थान'* नामक सार्वजनिक सस्मरणोकी पुस्तक पढी है, अुनमे से अनेकोने गाधीजीके सम्बन्धमें अैसे ही सस्मरण लिखनेको मुझसे कहा है। मेरे परम मित्र प० बनारसीदासजी चतुर्वेदीने जब जब मिलना या पत्र-व्यवहार हुआ अैसी माग की है। अुन्होने तो विदेशोके लिअे अग्रेजीमें लिखनेका भी सुझाव दिया है। नवजीवन ट्रस्टके व्यवस्थापक-ट्रस्टी श्री जीवणजीभाअी देसाअीने भी चाहा है कि बापूके बारेमे अुनके सपर्कमें आनेवालोकी जानकारीकी जितनी बातें सामने आ जाय अुतना ही अच्छा है। श्री काका कालेलकरने अपनी 'बापूकी झाकिया' के प्राक्कथनमें सबीसे यह अपील की है। अिसलिअे मैंने यही ठीक समझा कि अपने दस वर्षके साधारण और बीस सालके घनिष्ठ परिचयमें मैंने महात्मा गाधीको जैसा देखा और समझा अुसकी कुछ झाकिया जनताके सामने पेश कर दू।

परन्तु महापुरुषोंके बारेमे अेक सावधानी जरूर रखनी चाहिये कि सिवा अुन चीजोके जो अक्षरश किसी महापुरुषके लेखो या वचनोसे अधिकृत रूपमें अुद्धृत की जाय, और जो भी कुछ अुसके विषयमें लिखा या कहा जाय अुसे अुसका विचार या वचन न समझकर यह समझना चाहिये कि लेखकने अुस विचार या वचनको अिस प्रकार समझा है। पाठकोसे अनुरोध है कि अिस पुस्तकको पढते समय भी वे यह सावधानी अवश्य रखें, ताकि गाधीजीको समझनेमें भूल न हो और अुनके विचारोके प्रति कोअी अन्याय न हो।

अिन सस्मरणोमें मेरी सहधर्मिणी अजनादेवीके भी कुछ सस्मरण शामिल है। साथ ही अिनमें गाधीजीके कुछ अैसे साथियोके बारेमें भी फुटकर और सक्षिप्त सस्मरण दिये गये है, जो अिस ससारमें नही रहे या जिनका मुझ पर खास असर पडा। गाधीजीको जिस रूपमें मैंने देखा अुसका यथेष्ट चित्र अुपस्थित करनेके लिअे यह सामग्री देना आवश्यक था।

आशा है अिस सामग्रीसे मेरे खयालमें अिस युगके ही नही, बल्कि अितिहास भरके सबसे बडे पुरुषके बारेमें पाठकोकी कुछ न कुछ ज्ञानवृद्धि जरूर होगी और अुसे समझनेमें थोडी-बहुत सहायता अवश्य मिलेगी।

अजमेर
३० जनवरी, १९५४

रामनारायण चौधरी

---

* यह पुस्तक राजस्थान प्रकाशन मडल, अजमेरने प्रकाशित की है। मूल्य ४ रु०; डाकखर्च ०—१२—०।

बापू

मैंने क्या देखा, क्या समझा ?

१

गाधीजीसे मेरा प्रथम परिचय परोक्ष ही हुआ। १९१३ की बात होगी। मैं अुस समय जयपुरके महाराजा कालेजकी अिंटर कक्षाका विद्यार्थी था। राजस्थानमें राष्ट्रीय जाग्रतिके जनक स्वर्गीय पडित अर्जुनलालजी सेठीके ससर्गसे मुझे देशभक्तिकी दीक्षा मिल चुकी थी और मुझ पर क्रातिकारी विचारोका अुन्माद-सा सवार रहने लगा था। अुधर दक्षिण अफ्रीकामें गाधीजीका सत्याग्रह आन्दोलन जोर-शोरके साथ चल रहा था। देशभरमें अुसकी सहायता और हिमायतमें विराट सभाओ और धन-सग्रहकी धूम मची हुअी थी। परन्तु जयपुर अेक देशी राज्य था। अग्रेजोका जमाना था। रियासतोमें अग्रेजी अिलाकेसे भी सार्वजनिक जीवनका अधिक दमन था। ब्रिटिश साम्राज्यवादकी अैसी ही नीति थी। अिसलिअे राजधानी जयपुरका वातावरण अितना गलाघोटू था कि भारत भरमें खलबली मचानेवाले अिस आन्दोलनका जयपुरमें कोअी प्रत्यक्ष प्रभाव नही था। फिर भी समाचारपत्रो द्वारा आनेवाली खबरोसे पढे-लिखे लोगो और विद्यार्थियोको अेक हद तक जानकारी व स्फूर्ति भी मिलती ही थी।

हमारी मडलीमें श्री कृष्णकान्तजी मालवीयकी 'मर्यादा' और श्री गणेशशकरजी विद्यार्थीकी 'प्रभा' मासिक पत्रिकाअें आती। वे अेक ओर भारतीय क्रातिकारियोके जीवन और कारनामे प्रगट कर रही थी और दूसरी तरफ गाधीजीके सत्याग्रह आन्दोलनकी गतिविधिका अुत्साहवर्द्धक रूप अुपस्थित कर रही थी। मुझ पर अुस आन्दोलनका पहला असर गोरोके प्रति घृणाकी वृद्धिका हुआ और दूसरा यह हुआ कि हमारा अेक देशवासी अैसा तो निकला जो ब्रिटिश साम्राज्यमें होनेवाले अत्याचारोके विरुद्ध खुले तौर पर सामूहिक विद्रोह कर और करा रहा है। मेरे युवक हृदयमें अेक हलकी-सी आशा बधी कि किसी दिन यह आदमी भारतमें आकर भी अपने जौहर दिखायेगा। अुन दिनो हिन्दी ससारमें बापू कर्मवीर गाधीके नामसे मशहूर थे। महात्माकी पदवी अुन्हे बादमें मिली।

२

बापूसे मेरी दूसरी जान-पहचान भी हुअी तो अप्रत्यक्ष ही, परन्तु वह पहलेसे अधिक निकटकी थी। बनारस षड्यत्रके मामलेमें फसनेसे बाल-बाल बचनेके बाद क्रातिकारी दलके प्रचारके जोशमें मैं १९१५ के अन्तमें जापान जानेकी अेक छात्रवृत्ति और कालेज छोडकर जयपुर राज्यान्तर्गत शेखावाटी प्रदेशके रामगढ कस्बेमें अेक शिक्षक बनकर पहुच गया था। यहाका वातावरण मारवाडी सेठोके कलकत्ते बम्बअीसे लाये हुअे सस्कारोके कारण जयपुरसे अधिक स्वतत्रतापूर्ण था। यहा खुफिया पुलिसका जोर और रियासती दमनका भय लगभग नही था। परन्तु सेठोके भेदभावपूर्ण व्यवहारको

मेरा समतावादी और स्वाभिमानी मानस सहन न कर सका। अुन्हीं दिनों कलकत्तेमें अेक बंगाली युवकने शायद वसन्तकुमार दास नामक सी० आअी० डी० के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्टकी हत्या की थी। अिसी प्रकारकी और घटनाअें भी बंगालमें हो रही थीं। गांधीजी भारत लौट आये थे। अुन्होंने कलकत्तेके छात्रोंमें अेक भाषण दिया, जिसमें अिन आतंकवादी कृत्योंकी भर्त्सना की गअी और साथ ही सरकारकी दमन-नीतिकी निन्दा। मुझे अुनका यह दोहरा साहस असाधारण लगा। मैंने अपनेमें अिसकी धुंधली-सी छूत और गांधीजीके व्यक्तित्व और कार्य-प्रणालीके प्रति हलका-सा आकर्षण महसूस किया।

३

अुन्हीं दिनों रामगढ़में अेक विशेष घटना हुअी। वहाँके पोद्दारों और खेमकोंके दो प्रभावशाली परिवारोंमें सामाजिक प्रतिष्ठा और राजमान्यताके क्षेत्रमें प्रतिद्वंद्विता थी। अेक मामलेमें सीकरके राजाजीने, जो रामगढ़के भी जागीरदार थे, अिन दोनों कुटुम्बोंके झगड़ेका अैसा फैसला दिया, जिसे खेमकोंने पोद्दारोंके प्रति पक्षपात और अपने लिअे अन्याय समझा। अुस समयके रियासती विधानके अनुसार पीड़ित पक्ष रावलसे अर्थात् राज्यकी अदालतमें अिस जागीरके दीवानी फैसलोंकी अपील नहीं कर सकता था। अुसने 'देशत्याग' (हिजरत) का आश्रय लिया। मुझे खूब याद है कि जब खेमकोंके असबाबकी गाड़ियाँ और सवारीके रथोंकी कतार बाजारसे गुजरी, तब सारा कस्बा अुस हृदयद्रावक दृश्यको देखनेके लिअे अुलट आया था और सब दर्शकोंके नेत्र सजल थे। पोद्दारों पर अिसका तुरन्त असर हुआ। अुन्होंने अपना दावा लौटा लिया और खेमकोंको मनाकर वापस ले आये। घरमें अपने अनशनसे माता-पिताको जीत लेनेके सिवा मेरे लिअे यह दूसरा अनुभव था, जिसने मुझे स्वयं कष्ट सहन करके विपक्षीका दिल जीतनेके बापूके तरीकेकी ओर अज्ञात रूपमें खींचा।

४

यहीं मेरी स्व० सेठ जमनालालजीसे प्रथम भेंट हुअी। वे हमारे स्कूलमें आये और मेरा राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे अितिहास पढ़ाना देखकर प्रभावित हुअे। अेक मारवाड़ी युवकमें देशभक्तिका होना अुन दिनों विशेष आकर्षक लगता था। मेरी अुनकी शामको बातें हुअीं और अुन्होंने मुझे वर्धा आनेका निमन्त्रण दिया। अुस समय तक जयपुरकी क्रान्तिकारी मण्डलीके नेता श्री छोटेलालजी जैन हिंसा-मार्गका त्याग करके बापूके हो चुके थे और अुन दिनों अुनके साथ चम्पारनमें काम कर रहे थे। मैंने जुलाई १९१७ में कलकत्तेसे 'मार्डन' छोड़कर अपने जन्मस्थान सीकरके थाने पहुँचते ही जमनालालजी और छोटेलालजी दोनोंको अेक साथ अिसकी सूचना भेज दी। दोनों ही तरफसे मुझे बुलावा आ गया।

परन्तु मेरे आश्चर्यका ठिकाना नही रहा, जब मुझे छोटेलालजीके बजाय गाधीजीका पत्र मिला और वह भी हिन्दीमें। यद्यपि दुर्भाग्यवश वह मेरे पास सुरक्षित नही रहा, फिर भी मुझे याद है कि अुसकी भाषा और लिखावट अच्छी नही थी। परन्तु गाधीजीका खुदका खत और हिन्दीमें आना मेरे लिअे बडे गर्वकी बात थी। अुसमें मुझसे अपनी आवश्यकताअें पूछी गअी थी और यह भी पूछा गया था कि मैं कब तक चम्पारन पहुच सकता हू। मैंने दोनो बातें लिख दी और साथ ही यह भी सूचना दे दी कि जमनालालजी भी मुझे बुला रहे है। अिसका जो अुत्तर आया वह पहलेसे भी आश्चर्यजनक था। बापूके लिखनेका आशय यह था कि आपकी मागें तो मुझे मजूर है, मगर मैं अपनी आवश्यकतासे जमनालालजीकी जरूरतको ज्यादा महत्त्व देता हू। अिसलिअे आप वहा जायं तो बेहतर हो। मुझे यह त्यागभाव अनूठा लगा। मेरी मागें भी अुस समयके लिहाजसे कुछ अधिक कही जा सकती थी, परन्तु गाधीजीने अुन्हे पूरी तरह स्वीकार करके अुदारताका भी परिचय दिया।

५

मैं जमनालालजीके पास चला गया, परन्तु मनमें अेक गुप्त शका रह गअी कि कही मेरे आतकवादी विचार तो गाधीजी तक पहुचनेमें बाधक नही हुअे होगे। अिस शकाका समाधान छोटेलालजीने जब हम कअी वर्ष बाद मिले तब यू किया कि बापूजीको तो क्रान्तिकारी युवक अधिक पसद है, क्योकि अिनमें अुन्हें प्राण और निष्ठा मालूम होती है और अुनके कअी प्रमुख साथी भूतपूर्व क्रान्तिकारी है। यह भी पता चला कि छोटेलालजीने चम्पारनमें बापूजीसे मेरी अच्छी तरह 'चुगली' खाअी थी। अेक बात बापूने खास तौर पर पूछी थी कि क्या रामनारायणजी छुआछूत छोड सकेंगे? जब अुन्हे 'हा' में अुत्तर मिला तो साश्चर्य हर्ष हुआ, क्योकि किसी मारवाडीके लिअे अुस जमानेमें सामाजिक क्षेत्रमें अितने साहसकी आशा नही रखी जाती थी। परन्तु मैं तो अपने स्वभावके अनुसार प० अर्जुनलालजी सेठीके प्रथम ससर्गमे ही खान-पान और स्पर्शास्पर्शके मामलेमे जाति-पाति, हिन्दू-मुसलमान और छुआछूतके भेदभावको तिलाजलि दे चुका था।

६

दिसबर १९१७की बात है। काग्रेसका अधिवेशन कलकत्तेमें होनेवाला था। मैं अुन दिनो सेठ जमनालालजी और श्रीकृष्णदासजी जाजूके पास मारवाडी शिक्षा-मडलमें काम कर रहा था। सेठजी राजस्थानी युवकोको — विशेषतः देशसेवा और समाज-सुधारकी भावनावाले मारवाडियोको — खास तौर पर प्रोत्साहन देते थे। मुझे भी अपने और जाजूजीके साथ वे काग्रेसके लिअे कलकत्ते ले गये। सयोगवश गाधीजी भी अुसी गाडीसे जा रहे थे। वे तीसरे दर्जेमें थे। नगा सिर, मोटी खादीका कुर्ता

पहने, रागकी डडीका चश्मा लगाये वे कुछ पढ रहे थे। लम्बे-लम्बे कान, सावला-सा रग और अजीब भद्दी-सी शक्ल थी। परन्तु न जाने क्यो, देखते ही मुझ पर विलक्षण प्रभाव पड़ा और धन्यता अनुभव हुआ।

७

नागपुर निकल जानेके बाद जाजूजी जिज्ञासावश गाधीजीके डब्बेमें जा बैठे और अुनसे प्रश्न किया कि जो काम आपने अफ्रीकामें किया वह यहा क्यो नही हो सकता? जहा तक मुझे याद है जाजूजीने हमें गाधीजीका अुत्तर अुन्हींके शब्दोंमें सुनाया कि, 'Given the cause and the leader the same can be done here' (कारण और नेता मिल जाय तो वही यहां भी हो सकता है।) अिस सूत्ररूपी जवाबसे जाजूजी जैसे मितभाषी और बुद्धिमान व्यक्ति तो सतुष्ट हुअे ही, मुझे भी वह मत्र-सा लगा।

८

कलकत्तेमें बापूजीको माहेश्वरी विद्यालयके नये बन रहे मकानमें ठहराया गया था। जमनालालजीने मुझे अुनकी सेवामें तैनात किया। मुझे अिससे बढकर और क्या चाहिये था? ज्यू ही वे शौच-स्नानके लिअे कपड़े, साबुन और लोटा लिये निकले, मैंने अपनी सेवायें पेश की। तुरंत बोले, 'नही, नहीं, अिसमें बोझा नही।' मैंने कहा, 'तो कपडे मुझे धोने देंगे?' 'वह तो मैं रोज हाथसे ही करता हू।' अितने बडे आदमीकी यह सादगी अुस जमानेमें असाधारण बात थी। जब मैंने अुन्हें चम्पारनके पत्रव्यवहारकी याद दिलाअी, तो तुरन्त कहने लगे, 'अच्छा, छोटेलालजीने आप ही के लिअे कहा था। आजकल कहा है? वर्धा ही हैं न?'

९

कांग्रेसका अधिवेशन हुआ। मेरे लिअे कांग्रेस ही क्या, किसी भी बड़े समारोहके देखनेका यह पहला ही अवसर था। अुस समय भारतके राजनीतिक गगनमें तीन सितारे विशेष चमक रहे थे। श्रीमती अेनी बीसेण्ट अधिवेशनकी अध्यक्ष थी। वे हाल ही में नजरबन्दीसे छूटी थी और होमरूल आन्दोलनकी नेता थीं। लोकमान्य बाल गगाधर तिलक राष्ट्रीय हृदयोंके सम्राट और देशके सबसे प्रभावशाली नेता थे। कर्मवीर मोहनदास करमचद गाधी दक्षिण अफ्रीका और चम्पारनके सत्याग्रहोंके विजयी वीर और भारतीय आकाशके अुदीयमान सूर्य थे। ये तीनों और महामना मदनमोहनजी मालवीय देशी पोशाकमें थे। अन्य बडे नेता विदेशी वेशमें थे। भाषण हिन्दीमें केवल गाधीजीका हुआ। जब वे नगे पैरो, मोटी खादीका लम्बा अगरखा पहने और काठियावाड़ी पगड़ी लगाये राष्ट्रभाषामें बोलने खड़े हुअे, तो सबकी नजर और कान अुन्हीकी

ओर थे। मैं तो आनन्दविभोर होकर रोमांचित हो गया। अंतमें अुन्होंने अंग्रेजीमें भी भाषणका सार दिया था, परन्तु श्रोताओंके बहुत आग्रह पर।

१०

कांग्रेस अधिवेशनकी समाप्ति पर मारवाडी समाजकी ओरसे अुन्हें मानपत्र दिया गया। अभिनंदन समारोह माहेश्वरी विद्यालयमें हुआ। शामका वक्त था। विद्यालय-भवन खचाखच भरा हुआ था। अुनका अेक वाक्य मुझे भलीभांति स्मरण है। 'असे गंदे वातावरणमें विद्यालय रखनेसे अुसे जला डालना अच्छा है।' अुनका संकेत शहरकी नैतिक अपवित्रता और भौतिक अस्वच्छता दोनोंकी ओर था। लोगोंको ठकुर-सुहाती कहकर खुश करनेके अुस युगमें असा कटु किन्तु कल्याणकारी सत्य कहनेका साहस किसी नेतामें मैंने पहली ही बार देखा।

११

शायद १९१८के गरमीके दिन थे। जमनालालजी कुछ बीमार थे। वे अेक दिन शामको बम्बअीकी अपनी दुकान बच्छराज जमनालालकी छत पर लेटे हुअे थे। मैं भी पास ही बैठा था। अितनेमें गांधीजी और अेक टूटे हाथवाले अन्य सज्जन आ पहुंचे। बादमें मालूम हुआ कि वे गांधीजीकी साथी प्रसिद्ध देशसेविका श्रीमती अवन्तिका बाअीके पति अवसर-प्राप्त अिंजीनियर श्री गोखले थे। अिस बार बापू नंगे पैर तो थे, परन्तु अंगरखा और पगडीके स्थान पर कुर्ता-टोपी पहने हुअे थे। गांधी टोपी मैंने पहले-पहल देखी। जमनालालजीकी मिजाजपुरसीके लिअे आये थे। गांधीजीकी अुस सहृदयता और रोगियोंके प्रति कोमल भावनाका भी मुझे यह प्रथम ही परिचय था, जिसे आगे चलकर तो मैंने अपने अनुभवसे भी गैरमामूली मात्रामें पाया। मेरा आकर्षण गांधीजीकी ओर बढता ही जा रहा था।

बातचीतमें पता लगा कि वे दूसरे ही दिन पूनाके पास चिंचवडके अनाथाश्रमके किसी समारोहका सभापतित्व करने जा रहे हैं। मैंने भी जानेकी अिच्छा प्रगट की और जमनालालजीने, शायद गांधीजीसे मेरा संपर्क बढानेकी दृष्टिसे, तुरंत स्वीकृति दे दी और सुविधा कर दी। मेरे सुपुर्द अुनके लिअे फल ले जानेका सुखद कर्तव्य कर दिया गया। वे प्रथम विश्वयुद्धके अंतिम दिवस थे। बापूजी भारतीय सैनिकोंके अेक तीसरे दर्जेके डब्बेमें बैठे थे। स्व० महादेवभाअी देसाअी साथ थे। सिपाहियोंने बापूजीको तो अेक तख्ते पर लेटने लायक जगह दे दी थी, मगर बदलेमें महादेवभाअीको आगनकी शरण लेनी पड़ी। मैं भी अुनके साथ शरीक हो गया। सिपाही लोग दूसरे मुसाफिरोंके साथ गाली-गुफ्तार और धक्का-मुक्कीसे पेश आ रहे थे, जिसे देखकर मुझे भीतर ही भीतर अुबाल आ रहा था। परंतु बापूजी अुन्हें बड़ी शान्ति और धीरजसे समझाते थे। अिस यात्रामें २४ घंटे साथ रहनेका सौभाग्य मिला। मैं अुनके सफाअी, सादगी और वक्तकी पाबन्दी आदि गुणोंका मर्मस्पर्शी प्रभाव लेकर लौटा।

१२

व्यक्तिगत दृष्टिसे अेक मजेदार बात भी हुअी। दो अेक बार जब वे मुझे 'आप' शब्दसे संबोधन करते रहे, तो मैंने अेक मर्तबा साहस करके पूछा, "मुझे आप 'तुम' नहीं कह सकते?" बापू हंसकर कहने लगे, "अैसा समय आ सकता है, परंतु अभी नहीं।" वर्षों बाद तो वे मुझे 'चिरंजीव' ही लिखने लगे थे। असलमें सभी निकटके साथियों और आश्रमवासियोंको वे अपना पुत्र या पुत्री समझते थे, पत्रव्यवहारमें अुसीके अनुसार संबोधन करते थे और वैसा ही बर्ताव रखते थे। साथियोंके प्रति अैसी पारिवारिक भावना, अितनी अुत्कट आत्मीयता बापूजीके व्यवहारकी वह विशेषता थी, जो मेरी जानकारीमें किसी और महापुरुषके जीवनमें अितनी नहीं पाअी जाती। गांधीजीके बाद अुनके साथियोंमें यह गुण सबसे अधिक जमनालालजीमें था।

१३

बापूके अेक कार्यकी मेरे मन पर बड़ी विपरीत प्रतिक्रिया हुअी थी और वह था अुनका अंग्रेजोंके लिअे फौजी भरती करना। अनेक युवकोंकी तरह मेरा हृदय भी ब्रिटिश हुकूमतके प्रति रोषसे जल रहा था। गांधीजीके अिस सहयोगने आगमें घीका काम दिया और मैंने मान लिया कि यह आदमी निरा सन्त है, राजनीति नहीं समझता। मगर यह असर बहुत दिन नहीं टिका। गांधीजीने होमरूल आन्दोलनके सिलसिलेमें भद्र अवज्ञाकी जो मुहिम जारी की, अुससे मेरा आदर अुनकी कर्मण्यताके प्रति पहलेसे भी बढ़ गया। अिसके बाद रौलेट कानूनके विरुद्ध देशव्यापी किन्तु शांत संग्राम और पंजाब हत्याकांडकी कांग्रेसी जांचने अुस आदरमें और वृद्धि की। थोड़े ही समय बाद जब प्रयागके खिलाफत सम्मेलनमें बापूका असहयोग कार्यक्रम पास हुआ, तब तो अुनकी राजनीतिक नेतृत्वकी योग्यतामें भी मेरा विश्वास होने लगा। अिस कार्यक्रमके हिन्दू-मुस्लिम-अेकता और अस्पृश्यता-निवारणके अंगोंमें मुझे अुस समय [illegible] या आध्यात्मिकता तो दिखाअी नहीं दी, परंतु अुसमें अेक ओर अुनकी [illegible] और [illegible] परिस्थितियों तथा जन-मानसको आन्दोलित करनेवाली विशेष [illegible] [illegible] अुठाकर राष्ट्रको दृढ़ करनेकी दीर्घदृष्टि तथा दूसरी ओर हिन्दू [illegible] [illegible] [illegible] करनेकी कुशलताके दर्शन अधिक हुअे।

१४

[illegible] १९२० को [illegible] [illegible] निधन हुआ। क्रान्तिकारी दल अुन्हें [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] था और [illegible] राजनीतिमें अुनका अनुयायी था। अिस [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] भक्ति-भावना थी। अुन दिनों मैं सेठ जमनालालजी द्वारा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] काम कर रहा था। जिस रोज 'बॉम्बे [illegible]' में [illegible] [illegible] समाचार आये मैं बुखारमें पड़ा था। यह खबर

पढते ही मेरे दिलको अैसा धक्का पहुचा कि जितना अिस अवसर पर मैं रोया अुतना अपने महान अुपकारक पिताजी और परम स्नेहमयी माताके मरने पर भी नही रोया। अतमें मुझे अिस बातसे आश्वासन मिला कि देशको गाधीजीके रूपमें तिलकका योग्य अुत्तराधिकारी प्राप्त हो गया है। कुछ धुधली-सी स्मृति है कि लोकमान्यने भी मृत्युसे पहले यह कहा था कि राष्ट्रके हित गाधीजीके हाथोमें सुरक्षित हैं और बापूजीके भी अुद्‌गार थे कि लोकमान्यका काम जारी रहेगा। मेरे कमरेमें अुन्हीका चित्र था। मैंने बिस्तर पर बैठकर अुन्हे प्रणाम किया और अुनकी साक्षीमें गाधीजीको श्रद्धापूर्वक भारतका और अपना राष्ट्रीय नेता स्वीकार किया और सारा समय और शक्ति लगाकर आजन्म देशसेवा करनेका व्रत ले लिया। यह मुख्यत भावना-प्रधान निश्चय था, जिस पर सितम्बर १९२० में लाला लाजपतरायकी अध्यक्षतामें हुअी कलकत्तेकी विशेष काग्रेसने बापूके असहयोग कार्यक्रमको पूरी तरह स्वीकार करके बुद्धिकी मुहर लगा दी। परतु यह परिवर्तन जिसे अुन दिनो देशी राज्योके कार्यकर्ता ब्रिटिश भारतीय राजनीति कहते थे अुसीसे सबध रखता था। समूचे भारतके बारेमें मेरे विचारोमें यह सशोधन नागपुर काग्रेसके समय हुआ।

१५

मेरा तीसरी बार बापूसे मिलनेका अवसर दिसम्बर १९२० में आया। नागपुरमें काग्रेसका साधारण अधिवेशन था। मेवाडमें बिजौलिया जागीरके किसान-सत्याग्रहके नेता श्री विजयसिंहजी पथिक बापूसे मिलने अुनके कैम्पमें गये। मैं भी साथ था। मुझे अपने पिताजीसे प्राप्त बडोका अदब और सकोच सदा रहा है। अिसलिअे मैं पथिकजीकी आडमें बैठा। बापूजीकी तेज नजरने देख लिया और पूछा, 'ये कौन है?' 'हमारी सस्था राजस्थान-सेवासघके मत्री और मेरे प्रमुख साथी हैं।' जब मैंने मुह सामने किया तो तुरत बोले, 'आप चिचवडमें मिले तो थे?' अितनी प्रबल थी अुनकी स्मरण-शक्ति और लोक-सग्रहकी वृत्ति कि अितनी कार्यव्यस्तता और हजारोके परिचयमें भी अेक अदना कार्यकर्ता—या भावी कार्यकर्ता—को वे न भूले!

१६

पथिकजीने पूछा, "महात्माजी, हम लोग बिजौलियाके अपने छोटेसे काममें लगे रहे या आपके अिस महान यज्ञमें हाथ बटाये?" "नही, आपको स्वधर्म पालन करना चाहिये। वह भी तो मेरा ही काम है और अिस यज्ञकी ही अेक आहुति है। आप अुसीमें लगे रहिये। हा, असहयोग कार्यक्रमके जो अग देशी राज्यमें लागू किये जा सकते हो अुन्हें जरूर अपने क्षेत्रमें लागू कर लीजिये। मगर मैं तो अुलटे आपसे अेक बात पूछना चाहता हू। मैंने बिजौलिया सत्याग्रहमें मदद देनेका वचन आपको पहले दिया था। यह बडी जिम्मेदारी मुझ पर बादमें आअी है। हिसाबसे मुझे पहले बिजौ

हुआ वादा पहले पूरा करना चाहिये। अुसका बोझा मेरे दिल पर है। आप अुससे मुझे मुक्त करें तो ही मैं नया भार हल्के हृदयसे अुठा सकता हू।" पथिकजी गद्‌गद हो गये और मैं तो पानी पानी ही हो गया। वचन-पालनकी कितनी अुत्कट भावना प्रगट होती थी अिस अुत्तरसे! सार्वजनिक क्षेत्रमें भी निर्लोभी होनेका कितना अुदात्त भाव था अिस सलाहमें! बात यह थी कि दो तीन वर्ष पहले बापूजीने महादेवभाअीको बिजौलिया भेजकर जाच करा ली थी, किसानोंकी शिकायतोंको सही पाया था और यह वचन दिया था कि महाराणा न्याय नही करेंगे तो मैं स्वय बिजौलिया सत्याग्रहका सचालन करूगा। अिससे मुझे किसी कामको छोटा-बड़ा न समझकर अपने अगीकृत कर्तव्यको पूरा करनेका ही सबसे ज्यादा खयाल रखनेका पाठ भी पहली मर्तबा मिला। अस्पष्ट-सा यह भी बोध हुआ कि रियासतोंमें ब्रिटिश भारतके राजनीतिक कार्यक्रमको ज्यूका त्यू लागू करनेमें दोनोंकी हानि है।

१७

नागपुर अधिवेशनमें बापूजीने काग्रेसका जो विधान तैयार करके पास कराया, अुसकी तीन बातोंका मुझ पर खास असर हुआ। अुनमें से पहली तो यह थी कि काग्रेसके ध्येयमें ब्रिटिश भारतके बजाय देशी राज्यों सहित सारे भारतके स्वराज्यका समावेश किया गया। हम लोग कुछ ही समय पहले राजस्थान-सेवा-सघ नामक सस्था स्थापित करके आजन्म देशी रियासतोंकी जनताकी राजनीतिक सेवाका व्रत ले चुके थे। अुन दिनों देशी राज्योंके कार्यकर्ताओंमें अेक वर्ग अैसा था — और हम लोग भी अुसीमें थे — जिसे यह सन्देह था कि ब्रिटिश भारतके नेता अपने लिअे अधिकार प्राप्त करके राजाओंसे समझौता कर लेंगे और रियासतोंको अछूता छोड देंगे। अिससे रियासती जनताके लिअे परम्परागत और अनियन्त्रित शासनकी गुलामी बनी ही नही रहेगी, अुसकी जजीरें और भी मजबूत हो जायगी। गाधीजीने राष्ट्रकी आजादीके लिअे लडनेवाली सर्वोपरि सस्थाके विधानमें रियासतोंको शामिल करके और वहाकी जनताको, अप्रत्यक्ष ही नही, प्रतिनिधित्व देकर हम लोगोंकी बडी शकाका समाधान कर दिया।

मुझे अपील करनेवाली दूसरी बात थी भाषाके आधार पर प्रान्तोंकी रचना। मैं अुन दिनों अपने देहाती कार्यक्रममें अपनी मातृभाषा राजस्थानीमें ही बोलता था। मैंने अनुभव किया कि अिस साधनके बिना मेरा काम कारगर नही हो सकता था। मुझे अुसमें साहित्यिक भाषा या खडी बोलीसे सम्पन्नता भी अधिक मालूम हुअी। ममत्व तो था ही। अिसलिअे भाषावार प्रान्तोंकी व्यवस्था मुझे अत्यत स्वाभाविक, न्यायपूर्ण और अुपयोगी प्रतीत हुअी।

तीसरी बात मेरे कार्यक्षेत्रसे सीधा सम्बन्ध रखनेवाली थी। बापूके विधानने राजपूताना, मध्यभारत और अजमेर-मेरवाडेको अितिहासमें पहली बार अेक प्रान्त स्वीकार करके सयुक्त राजस्थानकी आकाक्षाओंको बड़ा सन्तोष दिया। परिणाम यह

हुआ कि मैंने हृदय और बुद्धि दोनोंसे गांधीजीको समस्त राष्ट्रका अकेमात्र राजनीतिक नेता स्वीकार कर लिया। मुझे याद है अिस प्रस्तावके पास होने पर मैं खुशीके मारे अुछल पड़ा था।

१८

श्री मुहम्मदअली जिन्नाह् किसी प्रस्ताव पर बोलने खड़े हुअे। बापूको अुस समय 'महात्मा' की पदवी मिल चुकी थी। जिन्नाह् साहबकी अंग्रेजी भाषा और पश्चिमी लिबास तो था ही, बापूको अुन्होंने 'मिस्टर गांधी' कहकर याद किया। अिस पर मौलाना मुहम्मदअली खड़े हुअे और बोले, 'मिस्टर नहीं, महात्मा कहिये।' प्रतिनिधियोंने शोर मचाया, 'बैठ जाअिये।' दर्शक चिल्लाये, 'महात्मा गांधी कहिये।' मगर जिन्नाह् साहब अपनी बात पर अड़े रहे। वयोवृद्ध सभापति श्री विजयराघवाचार्यने भी समझाया, 'आम जनताकी भावनाका खयाल रखना अच्छा है।' परन्तु जनाब जिन्नाह् टससे मस न हुअे। तब बापूने अुठ कर लोगोंको मीठी डांट पिलाअी, 'मैं महात्मा नहीं, मामूली आदमी हूं। जिन्नाह् साहबके विचार-स्वातंत्र्यमें बाधा डाल कर आप मेरा सम्मान नहीं कर रहे हैं। दूसरों पर जबरन् अपने विचार थोप कर हम शुद्ध स्वराज्य नहीं ले सकते। जब तक किसीकी भाषामें कोअी अशिष्ट या अशोभनीय बात न हो, तब तक वह दूसरेके बारेमें कुछ भी मत रखे और प्रकट करे।' तब कहीं लोग शान्त हुअे। बापूकी अपनी नम्रताके भानका और जनसमूहकी असहिष्णुता और अंधश्रद्धाके विरोधका यह प्रथम अनुभव मेरे लिअे बड़ा शिक्षाप्रद था।

१९

नागपुर कांग्रेसके सिलसिलेमें मुझे अेक बात बापूकी और अेक जमनालालजीकी पसन्द नहीं आअी। बापूका लाला लाजपतराय जैसे पुराने हुतात्माओंकी अपेक्षा मोतीलालजी नेहरू जैसे नये त्यागियोंको अधिक महत्त्व देना खटका और जमनालालजीका डॉ० मुंजेके मुकाबिलेमें स्वागताध्यक्ष बनना अदूरदर्शितापूर्ण दिखाअी दिया, यद्यपि मैं जमनालालजीके निकट था और मुझे अुनके चुनाव पर गर्व भी हुआ था। पिछली बात मैंने अुनसे अुसी समय कही भी थी। अुनका बचाव यह था कि अुन्हें बापूके कार्य पर विश्वास है और डॉ० मुंजेको नहीं है, अिसलिअे कार्यकी सफलताकी दृष्टिसे बहुमतका निर्णय मानना अुन्होंने धर्म समझा है। मगर मेरा यह भय बना रहा कि लोकमान्यके निधनके ताजा घावसे व्यथित महाराष्ट्रके हृदय और लोकमान्यके कारण प्राप्त नेतृत्वसे वंचित महाराष्ट्रकी बुद्धिको ठेस लगेगी और बापूजीके कार्यक्रमको महाराष्ट्रके राजनीतिक हलकोंमें पूरा सहयोग नहीं मिलेगा। आगे चल कर जब शायद १९४० या १९४१ में बापू खाकसार संगठन पर विस्तृत रूपमें लिखनेकी तैयारी कर रहे थे, तब मैंने अुनसे भी कहा था कि अल्लामा मशरिकीकी तरह डॉ० हेडगेवारके

जर्मनी जाकर फैसिस्ट विचारधारा और सगठन-प्रणाली सीख कर आने और तदनुसार राष्ट्रीय स्वयसेवक सघकी स्थापना करनेका बीज नागपुर कांग्रेसकी अुक्त घटनामें ही था। मैं तो यहा तक मानता हू कि बापूकी हत्या भी अुस छोटेसे बीजका अेक बड़ा फल था।

२०

बापूके सामूहिक सत्याग्रहका प्रयोग स्वतत्र रूपमें सर्वप्रथम बिजौलियामें हुआ। अुसके आरभमें जहा बापूकी अप्रत्यक्ष प्रेरणा थी, वहा बादमें अुनकी सीधी सलाह और सहायता भी रही। यह मेवाड राज्यका जागीरी जिलाका था, जहाका जागीरदार प्रजासे कठोर भूमिकर और दर्जनो लागबाग वसूल करता था और अमानुषिक रूपसे बेगार कराता था। अुसे दीवानी, फौजदारी और रेवेन्यू अदालतके अधिकार प्राप्त थे। कोअी पद्रह हजारकी आबादी थी। लोगोमें तीव्र असन्तोष था। अुस असन्तोषको युद्ध-ऋणकी वसूलीमें मनमानी करके जागीरदारने तीव्रतर बना दिया था। अितनेमें सन् १९१६ या १९१७ में बनारस षड्यत्रके भागे हुओ अभियुक्त श्री पथिक वहा आ पहुचे। थोड़े ही समयमें अुन्होंने किसानोको सगठित करके जागीरदारके अत्याचारोंके शान्त विरोधका नेतृत्व धारण कर लिया। अुनकी कार्यप्रणालीमें क्रान्तिकारियोकी गुप्तता और गाधीजीकी खुलावट, दोनो तत्त्वोका सम्मिश्रण था। सामन्ती व्यवस्थाकी क्रूरता और जनताकी भीरुताके कारण नेताकी असामयिक गिरफ्तारीसे सारा आन्दोलन चौपट होनेका अन्देशा था। अिसलिअे पथिकजी छुपकर रहते थे। परतु किसानोका सारा आन्दोलन प्रगट और शान्तिपूर्ण था। पथिकजी जमनालालजीकी मारफत बापूसे परिचय कर चुके थे। बापूने महादेवभाअीको बिजौलिया भेजकर जाच करवा ली थी। बाहरके कार्यकर्ताओंमें खुले रूपमें बिजौलिया जानेवाले पहले कार्यकर्ता महादेवभाअी थे। अुन्होंने किसानोकी शिकायतोको सही पाया। अुन दिनो मेवाड राज्यके दीवान महामना मालवीयजीके पुत्र प० रमाकान्त थे। बापू अुनके द्वारा महाराणा फतहसिंहजीसे किसानोंके साथ न्याय करनेका अनुरोध कर चुके थे, और पथिकजीको वचन भी दे चुके थे कि यदि किसानोंके साथ अिन्साफ नही हुआ तो वे स्वय सत्याग्रहके अगुआ बनेंगे।

जागीरदारकी आज्ञायें न मानना, अुसे कोअी कर न देना और अुसकी अदालत व पुलिससे वास्ता न रखना अिस सत्याग्रहका मुख्य कार्यक्रम था। तीन चार साल जब तक सत्याग्रह रहा, लोगोने शराब छोड दी, शादी और मौसर बन्द रखे, जागीरकी सारी जमीन पडत रखी और किसानोंने आसपासके अिलाकोमें खेती करके गुजर किया, ठिकानेका लगान वसूल नही हुआ और अुसकी अदालतमें मामले-मुकदमे नही गये। अुन दिनो बिजौलिया प्रदेश चारो तरफ 'वन्देमातरम्' की आवाजसे गूजता था। हर स्त्री-पुरुषका यही अभिवादन था। किसान-पंचायतमें सभी लोग शरीक थे। अुनका सगठन बडा व्यापक और दृढ था। अुसका अनुशासन जबर्दस्त था। अुसकी अपनी पाठशालाओं थी। समाज-सुधार, सफाओ और स्वदेशी प्रचारका काम भी साथ साथ

जारी था। अिस प्रकार अिस आन्दोलनके संघर्ष और रचना, दोनों पहलुओं पर बापूकी कार्यप्रणालीकी छाप स्पष्ट थी।

२१

पथिकजी बिजौलियाके संबंधमें जब भी कोअी गंभीर समस्या अुपस्थित होती और कोअी खास कदम अुठानेको होते, तब गांधीजीसे परामर्श करके ही निर्णय करते थे। चार वर्षके सफल संग्रामका जागीरदार पर असर पड चुका था। अुसकी ओरसे समझौतेके संदेश आने लगे थे। बापू अुन दिनों दिल्लीमें थे। पथिकजी और मैं अुनसे वहीं मिले। वे अपने अीसाअी मित्र आचार्य रुद्रके मेहमान थे। बापूजी अब मुझे पहचानने लगे थे। यह मेरी अुनसे चौथी भेंट थी। अुन्होंने समझौतेके प्रस्तावका स्वागत किया। अुन्होंने साफ तौर पर राय दी कि अब जो भी कार्यकर्ता बिजौलिया जाय या रहे, वह खुले तौर पर काम करे। तदनुसार मैं वहां भेजा गया। वहां मैंने देखा कि बापूके नाम पर नहीं तो अुनकी सलाह या सहायतासे चलनेवाले आन्दोलनसे जागीरदारको काफी हानि और परेशानी हुअी थी, फिर भी अुनके और अुनके अमलेके मनमें बापूके प्रति खूब आदर-भाव था। जब मैं बिजौलियासे लौटा तो गांधीजीके सार्वजनिक सत्याग्रहके अपूर्ण-से स्वरूपका भी प्रभाव और परिणाम देखकर अुस पर मेरा विश्वास हो गया और मैं गुप्त षड्यंत्र और स्फुट हिंसा तथा लूट-मारकी देशभक्तिके अुन्मादसे मुक्त होकर जनताकी खुली सेवाका कायल हो गया। मैंने आतंकवादको सदाके लिअे प्रणाम कर दिया।

२२

लेकिन हम लोगोंके सार्वजनिक जीवन पर अिससे भी अधिक ठोस छाप गांधीजीकी यह पडी कि हमने आजन्म सेवा करनेवाले कार्यकर्ताओंकी अेक संस्था बनाअी। अिसका नाम राजस्थान-सेवा-संघ था। यूं तो माननीय गोखलेजीकी भारत सेवक समितिका नाम हमने सुन रखा था, परंतु वह नरम दलवालोंका संगठन था, जो अुन दिनों हमारे लिअे अैसी ही चिढकी वस्तु थी जैसा सांडके लिअे लाल कपडा होता है। अिसलिअे हमने अुस पर ध्यान नहीं दिया। परंतु बापूके आश्रमके संगठनके अध्ययनने हमने अुसके खालिस आध्यात्मिक अंगको छोडकर शेष बातोंको अपनानेका निश्चय कर लिया। यूं तो नौकरीके बंधनोंमें जकडे रहकर, धन और वैभवकी गोदमें खेलते हुअे, सत्ताके आसन पर विराजमान होते हुअे और दूसरे धंधे करते हुअे भी विचारवान और भावनाशील मनुष्य समाजकी भलाअीके काम कर सकता है, फिर भी अैसे लोग अपवाद-स्वरूप ही होते हैं और अुनके कार्यकी मात्रा भी मर्यादित होती है। परंतु जब किसी देशकी स्वतंत्रताका प्रश्न हो, किसी प्रजाको रोग, दारिद्र्य और अज्ञानके गहरे गर्तसे निकालना हो या समाजका पुनर्निर्माण करना हो, तब तो वाञ्छित

फल प्राप्त करनेके लिअे अैसे लोगोंकी जरूरत अनिवार्य ही होती है, जिनको अेक ही लक्ष्यका ध्यान हो और अुसीकी प्राप्ति पर जिनकी सारी शक्तियां केन्द्रित हों। ये सामाजिक सन्यासी या मिशनरी सिर्फ भिक्षान्न पर गुजर करनेवाले और सारा समय लगाकर काम करनेवाले ही हो सकते हैं। अुनमें न व्यक्तिगत सम्पत्तिका मोह होना चाहिये और न धार्मिक रागद्वेष। हम लोगोंने बापूके अिन विचारोंको शिरोधार्य कर लिया।

तदनुसार मैंने भी अपनी अचल पैतृक सम्पत्तिको तिलांजलि दे दी। हमारे संघका प्रत्येक कार्यकर्ता अपने और अपने आश्रितोंके लिअे प्रति व्यक्ति १५) रुपये मासिकसे अधिक नहीं ले सकता था और अुसमें भी कोअी बचत रहे तो अुसे संघको लौटा देता था। अिस प्रकारके आदर्श, अुत्साह और कार्यक्रमसे अनुप्राणित होकर हमारे संघने राजस्थानकी जनताकी सर्वतोमुखी सेवाके क्षेत्रमें पदार्पण किया। अब बिजौलियाकी जिम्मेदारी पथिकजीसे हटकर संघ पर आ गअी। यह घटना १९२० के नवम्बर मासकी है।

मुझे अिस कठिन मार्ग पर अग्रसर होनेमें अपनी पत्नी अंजनादेवीसे बड़ा बल मिला। अुसे दो बार पूज्य बापूके दर्शनोंका लाभ मिल चुका था। अुसकी बापूसे वर्धामें दो बार भेंट हो चुकी थी और फलस्वरूप अुसने जेवर न पहनने और विदेशी तथा मिलका कपड़ा छोड़कर खादी धारण करनेकी प्रतिज्ञा ले ली थी, जो कभी नहीं टूटी।

२३

सेठ जमनालालजीकी अुदार सहायतासे हम लोगोंने 'राजस्थान केसरी' नामक साप्ताहिक कलकत्तेकी विशेष कांग्रेसके बाद वर्धासे निकाला। मैं अुसका प्रकाशक व सहायक सम्पादक बनाया गया। अुन दिनोंके प्रेस कानूनके अनुसार सारी कानूनी जिम्मेदारी प्रकाशककी ही होती थी। सम्पादकका तो नाम भी पत्र पर देना जरूरी नहीं था।

'राजस्थान केसरी' अेक ओर देशी राज्यों और खास तौर पर राजस्थानकी जनताके अभाव-अभियोगों पर खुलकर रोशनी डालता और दूसरी तरफ असहयोग आन्दोलनका प्रबल समर्थन करता। हमारी मंडली असहयोगकी प्रवृत्तियोंमें प्रमुख भाग लेती। अिस प्रकारसे हमारा कार्यालय वर्धामें असहयोग-कार्यक्रमका मुख्य केन्द्र बन गया था। अिन सब बातोंसे सरकारका हमसे नाखुश होना स्वाभाविक था। वर्धा जिलेके डिप्टी कमिश्नर अेक विद्वान भारतीय थे। वे दमनकी पहल करनेकी सीधी जिम्मेदारी लेनेको तैयार नहीं थे। अिसलिअे किसी गांवमें अेक थानेदारने, जिसने वहां बड़े जुल्म किये थे और जिसके विरुद्ध 'राजस्थान केसरी' में कोअी खबर छपी थी, पत्र पर मानहानिका मुकदमा चलाकर मुझे और श्री सत्यदेव विद्यालंकारको तीन तीन महीनोंकी सजा दे दी गअी।

परन्तु जेलमें पहुंचकर भारतीय कर्मचारियों पर बापूका असाधारण प्रभाव देखकर हम दंग रह गये। जेलरने, जो अेक मद्रासी थे, बहुत अिज्जतके साथ हमारा स्वागत किया। सुपरिन्टेन्डेन्ट अेक बूढे बंगाली सिविल सर्जन थे। वे जब दूसरे दिन आये तो अुन्होंने अपने व्यवहारसे हमें और भी आश्चर्यचकित कर दिया। अुन्होंने आते ही हमें झुककर प्रणाम किया और जब आते तब अैसा ही करते। अुनकी बुजुर्गीके कारण भी हमें अुनकी अिस नम्रतासे लज्जा हुअी, तो कहने लगे "आप लोग देशकी आजादीके लिअे कष्ट अुठा रहे हैं और महात्मा गांधीके प्रतिनिधि हैं। हम और कुछ न कर सकें तो आपका आदर भी न करें?" जेल-अधिकारियोंके बापूके प्रति अिस भक्तिभावके कारण ही हमें 'क' वर्गमें होते हुअे भी स्वास्थ्यके नाम पर 'अ' वर्गकी लगभग सारी सुविधाअें प्राप्त हुअीं। जेलरके साथ हम बगीचेमें घूमने जाते, अुनके घर पर नाश्ता करते, दफ्तरमें बैठकर पत्रव्यवहारमें सहायता देते, कुअेंमें कूद-कूदकर नहाते। और तो और, हम जेलमें बैठकर अपने पत्रके लिअे लेख भी लिखकर भेजते और जब जिससे चाहते मुलाकात कर लेते। अहमदाबादकी कांग्रेस निकट आ रही थी। हमारे छूटनेकी विधिवत् तारीख अधिवेशनकी समाप्तिके अेक दिन बाद पड़ती थी। जेल सुपरिन्टेन्डेन्टने अुतने दिनकी रियायत देकर हमारी रिहाअी अिस प्रकार कर दी कि हम ठीक समय पर अहमदाबाद पहुंच गये और वह भी सरकारके खर्च पर! अैसा था गांधीका जादू जो भीतर ही भीतर भारतीय राज-कर्मचारियोंके हृदयोंमें चमत्कार कर रहा था! मुझे अनुभव हुआ कि जहां निरे राजपुरुषोंकी अुनके अनुयायी भी आलोचना करते हैं, वहां सन्तोंकी अुनके शत्रु भी प्रशंसा करते हैं।

२४

जब मैं अहमदाबाद पहुंचा तो वहां अपूर्व दृश्य देखा। जहां पहलेकी कांग्रेसें शहरके बीचमें सजे हुअे पंडालोंमें होती थीं, दर्शक और प्रतिनिधि कुर्सियों पर बिठाये जाते थे और होटलोंमें ठहराये जाते या ठहरते थे, वहां अिस बारका 'गांधी-छाप' अधिवेशन नगरके बाहर लम्बे-चौड़े मैदानमें हुआ। खादी और बांसके टट्टोंका ही मंडप और अतिथियोंके लिअे अुसी सामग्रीसे बने हुअे कमरे थे। खाअियां खोदकर और घास व टाटकी आड़ लगाकर पाखाने और पेशाबघर बनाये गये थे, जिन्हें शौच जानेवाले स्वयं मिट्टी डालकर स्वच्छ रखते थे या अिसी कामके लिअे तैनात स्वयं-सेवक साफ कर देते थे। कांग्रेस नगरकी अपनी जल-व्यवस्था और भोजनका अपना ही सादा किन्तु स्वास्थ्यप्रद प्रबन्ध था। खादीकी प्रदर्शनी, ग्रामीण नृत्य और गान तथा हिन्दुस्तानी भाषाकी प्रधानता पहली ही बार नजर आअी। नेताओंके लिअे मेज-कुर्सीके बजाय गद्दी-तकियेका और प्रतिनिधियों तथा दर्शकोंके लिअे फर्श पर बैठनेका अिंतजाम था। सर्वत्र खादी ही खादी दिखाअी देती थी। ये सब बातें नअी थीं और गांधीयुगके आगमनकी सूचना दे रही थीं।

अिस अवसर पर बापूके केवल दर्शन ही हुअे। भेंट होनेका सौभाग्य नहीं मिल सका। परन्तु छोटेलालजीसे छह वर्ष बाद पुनर्मिलनका सुखद अवसर प्राप्त हुआ। अुन्होंने अपने हस्ताक्षर करके आश्रम-भजनावलिकी अेक प्रति मुझे भेंट की, जो अब भी अेक मूल्यवान स्मृति-चिह्नके रूपमें मेरे पास सुरक्षित है। दूसरी अुल्लेखनीय घटना थी छोटेलालजी द्वारा स्व० श्री मगनलालभाअी गांधीसे परिचय होना। मुलाकात तो थोड़ी देरकी थी और वह आखरी ही साबित हुअी, परन्तु अुनकी सादगी, मितभाषण, गंभीरता और लगनकी गहरी छाप मुझ पर पहली ही बारमें पड़ गअी। अिसी अवसर पर स्व० मणिलालजी कोठारीसे भी जान-पहचान हुअी, जो आगे चलकर आत्मीयताकी हद तक बढ़ गअी। वे अधिकतर बापूके कामोंके लिअे चंदा जमा करते थे और अिस कारण गांधीवादी हलकोंमें 'भिक्षुराज' के नामसे पुकारे जाने लगे थे। बड़े भावुक और प्रेमी जीव थे और राजस्थानके मामलोंमें बड़ी दिलचस्पी लेते थे। सिरोहीके भीलों पर जब गोलीकांड हुआ था, तब बापूने अुसकी जांच और पीड़ितोंकी सहायताके लिअे कोठारीजीको ही भेजा था। अुनकी रिपोर्टके आधार पर बापूने 'यंग अिंडिया' में अेक टिप्पणी भी लिखी थी, जो भीलोंके लिअे सहायक और रियासती कार्यकर्ताओंके लिअे अुत्साहवर्धक सिद्ध हुअी।

लेकिन अिस अवसर पर जो सबसे कीमती परिचय बापूका हुआ, वह था साबरमती सत्याग्रह आश्रमके रूपमें। छोटेलालजीने मुझे सब जगह घुमाकर सारी प्रवृत्तियां दिखाअीं। यद्यपि वह आरम्भकाल ही था, फिर भी साबरमती तट पर वृक्षोंकी छायामें अलग अलग सादे मकान, सम्मिलित भोजनालय, खेती, गोशाला, कताअी-बुनाअी, राष्ट्रीय शिक्षा, स्त्री-पुरुषकी समानता, स्वतंत्रता और मर्यादा तथा समान और सात्त्विक जीवनकी व्यवस्था देखकर यह असर पड़ा कि गांधीजी जो कहते हैं वह करते भी हैं और राष्ट्र व समाज-रचनाके अपने कार्यक्रमके सभी अंगोंका विकास साथ-साथ करते जा रहे हैं। जब मैंने छोटेलालजीसे विदा ली तो आश्रमका मन पर अितना आकर्षण था कि चलते चलते मेरे मुंहसे ये शब्द निकल ही पड़े "किसी न किसी दिन फिर आपके साथ होना पड़ेगा।" दस वर्ष बाद वही हुआ भी।

२५

अुन दिनों देशमें कांग्रेसका नाम अितना नहीं था जितना महात्मा गांधीका। जनतामें अुनके रचनाकारी और चमत्कारी पुरुष होनेके कअी किस्से चल पड़े थे। राजस्थानमें यद्यपि जन-जागृति, सार्वजनिक कष्ट-निवारण और राजनीतिक आन्दोलनका काम मुख्यतः राजस्थान-सेवा-संघके कार्यकर्ता कर रहे थे, परन्तु ग्रामीण जनता और अधिकारी दोनों हमें यह समझते थे कि हम लोग महात्मा गांधीके आदमी हैं और जनतामें कार्यकर्ताओंके प्रभाव और अुनके प्रति विश्वासका यह अेक मुख्य कारण था। भारतमें सत्याग्रहकी जो ज्वाला प्रगट हुअी थी अुसका यद्यपि राजस्थानके रियासती क्षेत्रोंमें सीधा सम्बन्ध नहीं था, फिर भी अुससे प्रेरित और अनुप्राणित होकर

नदियोंकी दोहरी गुलामीमें पिसती हुअी जनता जगह जगह सामूहिक रूपमें अुठ खडी हुअी थी और अुसने लागबाग, वेगार, रिश्वत और अधिक लगान देना बन्द कर दिया था, नशाखोरी कम हो गअी थी और कुरीति-निवारणकी लहर-सी आ गअी थी। कअी व्यक्तियोंके जीवन पलट गये थे, विलासी त्यागी और कायर वीर बन गये थे।

२६

अिसका अेक विलक्षण अुदाहरण अुल्लेखनीय है। अहमदाबाद कांग्रेससे लौटकर जब मैं बिजौलियाके समीपवर्ती बेगूं जागीरमें पहुंचा, तो वहां भी किसानोंमें अपूर्व चेतना पाअी। अिस जाग्रतिसे क्षुब्ध होकर वहांके अेक छुटभैये रावडदा ठाकुरने स्त्रियों तक पर अत्याचार करने शुरू कर दिये थे। अेक दिन अुसने अेक मालिनको सरे बाजार घसीटवाया और अेक भीलनीको औंधी लटकवाकर पिटवाया। अिसे किसान सहन न कर सके और ठाकुरके भवन पर सामूहिक रूपमें पहुंच गये। ठाकुरने भी भरी बन्दूक तान ली। गोलीकांड और फिर प्रतिशोधका कुचक्र चलने ही वाला था कि अितनेमें रामनिवास शर्मा नामक अेक अल्पशिक्षित — लगभग अपढ — देहाती युवक कार्यकर्ता, जो बापूके आन्दोलन और व्यक्तित्वसे प्रभावित हो चुका था, सामने आया। अुसने 'महात्मा गांधीकी जय'का गगनभेदी नारा लगाया और सारी भीडने अुसे प्रतिध्वनित किया। अुसने अेक हाथके अिशारेसे भीडको शांत रहनेका आदेश दिया और दूसरे हाथसे छाती खोलकर ठाकुरके सामने कर दी। अहिंसक शौर्यके अिस प्रदर्शनका विलक्षण परिणाम हुआ। भीड शान्त रही, ठाकुरका हृदय-परिवर्तन — कमसे कम तात्कालिक रूपमें — हो गया और दोनों पीडित बहनें रिहा कर दी गअी। जनता विजयपताका फहराती हुअी और अपनी आन्तरिक शक्तिका भान करती हुअी घर लौट आअी।

२७

अेक और घटनासे चोर-डाकुओं तक पर बापूके सुप्रभावका पता चला। मैं बिजौलियामें था। ग्वालियर राज्यके सिंगोली अिलाकेसे वहां घाटी चढकर आना पडता था। वह घने जंगलके बीच थी और चोर-डाकुओंका गढ मानी जाती थी। रक्षक दलके बिना वहांसे गुजरना खतरनाक होता था। अेक बार अेक सुनार मेरे पास आकर पैरोंमें पड़कर अत्यन्त कृतज्ञ भाव प्रगट करने लगा। मैं आश्चर्यमें पड गया और कुछ समझ न सका। जब पूछा तो अुसने बताया कि "कल मैं सिंगोलीकी घाटीमें डाकुओंकी जदमें आ गया था। परन्तु जब मैंने 'वन्देमातरम्' का अभिवादन किया, अपने खादीके कपडे बताये और महात्मा गांधीका आदमी होना जाहिर किया, तो डाकू मुझे बिना कुछ कहे-सुने अछूता छोडकर चले गये।" अेक बार मैं भी अुसी मार्गसे कुछ किसानोंके साथ जा रहा था। अेक सशस्त्र टोली जंगलकी तरफसे

हमारी ओर बढ़ती हुअी दिखाओी दी। किसान तुरन्त ताड़ गये कि क्या माजरा है। अुन्होंने जोरसे 'महात्मा गांधीकी जय' बोली और हथियार-बन्द दल जिन पैरों आया था अुन्हीं पैरों चुपचाप लौट गया। मैंने सोचा कि भारतीय संस्कृतिने चोर-डाकुओंमें भी ब्राह्मणों, साधुओं और स्त्रियों पर हिंसा व बलप्रयोग न करनेकी जो मर्यादा स्थापित की है, अुसमें महान सन्त गांधीने लोकसेवकों और अुनके समर्थकोंको भी स्थान दिलवा दिया है।

२८

सन् १९२१ की बात है। अजमेरमें पथिकजी और कुछ कांग्रेसी कार्यकर्ताओंमें मतभेद हो गया था। अुन्हीं दिनों दीनबन्धु अेंड्रूजने बेगारको 'आधुनिक गुलामी' की पदवी देकर अुसके विरुद्ध भारतव्यापी मुहिम छेड़ रखी थी। हम लोग यही लड़ाओी राजस्थानमें लड़ रहे थे। हमने दीनबन्धुको राजस्थानमें आनेका निमंत्रण दिया। अुन्होंने स्वीकार कर लिया। तारीखें और कार्यक्रम भी तय हो गया। अिसी बीच स्थानीय कांग्रेसी नेताओंने दीनबन्धुको पथिकजीके विरुद्ध कुछ लिखा होगा। पथिकजी दीनबन्धुको गांधीजी द्वारा अपना परिचय करा चुके थे। अिसलिअे वे बापूसे पथिक-जीके बारेमें जानना चाहते थे। अिस सम्बन्धमें श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदीने "अेक जगह जो लिखा है वह अुन्हींके शब्दोंमें सुनिये

"देशबन्धु सी० आर० दासके मकान पर महात्मा गांधीजी व भारतभक्त अेंड्रूज बातचीत कर रहे थे। वहीं बैठा हुआ मैं भी अिस वार्तालापको सुन रहा था। कुछ देर बाद मि० अेंड्रूजने कहा, 'महादेवभाओी कहां हैं?' महात्माजीने अुत्तर दिया, 'वे कहीं बाहर गये हुअे हैं, क्या आपको अुनसे कुछ काम है?' मि० अेंड्रूजने कहा, 'पथिकके विषयमें अुनसे कुछ पूछना था। वे कौन हैं, कैसे आदमी हैं?' महात्माजी मुस्कराते हुअे बोले, 'I can tell you something about Pathik Pathik is a worker, while others are talkers Pathik is a soldier, brave and impetuous but obstinate He was Mahadev's infallible guide in Bijolia and the remarkable thing is that the masses of Bijolia have implicit confidence in him'"

('मैं पथिकके बारेमें कुछ बतला सकता हूं। पथिक काम करनेवाला है, दूसरे सब बातूनी हैं। पथिक अेक सिपाही आदमी है, बहादुर है, जोशीला है और तेज मिजाज है, लेकिन जिद्दी है। जब महादेव बिजौलिया गये तब पथिक अुनके निर्भ्रान्त मार्गी थे। महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि बिजौलियाकी जनताका अुन पर पूरा पूरा विश्वास है।')

मनुष्य-चरित्रके जितने अुत्तम ज्ञाता महात्मा गांधी थे अुतना शायद ही कोओी दूसरा हो। मगर मुझे अिस घटनामें बापूके मानव-चरित्रके ज्ञानसे भी अुनकी गुण-ग्राहकता, न्यायपरायणता और अुसके द्वारा असली कार्यकर्ताओंको सहायता देनेकी

वृत्ति अधिक अुदात्त मालूम हुअी। अेक तरफ कांग्रेसके कार्यकर्ता थे जो बापूके असहयोग-कार्यक्रमको सीधा पूरा कर रहे थे और दूसरी ओर अेक अैसा व्यक्ति था जिसका बापूके कामसे अप्रत्यक्ष ही सम्बन्ध था। फिर भी अुन्होंने चन्द वाक्योंमें अपनी अुत्कट अिन्साफ़पसन्दीका परिचय दे दिया और काम करनेवाली अेक विनीत मंडलीको भारी मदद पहुंचा दी।

२९

सन् १९२४ की बात होगी। बिजौलियाकी शानदार जीतके बाद वैसा ही गौरवशाली समझौता हो चुका था। अब हम वहाकी जनतामें रचनात्मक कार्य करनेमें लग गये थे। बापूके भेजे हुअे जेठालाल भाअी स्वावलम्बी खादीका प्रचार और संगठन कर रहे थे। राजस्थान-सेवा-संघने शिक्षा-प्रचार, समाज-सुधार, नशा-निषेध, अस्पृश्यता-निवारण आदि काम हाथमें ले लिये थे। स्त्रियोंमें अंजनादेवी काम कर रही थी। संघके मंत्रीकी हैसियतसे मैं अिन सब कामोंकी देखभाल कर रहा था। बिजौलियाके पहाड़ी अिलाके और जागीरदारके सुरक्षित जंगलोंके कारण सूअर और हिरण आदि वन्य पशुओंका बड़ा अुत्पात था। वे आसपासकी खेतीको बहुत हानि पहुंचाते थे। किसान अुनके मारे तंग थे। बेचारे रातों जाग-जागकर भी अपनी फसलोंकी पूरी रक्षा नहीं कर पाते थे। किसानोंने अुन्हें मारनेके बारेमें मुझसे सलाह मांगी। मैं अुस समय तक अहिंसाका पूरी तरह कायल तो नहीं हुआ था, परन्तु किसानों द्वारा कोअी हिंसात्मक कार्य नहीं होने देना चाहता था। अिसलिअे मैंने बापूको लिखकर पूछा कि अिस तरहके जानवरोंको मारा जा सकता है या नहीं। जहां तक मुझे याद है, अुन्होंने लिखा था कि मानव-जीवनकी रक्षाके लिअे खेतीको नुकसान पहुंचानेवाले प्राणियोंको मारना अनिवार्य हिंसा है। अिस रायसे मैंने यह समझा कि बापू सचमुच व्यावहारिक आदर्शवादी हैं।

घटनास्थल पर गये। अुस समयका दृश्य देखने लायक था। अेक तरफ 'सत्याग्रह' के नाम पर भारतके अेकमात्र नेता पर गालियोंकी बौछार हो रही थी और दूसरी ओर गांधीजी हंसते चेहरेसे अुन लोगोंको धीरज और प्रेमपूर्वक समझा रहे थे, अुन्हें तात्कालिक राहत देनेको तैयार थे और अधिवेशनके बाद निष्पक्ष न्यायका आश्वासन दिला रहे थे। बापूकी क्षमाशीलता और स्थितप्रज्ञताका मैंने पहली बार अनुभव किया।

३१

अुन दिनों देशी राज्योंकी जनताका देशव्यापी आन्दोलन बड़ा क्षीण-सा था। केवल तीन दल काम कर रहे थे : राजस्थानमें हमारा राजस्थान-सेवा-संघ, काठियावाड़में 'सौराष्ट्र' परिवार और महाराष्ट्रमें भारत सेवक समितिके कार्यकर्ता। पहला दल देहाती जनतामें प्रत्यक्ष संघर्षका संचालन कर रहा था, मगर रियासतोंमें ब्रिटिश सरकारके हस्तक्षेपका विरोधी था। 'सौराष्ट्र' की आवाज थी तो जोरदार, परन्तु वह शहरों तक सीमित थी और ब्रिटिश हस्तक्षेप पर अुसे आपत्ति नहीं थी। महाराष्ट्रीय मंडलीका सारा दारमदार ब्रिटिश हस्तक्षेप पर था। अिन्हीं तीनों विविध तत्त्वोंने मिलकर देशीराज्य प्रजा परिषदके नामसे कानपुर कांग्रेसके समय अेक सम्मेलन किया। सम्मेलनमें कोअी दम नहीं था। न अुसका कोअी संगठन था और न कोअी स्पष्ट नीति और कार्यक्रम ही था।

अिस सम्मेलनके कुछ मास पूर्व नीमूचाणा हत्याकांड हो चुका था। अलवर राज्यमें हुअी अिस घटनाको देशी राज्योंका जलियांवाला कहा जाता है। बापूका अुस समय देशी राज्योंके बारेमें तटस्थ-सा या अेक खास प्रकारका रुख था। फिर भी अुन्होंने रियासती चाकरशाही और विदेशी नौकरशाहीके अिस दोहरे स्वेच्छाचारको 'Dyersm Double Distilled' कह कर निन्दा की और अिस शीर्षकसे 'यंग अिंडिया' में अेक टिप्पणी लिखी, जिसे पढ़कर हम नवयुवकोंके सन्तप्त हृदयोंको सन्तोष मिला। अुसका अनुवाद यह है

"अलवरके विषयमें मेरे पास अितना ब्यौरा नहीं है कि कुछ लिख सकूं। मेरी शान या लेख पर जिआन साहबकी तरह अलवर महाराज भी तिरस्कारके साथ हंस सकते हैं। अब तक जो बातें प्रकाशित हुअी हैं, वे यदि सच हैं तो अिसे दोहरी डायरशाही ही समझना चाहिये। परन्तु मैं जानता हूं कि फिलहाल मेरे पास अिसकी कोअी दवा नहीं है। अिन भीषण आरोपोंके सम्बन्धमें कमसे कम जांच करानेके निमित्त समाचारपत्रोंवाले जो प्रयोग कर रहे हैं अुसे मैं आदरकी दृष्टिसे देख रहा हूं।"

लोकमतने जिस सर्वथा वाजिब मांगको बापूने अिस टिप्पणी द्वारा सहारा ही नहीं दिया, अत्याचारियोंको चेतावनी भी दी कि बापू चुप हैं तो भी निष्क्रिय नहीं हैं और अुनकी सहानुभूति पीड़ितोंके साथ है।

३२

परन्तु अिस टिप्पणीसे भी अधिक स्फूर्तिदायक वह सन्देश था, जो कानपुरकी देशीराज्य प्रजा परिषदके लिअे बापूने स्वय अपने हाथसे हिन्दीमें लिखकर दिया। सन्देश यह था

"प्रत्येक मनुष्य अपना बन्धन काट सकता है। यदि हम अिस सामान्य नियमको समझ लें और अुसका पालन करें तो सब दुखकी जड काट सकते है। कोअी जालिम मजलूमकी सहायके बगैर जुल्म नही कर सका है। अितना पाठ सीख ले तो कैसा अच्छा होगा?"

बापूकी स्वावलम्बन और बुराअीके साथ असहयोगकी अिस सीखने हमें अुस निराशाके वातावरणमें भी बडा बल दिया। जो लोग ब्रिटिश हस्तक्षेपकी परावलम्बी नीति पर दारमदार रखते थे, अुन्हे भी अिस अुपदेशने विचार करनेकी काफी सामग्री दी।

३३

अुस दिन बापूका मौन था, फिर भी स्व० मणिलालजी कोठारी और मैं जब अुनके पास पहुंचे तो अुन्होंने परिषदके लिअे नीमूचाणा सम्बन्धी प्रस्तावका मसौदा भी खुद बनाकर दे दिया। प्रस्ताव अंग्रेजीमें था जिसका हिन्दी अनुवाद यह है

"देशी राज्योकी प्रजाकी यह परिषद अलवर राज्यान्तर्गत नीमूचाणाकी अमानुषिक दुर्घटनाओ पर खेद प्रगट करती है और अिससे भी अधिक खेद अिस बात पर प्रगट करती है कि राज्यने अपनी पुलिस और अफसरो द्वारा किये गये घोर अत्याचारों और अनियमितताओंके कारणो और विस्तारकी खुली और निष्पक्ष जाच करनेकी अनुमति न देनेका दुराग्रह किया है।

"यह परिषद अनेक शोकदग्ध कुटुम्बो, आहत व्यक्तियो और अुन लोगोंके प्रति, जो कानून और व्यवस्थाके नाम पर अपनी सम्पत्तिके अकारण नष्ट कर दिये जानेसे गृहहीन हो गये है, हार्दिक सहानुभूति प्रगट करती है और चाहती है कि वह नीमूचाणाके लोगोकी अिस सकटके समय कुछ कारगर सहायता करनेमें समर्थ हो।"

अिस मसौदेसे जहा यह स्पष्ट था कि बापू सदा निष्पक्ष जांचके बाद ही कोअी निर्णय करनेके पक्षमें थे, वहा वे पीड़ितोके प्रति कोरी हमदर्दी जाहिर करके या [illegible] झूठी आशाअें दिलाकर ही सन्तोष नही कर लेना चाहते थे, [illegible] निवारणके लिअे कुछ न कुछ प्रत्यक्ष कार्रवाअी करनेकी भी अपेक्षा [illegible] रखते थे। अन्याय और अत्याचार-पीड़ितोंके लिअे अुनके दिलमें दर्द [illegible] और सक्रिय रहता था। यह मेरी अुनके पासको [illegible] थी।

महान सुधारक बापूने मानव-जीवनके किसी भी महत्त्वपूर्ण क्षेत्रको अछूता नहीं छोडा था। अिसलिअे विवाह जैसे बडे धार्मिक और सामाजिक संस्कारको परिष्कृत करनेकी ओर अुनका ध्यान जाना स्वाभाविक था। अुन्होंने अेक सात्त्विक, सरल, संक्षिप्त और मितव्ययी विवाह-पद्धति बना ली। जहां तक मैं जानता हूं अुसे कार्यान्वित करनेका प्रथम अवसर २६ फरवरी १९२६ को अुपस्थित हुआ। अुस दिन जमनालालजीकी बडी लडकी कमलाका विवाह था। जमनालालजी स्वयं अुत्कट समाज-सुधारक थे। अुनके सुधारवाद पर पश्चिमकी निरी आधुनिकताके बजाय भारतीय आध्यात्मिकताकी छाप थी। अुन्होंने बापूकी अुपस्थिति और पथप्रदर्शनमें अपनी लडकीकी शादी करानी चाही। अुनके थोडे-से शिष्ट मित्रोंमें मैं और अंजनादेवी भी निमन्त्रित थे। जहां तक मुझे खयाल है बापूने काकासाहब कालेलकरसे कहकर अपनी विवाह-पद्धतिको पहली बार लेखबद्ध कराया और आश्रमके संगीत-शिक्षक पं० नारायण मोरेश्वर खरेके हाथों विवाह-विधि सम्पन्न हुअी। विधिमें केवल सप्तपदीका संस्कार हुआ और सारा काम कोअी घंटे भरके भीतर निपट गया। वर-वधूने अेक दूसरेके गलेमें माला पहनाअी और दोनोंने सब बुजुर्गोंके पैर छुअे। अिसके सिवा और कोअी रस्म नहीं हुअी। बापूके आशीर्वाद प्राप्त करना अैसे मौकों पर जरा महंगा सौदा होता था। दोनों जीवन-साथियोंको पीठमें जोरकी थप्प खानी पडती थी।

बादमें तो विवाहोंके लिअे बापू अपने आशीर्वादकी कअी शर्तें लगाने लगे थे। अन्तर्जातीय, अन्तर्प्रान्तीय, या विधवा-विवाह हो या हरिजन कन्या या वरसे विवाह, अिनमें से कोअी अेक बात होनी आवश्यक थी। अेक सगाअीको अुन्होंने अुभय पक्षसे यह प्रतिज्ञा करा कर अपनी शुभकामनायें दी थीं कि वे ५ वर्ष तक या स्वराज्य मिलने तक (जो भी अवधि कम हो) विवाह नहीं करेंगे और तब तक शुद्ध प्रेम-सम्बन्ध रखेंगे। अपने अेक आत्मीय पर अुनके पवित्र स्नेहकी परीक्षा लेनेके लिअे कअी साल तक कुमारे रहनेका ही नहीं, बल्कि अुसकी प्रियतमा लडकीसे सर्वथा सम्पर्क न रखनेका बन्धन लगानेकी अुनकी बात तो मशहूर ही है। अेक दूसरे अजीजसे बापूने विवाहके बाद भी कुछ वर्ष तक संयम रखनेकी शर्त कराअी थी। अवश्य ही ये मर्यादायें खुशीसे स्वीकार की गअी थीं और अुनके पालनमें सम्बन्धित व्यक्तियोंको अपने प्रेरकके महान संयमके अुदाहरणसे काफी बल मिलता था।

[illegible] मामलेमें जहां तक मुझे मालूम है बापूका विवाहसे ही वास्ता था, अुनकी रस्मोंमें अुनका कोअी हाथ नहीं था। अिसके बाद दो विवाह और हुअे, जिनके सम्बन्ध तय होनेमें भी बापूने दिलचस्पी ली थी। अुन दिनों मैं साबरमती आश्रममें ही था। अेक तो था स्व० मगनलालभाअी गांधीकी छोटी लडकी रुक्मिणी बहन और जमनालालजीके अेक दूरके रिश्तेदार बनारसीलाल बजाजका और दूसरा

था अुदयपुरके श्री शकरलाल अग्रवाल और श्री जयसुखलाल गाधीकी पुत्री अुमिया बहनका। ये दोनो सम्बन्ध जमनालालजीने कराये थे। आगे चलकर तो अुनके हाथो अितने सम्बन्ध हुअे कि अुनके अिष्ट मित्रोमें अुनका अुपनाम 'शादीलालजी' पड गया था।

३५

गाधी परिवारकी अिन दो कन्याओका सबध जिस प्रकार हुआ, अुससे मुझे बापूका तरीका और बातोकी तरह पूर्व और पश्चिमकी पद्धतियोके समन्वयका मालूम हुआ। वह न तो रूढिवादियोकी तरह माता-पिता द्वारा वरके सिर पर चाहे जैसी कन्या और कन्याके मत्थे चाहे जैसा वर थोप देनेका था और न पश्चिमकी भाति अुच्छृङ्खल प्रणय (Courtship) द्वारा अुत्तेजित विकारोके वेगमें किये जानेवाले निर्णयका था। अुनकी पद्धतिके अनुसार अेक पक्षके माता-पिता या अभिभावक दूसरे पक्षके घराने, अुसके सस्कार और स्वभाव आदिकी जाच करे और अुनके आधार पर लडके-लडकीको अुचित सलाह दे दें। मगर अतिम निर्णय अुन्ही पर छोड दें। मुझे यह तरीका जच गया, क्योकि अपरिपक्व बुद्धिके युवक-युवतियोको अिसमें बुजुर्गोके अवकाश, अनुभव और ज्ञानका लाभ मिल जाता है और आखिरी फैसला करनेकी जिम्मेदारी वे अुठाते है जिनके लिअे जीवनभरका प्रश्न है।

३६

कमला बजाजका विवाह गुजरात विद्यापीठके स्नातक रामेश्वर नेवटियासे हुआ। अुस अवसर पर बापूने वर-वधूको जिन शब्दोमें आशीर्वाद दिया, अुनका सार अुस समय मैंने हमारे हिन्दी साप्ताहिक 'तरुण राजस्थान' में अिस प्रकार दिया था :

"हिन्दू जातिमें जो विवाह होता है अुसमें बहुत आडबर होता है। राग-रग, नाच-तमाशा, खाना-पीना, और अनेक प्रकारका प्रलोभन होता है। विवाहका धार्मिक अश, जिसके कारण विवाह करना योग्य समझा गया है, भुला दिया जाता है। पैसा अितना खर्च किया जाता है कि गरीबोंके लिअे तो विवाह करना [illegible] हो जाता है। कभी लोग अैसे कर्जदार हो जाते है कि [illegible]। जिन विवाहमें अितना आडबर अितना अपव्यय और [illegible] हो, अुससे वर और कन्या [illegible] जीवन [illegible] है। [illegible] (सत्याग्रह) आश्रमका आदर्श [illegible] पालन करना है। परन्तु [illegible] करनेवाले किसी पर बलात्कार नहीं करते। अैसे [illegible] कर सकते, अुनके लिअे विवाह [illegible]। [illegible] प्रकार विवाह करनेवालोंको आशीर्वाद [illegible]।

हिन्दुस्तानमें और जहा कही भी विवाहमें धार्मिक विधि मानी जाती है व्हा अुसमे सयमका अश होता है। स्मृतियोमें लिखा है कि जो दपती नियमसे रहते हैं वे भी ब्रह्मचारी हैं। जो लोग अपने विकारोका सर्वथा नाश नहीं कर सकते, वे मर्यादामें रह कर विकारो पर अकुश रखते हुअे केवल अुतना व्यवहार कर सकते हैं जितना अनिवार्य हो।

"मारवाडी समाजमे धन बहुत है और खर्च भी अधिक होता है। अिससे गरीबोको विवाह करना अशक्य-सा हो जाता है। फुलवाडी, भोजन, रोशनी और नाच होता है। अिसका असर सारे मारवाडी समाज पर और हिन्दूजाति पर ही नहीं, मुसलमान अित्यादि जातियो पर भी पडता है। अिससे आप सोच सकते हैं कि धनवालो पर कितनी जिम्मेदारी है। मारवाडी लोगोमें धन और दुराचार होते हुअे भी धर्मके लिअे प्रेम है। अिसलिअे मैंने और जमनालालजीने सोचा कि विवाह सादगीसे किया जाय। अत आप देखेंगे कि अिस विवाहमें आडंबर नही होगा, नाचगान नही होगा, और केवल धार्मिक विधिया ही की जायगी। आप अिसमें साक्षी हो, सम्मत हो और अनुकरण करनेकी प्रतिज्ञा करे। हिन्दुस्तानमें थोडेसे धनवान और बाकी कगाल ही कगाल है। यहा जितने लोग भूखके मारे मरते, कष्ट पाते और जडवत् रहते है, अुतने ससारमें किसी देशमें नही है। यह बात हमारे राज्यकर्ता अितिहासकारो तकको कही हुअी है। अैसे गरीब देशके करोडपतियोको अैसा काम करनेका अधिकार नही है जिससे गरीबोंके पेटमें दर्द हो। धनिक लोग धन भी अिन्ही गरीबोंको और गरीब बनाकर कमाते है। अैसी हालतमें अितना ही धन खर्च करना चाहिये जितना धर्मके लिअे अनिवार्य हो और बचा हुआ धन परोपकारमें खर्च करना चाहिये। अिस दृष्टिसे यह विवाह अनुकरणीय है। यह सामान्य सुधार नहीं है, अिसकी जड खूब भीतर जाती है। जमनालालजीके पास धन होते हुअे भी अुसका अुपयोग अिसमें नही किया गया। अिसका परिणाम अच्छा ही होगा, क्योंकि गीताजीमें भी लिखा है कि श्रेष्ठ लोग जो करते हैं अुसकी देखादेख दूसरे लोग भी करते है। रामेश्वर और कमला दोनो समझ सकते हैं। अुन्हें समझना चाहिये कि विवाह स्वच्छदताके लिअे, विकारका गुलाम बननेके लिअे नही है। गृहस्थाश्रम सूचे भाव बढानेके लिअे है। विकारवश केवल सन्तानकी अिच्छा होने पर ही हो सकते है। रामेश्वरको मैं यह बात बता देना चाहता हू कि स्त्री पुरुषकी गुलाम नहीं, अर्धांगिनी है, सहधर्मिणी है, और मित्र है। यह दम्पती शिव-पार्वती, सावित्री-सत्यवान या सीता-रामके समान आदर्श हो। हिन्दू धर्मने स्त्रियोको बहुत अुच्च स्थान दिया है। मैं अिन दोनोंको आशीर्वाद देता हू कि ये दोनो दीर्घायु हो, अपने बडोको सुशोभित करे और धर्मकी रक्षा तथा देशकी सेवा करे।"

श्री शंकरलाल अग्रवाल और अमिया गांधीका विवाह ४ दिसम्बर, १९२९ को हुआ। यह विवाह केवल अन्तर्प्रान्तीय ही नही, बल्कि अुपजातीय भी था। अग्रवाल और मोढोंमे विवाह-सम्बन्ध नही होते। किन्तु यही दो विशेषतायें अिस विवाहमे नही थी। श्री शंकरलालकी अवस्था २५ के आसपास और अमिया बहनकी १८ से अूपर थी। दोनोकी परस्पर सम्मतिसे विवाह-संबंध हुआ था। सिर्फ ४५ मिनटमें सारी विवाह-विधि सम्पन्न हुअी। वर-वधू तो खादी पहनते ही थे, अुदयपुर-मेवाडके बराती भी खादी पहनकर आये थे। बरातियोको भोजन वही खिलाया गया, जो आश्रममे नित्य आश्रमवासी करते हैं। विवाह-विधिके समयके अलावा कही किसी तरह यह नही मालूम होता था कि कोअी अुत्सव हो रहा है। बापूजी चाहते थे कि आश्रमवासी अैसे आदर्शको पहुच जाय कि अेक ओर विवाह हो रहा हो और दूसरी ओर किसीकी शवयात्रा होती हो, तो दोनो काम हम शान्ति और स्थिरताके साथ अपने मनको डावाडोल न होने देते हुअे कर सकें। जनन, मरण और परण (विवाह) ये तीनो समाज-जीवनमें अैसा स्वाभाविक स्थान ले लें कि हमें अिनमें कोअी असाधारणता न मालूम हो। अिसलिअे तमाम विवाह-व्यवस्थामे कही भी असाधारणता या दैनिक जीवनसे भिन्नता न दिखाअी देती थी। विवाहके दिन वर-कन्याने अुपवास किया, और गो-पूजा, सामाजिक सफाअी जैसे कुअेंके आसपास और गोशालामें, तुलसी-पूजा, कताअी-यज्ञ और गीता-अध्ययन, अितने सामाजिक और धार्मिक काम किये। फिर शामको मधुपर्क, कन्यादान और सप्तपदीकी विधियोके बाद विवाह कार्य समाप्त हुआ। अुस दिन बापूने सुबह-शामकी प्रार्थनामें वर-वधूको आशीर्वाद देते हुअे जो पवित्र वचन सुनाये, अुनका अुपरोक्त वर्णनके साथ अेक मासिकमें यह साराश दिया गया था

"किसीके मनमें यह प्रश्न अुठेगा कि आश्रम और विवाह, अिन दो बातोका मेल कैसे बैठ सकता है? अिसका अुत्तर यह है कि अिसमें परस्पर कुछ भी विरोध नही है। जो ब्रह्मचर्यका पालन कर सकें वे ब्रह्मचारी रहे और जो न कर सकें वे विवाह कर लें, यह अुचित है। कोअी यह न समझें कि ब्रह्मचारी सभी अच्छे होते हैं और विवाहित सभी घटिया होते हैं। हो सकता है कि गृहस्थ गुणवान हो और ब्रह्मचारी दम्भी। यही कारण है कि विवाहको अुपाधि समझते हुअे भी हम अिष्ट मानते हैं।

"अिस विवाहमें हम अेक कदम आगे बढे हैं। मणिलाल (बापूके द्वितीय पुत्र)के विवाहमें हमने जातिकी बाड तोडी, अिस विवाहमें प्रान्तकी सीमाको लाघा। गुजरातसे मेवाड गये। यह शुभ चिह्न है। परन्तु अिससे हमारी जिम्मेवारी भी बढ गअी है। हम जो विवाह यहा करते हैं वे धार्मिक विधि और धार्मिक दृष्टिसे करते हैं। अुनमें मर्यादा-पालनकी चेष्टा रहती है। आजके अिस आपत्कालमें देशकी स्थितिको देखकर यदि अिन्द्रिय-निग्रह कर सकें तो बहुत अच्छी बात है, किन्तु यह बात जोर-जत्रसे नही हो सकती। अिसलिअे यदि लडका-लडकी चाहे तो अुनका विवाह कर देना

चाहिये और अुनके लिअे जोडी ढूंढकर अपने आशीर्वादके साथ अुनका विवाह कर देना आश्रमका कर्तव्य है। अब तक अिसीके अनुसार यहां व्यवहार होता रहा है और अुसका फल बुरा नहीं हुआ। हम बिना किसी आडंबरके, थोडे समयमें, पवित्र हृदयके द्वारा विवाह-विधि सम्पन्न करते हैं, यह हर्षकी बात है।

"अिस विवाहके आरंभमें क्षोभ और व्यग्रता अुत्पन्न हुअी थी, पर धीरे-धीरे वह शान्त हो गअी। अिस सम्बन्धमें जितनी सावधानी रखी जा सकती है अुतनी रखी गयी है। वर-वधूकी सम्मति लेकर ही यह विवाह किया गया है। अिसमें मैंने व्यक्तिगत सुखका विचार नहीं किया है। अिसी बातको अपनी दृष्टिके सामने रखा है कि देशका हित किस बातमें है। अिस विवाहके द्वारा अेक प्रान्त दूसरे प्रान्तके निकट आता है। यह पहला प्रयोग है।"

श्री शंकरलालको संबोधन करके कहा, "अिसमें जितनी जिम्मेवारी अुमिया पर है अिनसे सौ-गुनी ज्यादा आप पर है। अुमियाकी हिम्मतको देखकर मुझे खुशी हुअी है। अुसकी अिच्छाओंको जानते रहियेगा। हिन्दू समाजमें स्त्रीका स्त्रीत्व कम हो गया है। वह अबला हो गअी है। अिसलिअे आप अुसे स्वतंत्रता दीजियेगा। आप तो स्काअुट हैं। स्काअुटका धर्म है सबकी रक्षा करना। अुमिया यह न अनुभव करे कि मुझे दुख है। वह यही समझती रहे कि यहां तो सब मुझ पर प्रेमामृत बरसाते हैं। मैं अुसे हिन्दी अधिक न पढा सका — सो अुसे निबाह लीजियेगा। यदि सब अपनी-अपनी जिम्मेदारीको समझकर काम करें, तो मारवाडी और गुजरातीमें भेद नहीं रह सकता। धर्म और मर्यादाको कभी न भूलियेगा। दोनोंसे कहता हूं कि मर्यादित रहकर भोगोंको भोगना और अपने देशको कभी न भूलना।

"अुमिया, तुमसे क्या कहूं? अितना समय नहीं कि तुमसे अकेलेमें बातचीत करूं। तुमने बहादुरी दिखाअी है। तुम अपने कुल, प्रान्त और आश्रमकी कीर्ति बढ़ाना। तुम्हारे हाथसे कोअी बुरा काम न हो। मैंने तुम दोनोंको छोटासा हार पहनाया है। पर मेरी दृष्टिमें यह बड़ा है। गीताजीका रोज पाठ करना। जब जब मनमें निराशा आने लगे तब तब भजनावलिमें से भजन गाना। फुरसतके समय तकली कातना और आनंदसे रहना। ीश्वर तुम लोगोंको सच्चे सेवक-सेविका बनावे, दीर्घायु करे। तुम दोनों अिस तरह जीवन बिताना कि मुझे पश्चात्ताप न हो।"

३८

सन् १९२८ की बात होगी। अुस जमानेमें राजस्थानमें तीन दल काम कर रहे थे। पं० अर्जुनलालजी सेठीके नेतृत्वमें कांग्रेस, सेठ जमनालालजीके अधीन गांधी-वादी कार्यकर्ता और हमारा राजस्थान-सेवा-संघ। तीनोंमें सहयोग नहीं था। भीतर ही भीतर विरोधका भाव भी था। जमनालालजी चाहते थे कि मैं अुनके साथ काम करूं। परन्तु मेरे विचार अुस वक्त तक पूरी तरह नहीं बदले थे। फिर भी गांधीजीके प्रति आकर्षण तो बढ़ ही रहा था। अितनेमें ही पथिकजी मेवाड़के लम्बे

कारावाससे छूट कर आये तो गांधी विचारधारासे काफी प्रभावित दिखाअी दिये। मैंने अिसे अनुकूल अवसर समझ कर अुन्हे बापूके पास जाकर चर्चा करनेका सुझाव दिया। तदनुसार पथिकजी साबरमती गये। जमनालालजी भी पहुचे। परन्तु नेतृत्वकी चट्टानसे टकराकर सहयोगकी नाव टूट गअी। बापू चाहते थे कि राजस्थानके मामलोंमें जमनालालजी अुनके मुख्य प्रतिनिधि हों और शेष कार्यकर्ता सेठजीके साथी बनकर रहे। पथिकजी गाधीजीसे सीधा सम्बन्ध रखना चाहते थे और जमनालालजीको अपना नेता माननेको तैयार नही थे। बापूको अेक म्यानमें दो तलवारोकी कार्यपद्धति व्यावहारिक दिखाअी नही देती थी। वे अपना नुमाअिंदा असी व्यक्तिको बना सकते थे जिसने अुनकी विचारधारा और कार्य-पद्धतिको अच्छी तरह समझ कर अपना लिया हो। दूसरा आदमी भले ही अधिक पुराना या सक्षम हो तो भी अुस पर अुनका अितना विश्वास न होना स्वाभाविक था। मुझे अिस निर्णयके परिणाम पर अुस समय दुःख तो हुआ, मगर अिससे बापूकी व्यवहार-कुशलताका परिचय जरूर हुआ।

३९

अिस घटनाके अेक साल बाद मेरा सपूर्ण विचार-परिवर्तन हुआ। हिंसाकी नीतिकी निष्फलता और अनिष्टताका कायल तो मैं आठ वर्ष पहले ही हो चुका था। अिस अर्सेके अनुभवो और पिछले दो बरसके झगडोने 'शठ प्रति शाठ्यम्' के परिणाम अितने नग्न और भयकर रूपमें दिखाये कि १९२१ में आत्मा गाधीजीकी ओर प्रबल वेगसे आकृष्ट हुआ। अुस समय मैं ब्यावरसे 'यग राजस्थान' नामक अंग्रेजी साप्ताहिक निकाल रहा था। सेठ जमनालालजीके वसीलेसे मैं अगस्त या सितबरमें साबरमतीके लिअे रवाना हो गया।

रास्ते भर मेरे मनमें बडी अुथल-पुथल रही। बापूसे मैं कअी बार मिल चुका था। मगर अिस बारका मिलन बडा गंभीर होने वाला था। मुझे अुनकी विचार-धारा स्वीकार करनी थी। अुनके मार्गको अपना जीवन-पथ बनानेकी मनमें [illegible] थी। क्या वे मुझे स्वीकार करेंगे? क्या मैं अुनके विचारो और कार्यक्रमको हृदय और बुद्धिसे स्वीकार कर सकूंगा? क्या अुस पर मन-कर्म-वचनसे चल सकूंगा? अुनसे खुलकर बात कर सकूंगा? अुनके सामने अपनेको नग्न रूपमें [illegible] सकूंगा? अुनके सम्मुख अपनी सारी शका-अशका और सारी समस्याअें निःसकोच पेश कर सकूंगा? सबसे बडा पसोपेश यह था कि अुन्होंने अगर [illegible] तो क्या अपना नया किन्तु प्रबल मोह त्याग देनेका साहस होगा? [illegible] या अुनकी पद्धतिमें तारापलट करनेकी आशा [illegible] क्या अपने तेज स्वभावको [illegible] सकूंगा? [illegible] मनमें अुठ रहे थे। दूसरी ओर [illegible] सारासे और सवारो [illegible]

समागम होगा और साथ रहनेका अवसर मिलेगा। अिससे हृदयमें अुत्साह और आनंद लहरें मार रहे थे।

मैं दोपहरको अहमदाबादमें अेक परिचितके यहां खाने और आराम करके तीन बजेके करीब तांगेसे साबरमती पहुंचा। आश्रम १९२० की कांग्रेसके समय देख चुका था। मगर वह अवलोकन था, यह तीर्थयात्रा थी। अिस बार दूरसे ही अुसके मकानों, वृक्षों और खेतोंका आकर्षण प्रतीत हो रहा था। हर कदम पर प्रतीक्षा और अुत्सुकता तीव्र होती जा रही थी। अन्तमें सड़क पर अिमलीके पेड़के नीचे तांगा ठहरा और मैं पूछता हुआ दफ्तरमें पहुंचा। अपने आनेकी खबर बापूको पहले दे चुका था। मालूम होता है अुन्होंने मंत्रीको पहले ही सूचना दे रखी थी, अिसलिअे सामान वहीं छोडकर मुझे तुरत 'हृदय-कुंज' में बापूके सामने खडा कर दिया गया।

साबरमतीके पश्चिमी तट पर स्व० मगनलालजी गांधीकी कुटियाका वह कमरा था, जिसमें कभी खिडकियां और दरवाजे थे जो सब खुले थे। बापू अेक गादी पर मसनदके सहारे बैठे थे। अेक चौकी अुनके सामने थी। कमरेमें बैठनेको दीवारोंसे लगे हुअे खादीके पातिये बिछे हुअे थे। बीचका आंगन खाली था। यह व्यवस्था बापूकी प्रिय किफायतसारीका नमूना पेश कर रही थी। मुझे देखते ही मुस्कराकर पूछा : "आ गये? मगर क्या गाडी लेट थी? मैंने तो तुम्हारे लिअे खाना रखनेको भी कह रखा है।" अुस मुस्कानमें कितनी हार्दिकता, कितनी मोहकता थी! अुस प्रश्नमें कितनी आत्मीयता और भिन्न भिन्न दिशाओंसे आनेवाली रेलगाडियोंके समयकी कितनी जानकारी थी! मैंने विलम्बका कारण बताया। बापूका दूसरा सवाल था, "अखबारके संपादनका क्या प्रबंध किया? पीछेसे कोअी साथी संभालनेवाला है?" मैंने कहा, "जी, है।" "फिर भी तुम्हें यहांसे लिखकर भेजते रहना चाहिये। मैं तो बाहर होता हूं तो बराबर लिखकर भेजता रहता हूं।" मैंने कहा, "बहुत अच्छा।" बात यहीं खतम हुअी। मेरे ठहरनेकी जगहका निश्चय करके मुझे आश्रम देख लेनेकी आज्ञा हुअी।

४०

लगभग अेक मास मैं महात्माजीके निकट सान्निध्यमें रहा। अुनके आदेशानुसार मेरा यह कार्यक्रम था कि दिनभर अुनके पास बैठा तकली चलाया करता, अुनकी गतिविधियां देखा करता, अुनके संभाषण सुना करता और अवकाशमें अुनसे अपनी शंकाओंका समाधान किया करता। अुन्होंने दूसरे ही दिनकी बातचीतमें मुझे पूरी तरह निर्भय करके मुझसे मेरे जीवन और कार्यका संक्षिप्त अितिहास सुन लिया था और मैंने भी अपनेको खुली किताबकी तरह अुनके सामने रख दिया था। अुन्होंने मुझे स्पष्टतासे संकेत कर दिया था कि कोअी अुनसे अेकान्तमें बात करनेकी अिच्छा प्रगट करे तब मैं अुठकर चला आया करूं। अिस चेतावनीने मुझे अपनी नाजुक तबीयत की कअी परेशानियोंसे बचा लिया। अेक मासके अिस सत्संगने मुझे विचारोंमें पूरी तरह गांधीवादी बना दिया।

४१

अिस प्रवासमे मुझे आश्रममें दाद हो गयी। बापूको पता चला तो अुन्होंने अुसे देखा और, जैसा कि अुन्हे शौक था, मुझे अपने अिलाजमें ले लिया। वे रोज जहा जहा दाद थी खुद अपने हाथसे हल्का तेजाब लगाते। मुझे शुरूमें सकोच तो हुआ, परन्तु अितने बडे आदमीके निकट सम्पर्कके गर्व और आनन्दकी अनुभूतिसे दूसरे ही दिन सारा सकोच काफूर हो गया। बापूके रोगियोके प्रति सेवाभावका यह पहला अनुभव बडा सुखद था। अुनकी चिकित्साके दूसरे अग ये थे कि मुझे अेक दिनका अुपवास करना पडा, रोज दो पुडिया शोधे हुअे गधककी खानी पडती और अेनिमा लेना पडता। भोजन तो आश्रमका शक्कर और मसालेसे रहित और बिना तला या छोका हुआ था ही। वह मुझे बहुत पसद आया और बादमें तो अुसकी वैज्ञानिकताके कारण कुछ परिवर्तनके साथ वह मेरा साधारण आहार ही बन गया।

अिसी प्रवासमें मुझे पहली बार पता लगा कि अुन दिनो बापूके चिकित्सा-शस्त्रागारमें अुपवास, अेनिमा, स्पन्ज, गधक और कुनेन — ये पाच ही अमोघ अस्त्र थे। अिन्ही पाच दवाअियोसे वे सौ रोगोको अच्छा कर लेते थे।

४२

अिस अुपचारके सिलसिलेमें अेक दिन बापूने मुझे अगूर खानेको बताये और बासे माग लेनेको भेजा। मै दो चार कदम ही गया हूगा कि वापस बुलाकर बोले, "मगर देखो, कडवे अनुभवके लिअे तैयार होकर जाना। जो हो सो लौटकर मुझे सुनाना।" मै बाके कमरेमें, जो साबरमतीके किनारे पर था, पहुचा और अगूरोकी माग की। बाके चेहरे पर त्यौरी चढ गअी और प्यारेलालजीको पुकार कहने लगी, 'देखो तो प्यारेलाल, यह कौन आदमी है? बापूके अगूर लेने चला आया है।' सचमुच मुझे बापू पहले ही चेतावनी न दे चुके होते तो मेरा नाजुक स्वभाव अिस ठेसको शायद ही सहन कर सका होता। प्यारेलालजीके आनेसे पहले ही मैंने कहा, 'बा, नया ही आया हू। बीमार पड गया हू। और बापूके भेजनेसे अनिच्छापूर्वक अगूर ले रहा हू।' बाका हृदय तुरन्त पिघल गया, अुनका चेहरा बदल गया और बोली, 'कोअी बात नही। अगूर तो मेरे पास बहुत थे। बापूने और तो सब बीमारोंको बाट दिये। ये थोडेसे मैंने अुनके लिअे रस लिअे थे। आपकी जरूरत ज्यादा होगी, अिसी-लिअे भेजा होगा। ले जाअिये।' जब मुझे यह पता लगा कि मै बापूके हिस्सेका लिये जा रहा हू तो अपने पर बड़ी ग्लानि हुअी और लेनेमें हिचकिचाने लगा। परन्तु बाने आश्वासन भरी मुद्रा और वाणीसे मुझे अगूर दे ही दिये और कहासे आये हैं, क्या करते थे, घरमें कौन कौन है, आदि पूछताछ करके मुझे बिदा किया। मै प्रसन्न था।

बापू शायद मेरे गमगीन चेहरेकी बाट देख रहे थे। जब मैंने यह सब हाल सुनाया तो कहने लगे, "बस, बाकी यही बात है। जहां मुझे मेरी कोअी चीज छिनती दिखती है तो अुखड पडती हूं। परन्तु हृदय अथाह समुद्रकी तरह हमदर्दीसे भरा है। जहां दूसरेके कष्टका पता चला कि वह मोम हो जाता है। फिर तो मेरा मोह भी भल जाती है।" मेरा मन बाके पातिव्रतधर्म और स्नेहपूर्ण हृदयके अिस वर्णनके अेक अेक अक्षरसे सहमत था। कालान्तरमें यह अनुभव कअी बार ताजा और पुष्ट हुआ।

४३

अेक दिन सरदार वल्लभभाअी और बापू बैठे थे। बापूके सामनेकी चौकी पर अुनका लिखने-पढनेका सामान रखा रहता था। अुनकी पेंसिल शायद दाअी ओर रहती होगी। सरदारसे बात करते करते अुन्होंने पेंसिलके स्थान पर हाथ बढाया तो वह वहां नहीं थी। बाअी ओरको मिली। मैंने देखा कि बापूके मुखमंडल पर हलकी-सी क्षोभकी रेखा आ गअी थी। तुरत प्यारेलालजीको आवाज दी। वे सामने आकर खडे हुअे तो पूछा, 'मेरी पेंसिल कहां रख दी थी?' प्यारेलालजी प्रश्नके तर्ज और बापूकी मुख-मुद्रासे फौरन् ताड गये और निरुत्तर होकर छतकी ओर निहारने लगे। अुन्हें हतप्रभ देखकर सरदारने स्थिति सभाली और मुस्कराकर कहा, 'पेलो कवि छे' (ये तो कवि है)। बापू हंस दिये और सरदार तो खिलखिला ही पडे। मुझ पर यह असर हुआ कि बापू कमालके व्यवस्थित आदमी हैं और वे तथा सरदार दोनों ही कवियोंको अव्यवस्थित प्राणी मानते हैं। सरदारके जानेके बाद मैंने पूछा 'बापू, बात तो बहुत छोटी थी?' बापू तुरत गंभीर होकर कहने लगे, 'मनुष्यके जीवनमें व्यवस्थितता होना बहुत आवश्यक है। यदि सूर्य, चंद्र और पृथ्वी निसर्गके नियमोंका पालन न करें, तो क्षणभरमें सारा विश्व अस्तव्यस्त हो जाय। मेरे जैसे आदमीका अेक अेक क्षण कामसे भरा रहता है। मेरी चीजें जगह पर न मिलें तो मेरा कितना समय बर्बाद हो जाय, मुझे कितनी असुविधा हो, कार्यमें कितनी हानि हो सकती है? मेरे निकटके साथियोंको तो अिन सब बातोंका ध्यान रहना ही चाहिये। और तुम जानते हो अंग्रेजीमें गंदगीकी क्या व्याख्या है?' 'जी, नहीं,' मैंने अपना अज्ञान प्रकट किया। वे बोले, 'Anything out of place is dirt' (कोअी वस्तु अपने स्थान पर न हो तो वही कचरा है।) मलमूत्र ठीक ढंगसे खेतमें पहुंच जाय तो धरती सोना अुगलने लगती है और अिधर अुधर खुला पडा रहता है, तो वही अनेक रोग अुत्पन्न करता है। रद्दी कागज ठाठे या कागज बनाने और जलानेमें अुपयोगी है, मगर खादमें डालनेमें व्यर्थ जाता है। रेलवेका सिग्नलमैन जरा अव्यवस्थित हो जाय तो रेलगाडियां लड जायं और सैंकडों जानें चली जायं।' स्वच्छता और नियमितता पर यह नया प्रकाश मेरे पहलेसे ही व्यवस्था और सफाअीपसन्द स्वभावको खूब भाया और अुसे पक्का करनेमें सहायक हुआ।

४४

अेक दिन भोपाल राज्यमें काम करनेवाली अेक मिशनरी महिला आअी। शायद अमरीकी थी। बुढ़ियाको भारतमें सेवाकार्य करते कअी साल हो गये थे। अुसने देहाती जनताकी दरिद्रताको दूर करनेके सवाल पर चर्चा छेड़ी। चरखेकी आलोचना करके सिंचाअीके साधनोंको बढ़ाकर खेतीकी हालत सुधारनेका अुपाय सुझाया। मैं देख रहा था कि बापूके चेहरे पर अुतार चढ़ाव आ रहे हैं। पहले तो वे मुस्कराकर सुनते रहे, फिर गंभीर हुअे और अन्तमें अुनके माथे पर सल पड़ गये। वे बोले, 'बहन, मेरे दिलमें स्त्री-जातिकी अितनी अिज्जत है कि मैं कभी अुन्हें कड़वी बात नहीं कहता। विदेशियोंको तो पुरुष होने पर भी नहीं कहता। परन्तु आपको अितने दिन काम करते हो गये, फिर भी आपका अज्ञान अितना भारी है कि मुझे यह कहना पड़ेगा कि आपने समस्याको कुछ भी नहीं समझा। मुझे चरखेसे कोअी मोह नहीं है। परन्तु भारतके गांवोंकी वर्तमान स्थितिमें वहांकी बेकारी दूर करनेका अिसके सिवा कोअी और अुपाय नहीं है। यह सर्वत्र सुलभ है, पुराने संस्कारोंके कारण सरल है और घर पर रहकर काम करनेके लिअे सबसे अनुकूल साधन है। बेशक, अिससे आमदनी बहुत कम होती है, परन्तु देहातियोंकी औसत आमदनी अितनी थोड़ी है कि यह जरा-सी वृद्धि भी अुनके लिअे नेमत है। और चरखेको आबाल-वृद्ध सभी चला सकते हैं। अिसलिअे थोड़ी थोड़ी करके भी सबकी सम्मिलित सहायता काफी हो जाती है। स्त्रियां अपनी लाजको बचाती हुअी अिस पर काम कर सकती हैं। यदि कोअी मुझे दूसरा अुपाय अिससे अच्छा बता दे, जिसमें अिन गुणोंसे ज्यादा गुण हों, तो मैं सारे चरखे अिकट्ठे करके विदेशी कपड़ेकी तरह ही जला दूंगा और अेक भी आंसू नहीं बहाअूंगा।' वृद्धाका मुखमंडल पहले तो कुछ तमतमाया-सा दिखाअी दिया, परन्तु बापूने जब अपना लम्बा प्रवचन समाप्त किया तब पादरिन संतुष्ट हो गअी थी। दोनों हाथ जोड़कर वह अुठी, तो बापू भी अुठे और कमरेके दरवाजे तक पहुंचा कर लौट आये। मैंने बापूको दूसरोंके लिअे अुठते तो देखा था, मगर अितना शिष्टा-चार करते पहली ही बार देखा। मेरा अनुमान है कि बुढ़ियाको कड़वी घूंट पिलाने पर अुनकी मानवता अुमड़ आयी थी। मेरे लिअे बुद्धिपूर्वक खादीका महत्त्व समझनेको यह प्रवचन काफी था। अिससे पहले मेरा खादी-प्रेम भावनाप्रधान था। अब अुसमें ज्ञानका भी पुट लग गया।

४५

अुन दिनों अहमदाबादके मिल-मालिकों और मजदूरोंमें मजदूरी वगैराके मामलेमें मतभेद था। बापू मजदूरोंकी ओर मिल-मालिक संघके अध्यक्ष सेठ मंगलदास मालिकोंकी तरफसे पंच थे। अेक दिन सेठजी बापूसे अुस विषय पर परामर्श करने आये। मजदूरोंका न्यूनतम जीवन-स्तर तय करने और अुसके अनुसार मजदूरीकी दरें निश्चित करनेकी चर्चा हुअी। बापूने मजदूरोंकी आवश्यकताओंमें बीड़ी-तम्बाकूका खर्च भी

शामिल करनेका प्रस्ताव किया। मुझे आश्चर्य हुआ और सेठ मगलदासने अुसका विरोध करते हुअे कहा, "फिर तो शराबका खर्च भी क्यो न गिना जाय?" बापूने झटसे अुत्तर दिया, "अिनमें अुनमे बहुत फर्क है। तम्बाकू किसान-मजदूरके लिअे दैनिक आवश्यकताकी वस्तु बन गअी है। मैं तो चाहता हू कि कोअी तम्बाकू अिस्तेमाल न करे। अपने ढगने यह प्रचार मजदूरोमें कर भी रहा हू। परन्तु अुसकी मद्यपानसे तुलना करना न हमारा विवेक होगा और न मजदूरोंके साथ न्याय। भारतमें मदिरा किसी भी वर्गकी रोजमर्राकी जरूरत नही बनी है और न अिस व्यसनको मजदूर ही अुचित या आवश्यक मानते है। अिसकी अुन्होने माग भी नही की। पर तम्बाकूके खर्चके लिअे तो अुनका आग्रह है। हमें अुसे स्वीकार कर लेना ही चाहिये। अच्छी बात भी हम किसी पर थोप नहीं सकते।" बूढा सेठ अिस तर्कसे कायल हो गया। मुझे दूसरोका सुधार करनेमें विवेकसे काम लेनेका पदार्थपाठ मिल गया। मगर बापूकी श्रम और पूजी सबधी नीतिका ज्ञान नहीं हुआ। वह अुन्होंने स्वय सेठके चले जाने पर यू कराया .

"मैं श्रम और पूजीमें जन्मजात वैर नही मानता। वे दोनो बराबरके हिस्सेदार है। दोनो ही अुद्योगके मालिक है। कारखानेदार स्वामी और मजदूर नौकर नही है। श्रम ही असली पूजी है, अिसलिअे मजदूरका दर्जा अूचा है। मगर पूजीपतियोमें जो बुद्धि और व्यवस्थाशक्ति है, अुसका भी अुपयोग अुद्योगकी सफलताके लिअे आवश्यक है। वह अुपयोग धनिक वर्ग सम्पत्तिका मालिक न बनकर सरक्षक (ट्रस्टी) होकर ही अुत्तम रूपमें दे सकता है। मेरा सिद्धान्त डार्विनके जीवन-सघर्षके मतसे अुलटा है। मैं सहयोगको ही प्राणियोका धर्म और स्वभाव मानता हू। श्रममें अधिकार और पूजीमें कर्तव्यभाव अधिक जाग्रत हो, मेरी यही सामजस्यकी नीति है। वर्गयुद्धको मैं अस्वाभाविक, अनावश्यक और अहितकर मानता हू। अिसे टालनेके लिअे मैंने सभी झगडोकी तरह श्रम और पूजीके बीच पच फैसलेकी प्रणाली जारी की है। मेरा विश्वास है कि विवादग्रस्त मामलोको निपटानेके लिअे यही सर्वोत्तम मार्ग है और भारतको ही नही, ससार भरको किसी दिन अिस भद्रोचित अुपायका ही आश्रय लेना होगा।"

बापूने यह आखिरी बात अितने आत्मविश्वासके साथ कही कि मेरे मनमें अुसी दिन सुबहकी प्रार्थनामें गाअी गअी कबीरकी यह वाणी गूजने लगी

> सो चादर सुर नर मुनि ओढी,
> ओढिके मैली कीन्ही चदरिया।
> दास कबीर जतनसो ओढी,
> ज्यूकी त्यू धर दीन्ही चदरिया।'

४६

अेक रोज मैंने अपने शंका-समाधानके सिलसिलेमें बापूसे प्रश्न किया, 'मेरी बडी आकांक्षा है कि मेरे हाथसे कोअी बडा काम हो। यह अुचित है या नही? है तो अिसकी पूर्ति कैसे हो?' 'आकांक्षा तो अच्छे कामकी कभी बुरी नही होती,' बापूने कहा, 'परन्तु अिसमें कभी कभी होता यह है कि मनुष्य छोटे छोटे स्वाभाविक कर्मोंकी अुपेक्षा करके जिन्हे वह बडे काम समझता या मान बैठता है, अुनके लिअे कृत्रिम प्रयत्न करने लगता है और फिर अुन्हे सफल करनेकी आसक्तिमें दूषित अुपायोंका आश्रय लेनेमें भी संकोच नही करता। परन्तु यह तो बताओ, तुम्हे संगीतका कुछ ज्ञान है?' मुझे बीचमें ही अैसा प्रश्न किये जाने पर आश्चर्य हुआ। मैं बोला, 'ज्ञान तो खास नही, पर रुचि जरूर है।' 'तो तुमने देखा होगा कि जो अच्छे गवैये होते है, वे स्वर तो अूंचा या नीचा वही पकडते है जिसको वे अच्छी तरह निभा सकें, मगर अुस पर अपना सारा जोर लगा देते है। तभी अुनके गानेमें पूरी मिठास और लोच आती है। यही हाल कर्मकलाका है। कर्म छोटा किया जाय या बडा, यह तो अपनी अपनी शक्ति पर निर्भर है, पर जिस कार्यको अंगीकृत किया जाय, अुस पर मन, बुद्धि और शरीरकी पूरी ताकत लगा देनेसे ही वह अच्छा होता है।' मैं यह तो नही कह सकता कि मेरी मूल शंकाका पूरी तरह समाधान हो गया, मगर संगीतवाली दलील जितनी अनूठी थी अुतनी ही पटती हुअी लगी।

४७

रियासतों सम्बन्धी चर्चाके दौरानमें अेक दिन मैंने बापूको यह बतलाया कि महाराजा बीकानेरने अपने राज्यमें 'हिन्द स्वराज्य' का निषेध कर दिया है, तो अुन्हें आश्चर्य-सा हुआ। परन्तु मैंने कारण पूछा तो कुछ याद करके कहने लगे, "हां, अुसमें राजाओंके शासनकी कडी टीका है।" अितना कह कर 'हिन्द स्वराज्य' की अंग्रेजी प्रति मंगवाअी और अिधर अुधर कुछ पन्ने पलट कर बोले, "लो, यह अंश देख लो। अैसे अंशोंके होते हुअे 'हिन्द स्वराज्य' का वर्जित करार देना अचंभेकी बात नही है, बल्कि वर्तमान स्थितिमें अचंभेकी बात तो यह है कि अितने दिन तक निषेधाज्ञा क्यों नही निकाली गअी?" वह अंश यह था

"You will admit that people under several Indian Princes are being ground down The latter mercilessly crush them Their tyranny is greater than that of the English and if you want such tyranny in India, then we shall never agree My patriotism does not teach me that I am to allow people to be crushed under the heel of the Indian Princes, if only the English retire If I had the power, I should resist the tyranny of Indian Princes just as much as that of the English."

("आप स्वीकार करेंगे कि कअी भारतीय राजाओंकी प्रजाको कुचला जा रहा है। राजा अुनका निर्दय दमन करते हैं। अुनका जुल्म अंग्रेजोंके जुल्मसे ज्यादा है और अगर आप अिस तरहका जुल्म हिन्दुस्तानमें चाहते हों तो हम कभी सहमत नहीं होंगे। मेरा देशप्रेम मुझे यह नहीं सिखाता कि केवल अंग्रेज चले जायें तो मैं लोगोंको राजाओंके पैरों तले कुचला जाने दूं। मुझमें शक्ति हो तो मैं राजाओंके अत्याचारका अुतना ही विरोध करूंगा जितना अंग्रेजोंका।")

अिससे भी बडा आश्चर्य बापूको तब हुआ जब मैंने कहा, "बापू, महाराजा साहब हिन्दी नहीं पढते। हिन्दी अखबारोंकी संबंधित खबरोंका भी अंग्रेजीमें अनुवाद कराकर पढते हैं।" लेकिन जब मैंने यह बतलाया कि महाराजा अपने आदमियोंसे राजस्थानीमें ही बातचीत करते हैं, तब राष्ट्रभाषाकी अुपेक्षासे जो दुःख बापूको हुआ था, वह मातृभाषाके प्रेमसे कुछ कम हुआ दिखाअी दिया।

४८

बापूजीका भोजनके प्रयोग करनेका शौक मशहूर था। वे अिसका कोअी अवसर हाथसे नहीं जाने देते थे। जब अुन्हें पता लगा कि मद्रास प्रान्तके कोअी राजगोपालन नामक सज्जन वर्षोंसे कच्चे अन्नका प्रयोग कर रहे हैं, तो अुन्हें साबरमती आश्रम बुलाकर कुछ दिन रखा और स्वयं प्रयोग करने लगे। अुनकी आदत थी कि किसी भी नअी चीजको पहले अपने पर आजमाते, फिर किसीसे कहते। कहते भी क्या, अुनके अुदाहरणका अनुकरण दूसरे लोग अपने आप ही करने लगते। अैसी थी साथियोंकी अुनके प्रति श्रद्धा! कच्चे अन्नके प्रयोगके मामलेमें भी यही हुआ। मैं भी शरीक हुआ। जहां तक मुझे याद है प्रयोग बहुत सफल नहीं हुआ था। परन्तु अिस सम्बन्धमें अेक मजेदार घटना याद आती है। अेक दिन बापू शामको सैरसे लौटे थे और लेटे हुअे थे। राजगोपालन अुनकी चारपाअीके अेक तरफ बैठे थे और मैं दूसरी तरफ। राजगोपालनने कच्चे अन्नके गुणोंका बखान करते करते दूधको पाशविक आहार बता दिया और यहां तक कह डाला कि अुससे बुद्धि भी जानवरोंकी-सी हो जाती है। बापूने अपने माथे पर अुंगली रख कर तुरत कहा, 'यह देखो, मेरे तो सींग भी अुगने लगे हैं!' सब लोग खिलखिलाकर हंस पडे। बेचारे राजगोपालन बडे झेंपे। बापूने अपने विनोद-चातुर्यसे अेक मीठीसी चुटकीमें ही अुनके आत्यंतिक कथनको समाप्त कर दिया। मुझे मत बनाने और प्रगट करनेकी मर्यादाका अच्छा सबक मिल गया।

४९

शायद कच्चे अन्नके प्रयोगसे या अन्य किसी कारणसे बापूको अुन्ही दिनो जोरकी पेचिश हो गअी थी। मीराबहन अुनकी मुख्य सेविका थी। अुनसे मेरा पहला ही परिचय हुआ था। बीमारीके बावजूद बापूको अलाहाबाद जाना पडा था। मगर अतिवृष्टिके कारण रेलमार्ग बिगड जानेसे वे स्टेशनसे ही लौट आये। मीराबहनको जब अिसका पता लगा तो वे दौडी दौडी आअी और बापूके पैरोको पकड कर अुन पर सिर रखकर गद्गद हो गअी और बोली, 'ओ बापू, आप आ गये?' अुनकी यह भावनामयी स्थिति देखकर बापूने कहा, 'मीरा, तू पूर्वजन्ममे मेरी मा थी या बेटी?' भक्ति और पवित्र प्रेमके अिस अलौकिक दृश्यको देखकर मै दग रह गया!

५०

अिन्ही दिनो मेरे मित्र सरदार दिवानसिंह, सम्पादक, 'रियासत' का दिल्लीसे खत आया। वे नवाब साहब भोपालके बडे खिलाफ थे। अुन्होने लिखा कि महात्माजीने अैसे आदमीकी तारीफ कैसे की। आप अुनसे दर्याफ्त करके असली बात लिखिये। अखबारोमें भी आलोचना हुअी थी। मैंने बापूसे पूछा तो कहा कि "बात यू है कि मैं खादी कार्यसे भोपाल गया था। वहा १० सितबरको आम सभा हुअी। अुसमे मैंने जिस सरकारी स्थान पर मै ठहराया गया था अुसकी सादगीकी तारीफ करके खलीफा अुमरका स्मरण किया था और यह कहा था कि रामराज्यके आदर्श पर चल कर देशी राजा बढिया लोकतत्रका नमूना पेश कर सकते है। मैंने न तो नवाब साहबके जीवनको सादा बताया, न अुनके शासनकी तारीफ की। मैं जानता हू कि रियासतोकी क्या हालत है और राजाओका जीवन कैसा है। मै काठियावाडी हू, अितना बुद्धू नही हू जितना कुछ लोग समझते है। मगर मेरा विश्वास है कि देशी राज्य सस्थाका सच्चे लोकतत्रसे विरोध नही है, अगर राजा लोग रामराज्यकी मेरी कल्पनाके अनुसार शासनको अुस साचेमें ढाल लें। मेरा अभिप्राय यह है कि शासन न केवल प्रजाके चुने हुअे प्रतिनिधियोके हाथमें हो, बल्कि वे प्रतिनिधि भले आदमी भी होने चाहिये। मेरी रायमें अैसा शासन आधुनिक अर्थमें लोकतत्रसे कही अच्छा होगा, क्योकि लोकतत्रमें जहा चुनावके सिद्धातका प्रभुत्व है, वहा अच्छे मनुष्योकी प्रधानता होना आवश्यक नही है।" मुझे याद है बापूने मेरे निवेदन पर 'नवजीवन' में स्थितिकी विस्तृत सफाअी दी थी। अुसका सार यह है

"मेरे विचारसे स्वराज्यका अर्थ अग्रेजोके हाथसे सत्ताका हिन्दुस्तानियोके हाथमें आ जाना नही है। मेरे सपनोके स्वराज्यमें सत्ता अुचित सयमके साथ तीस करोड आदमियोके हाथमें होगी। अैसी सरकारमें निर्णय पदासीन व्यक्तियोंके हाथमें नही रहेगा, परन्तु न्याय और सत्य पर निर्भर होगा। मैंने अुसे रामराज्य या स्वर्गीय राज्य कहा है। अिसमें राजाकी गुजाअिश है। परन्तु राजाका अर्थ है रक्षक, सरक्षक, अुत्तम

सेवक, अदनासे अदना नौकर। स्वराज्यमें राजा वही होगा जो लोगोंकी जूठन खायेगा। दूसरे शब्दोंमें, वह प्रजाको सुलाकर सोयेगा, खिलाकर खायेगा और जिलाकर जियेगा। ीश्वर अैसे राजाओंको चिरजीवी करे! अगर अिस युगमें अैसे राजा असंभव हैं तो मुझे कोओ सन्देह नही कि वे मिटकर रहेंगे।

"नवाब साहब भोपालकी मेरी तारीफका यह मतलब नही लगाना चाहिये कि मैंने अुनके महलकी सादगीकी तुलना हजरत अुमरके झोपड़ेसे की है। मेरा मतलब अितना ही था कि जहा मैंने कीमती सजावटवाले महलकी आशा रखी थी, वहा मैंने किसी साधारण लखपतिकी कोठी जैसी भी कोअी चीज नही पाअी।

"मुझे कोअी अितना भला या सीधा न समझे कि मैं दो चार सौ रुपयेकी खादी मुझसे खरीद लेनेवाले हरअेकको अच्छाअीका आम प्रमाणपत्र दे डालूगा। अधिकतर तो मैं अुन धोखेबाजोंको पहचान लेता हू, जो खादी पहनकर या खादी खरीदकर मुझसे अनुचित लाभ अुठाना चाहते हैं। राजाओ द्वारा जहर देकर मार देनेकी शिकायतोंमें थोडी बहुत अतिशयोक्ति रहती है। जिनके पास अैसे अत्याचारोंके अकाट्य प्रमाण हों वे मेरे पास भेज दें। मेरा यह अभिप्राय हरगिज नही है कि कोअी भी भारतीय राजा अैसी गंदी हत्यायें नहीं करता। रियासतोंमें जो सड़ी हुअी हालत है अुससे मैं अनभिज्ञ भी नही हू। परन्तु अिन बुराअियोंकी जानकारी होने पर भी मेरा विश्वास है कि रियासतें सुधारी जा सकती हैं और काबूमें लाअी जा सकती हैं। अगर वे नष्ट होनेके योग्य हैं तो वे अपने ही कर्मोंसे नष्ट हो जायेंगी, बशर्ते कि अुन्हें बुरा समझते हुअे भी हम अुनकी मदद न करें। जो अुन्हे बुरा समझते हैं और फिर भी अुनकी नौकरी करते है, वे अुन्हे सहन करते, अुनका पोषण करते हैं। जो बुरे अुपायोंसे अुनका नाश करना चाहते हैं, वे भी अुनको सहायता पहुचाते हैं। बुराअीसे बुराअीका कभी नाश नही हो सका है। लेकिन जो मेरी तरहसे शुद्ध हेतुसे — शायद गुमराह होकर ही — अुनमें भलाअी देखनेकी कोशिश करते हैं, और जहा तक वे पात्र है, अुनकी प्रशंसा करते हैं, वे या तो रियासतोंको सुधारते हैं या अुनके साथ असहयोग करने या अुनकी सविनय आज्ञा भंग करनेका अपना हक साबित करते हैं।

"मुझे पक्का विश्वास है कि रियासतोंमें अैसे लोग अुंगलियों पर गिनने लायक भी नहीं हैं, जो जेल जानेको तैयार हों, मृत्युका आवाहन करनेकी तो बात ही क्या? अगर रियासती प्रजा निडर होकर जेलके कष्ट भोगनेको तैयार हो, तो वहा जुल्म होना असंभव हो जाय। याद रहे कि चाहे ब्रिटिश भारत हो या देशी राज्य, जो अेनके नष्ट करने पर तुले हुअे हैं अुन्हें कोअी नही रोक सकता। जब देशके कोने कोनेमें निःस्वार्थ बलिदान करनेकी शक्तिका विकास हो जायगा, तब सारी बुराअी गायब हो जायगी।"

अिस प्रसंग पर मुझे बापूकी रामराज्य सम्बन्धी कल्पना और भावनाकी पहली बार झाकी मिली और यह भी पता चला कि सच्ची शंकाओंका समाधान व्यक्तिगतकी

भाति सार्वजनिक रूपमें भी करनेको वे सदा तैयार रहते थे। वे वास्तवमें लोकतंत्री स्वभावके थे।

५१

परन्तु अिन विचारोका प्रत्यक्ष प्रभाव मुझे देखनेको मिला राजकोटमें। अुन्ही दिनो प० जवाहरलाल नेहरूकी अध्यक्षतामे वहा काठियावाड युवक परिषदका अधिवेशन हुआ। राजकोटके ठाकुर साहबने पडितजीको अपना मेहमान बनाया और अपनी राजधानीमें परिषदका खुला अधिवेशन होने दिया। यह मेरे लिअे सहर्ष आश्चर्यकी बात थी। अुस जमानेमें रियासती प्रजाका राजनीतिक आन्दोलन प्राय रियासतोकी सीमाके बाहर ही होता था, अुसके सभा-सम्मेलन अधिकतर ब्रिटिश भारतमें करने पडते थे और राजाओका आम तौर पर विरोधी रुख रहा करता था। राजकोटमें मैंने बिलकुल दूसरी ही चीज पाअी। बात यह थी कि काठियावाडके कार्यकर्ता बापूकी सलाहसे काम करते थे, जवाहरलालजी भी अुनसे परामर्श लेकर वहा गये थे और लाखाजीराज तो बापूको पिता और गुरुतुल्य ही मानते थे। अिसलिअे सौराष्ट्रमें जो सहयोग और स्वतत्रता थी अुसमें बापूका बहुत बडा हाथ था। परिषदने रचनात्मक कार्यक्रम और राजनीतिक समस्याअें, दोनो पर प्रस्ताव पास किये। वहा मैंने नपुसक आवेशका प्रदर्शन नही देखा, सयमका सात्त्विक बल पाया।

५२

प० बनारसीदास चतुर्वेदी अुस समय आश्रममें ही रहकर बापूकी देखरेखमें प्रवासी भारतीयोकी सेवा कर रहे थे। अुनका काम मुख्यत अखबारोंमें लेख लिखना और पत्रव्यवहार करना था। वे न सूत कातते थे, न प्रार्थनामें जाते थे। बापू भी अुनकी सचाअी, भलाअी और स्वतत्र मानसका लिहाज और अुपयोगिताका खयाल करके सहन करते थे। मेरा अुनसे शान्तिनिकेतनमें पहले परिचय हो चुका था। मिला तो कहने लगे, "महात्माजीको मै सबसे बडा प्रचारक (Propagandist) मानता हू। दूसरे नम्बर पर अपनेको समझता था, परन्तु अब वह दर्जा आपको देना पडेगा।" मुझे अिस रायसे शका-समाधानका अेक सूत्र मिल गया। मैंने तीसरे पहर बापूजीसे पूछा, 'लोग आपको सबसे बडा प्रचारक समझते है, फिर आप विदेशोंमें भारतके पक्षका प्रचार क्यो नही करते और कराते?' अुन्होने अुत्तर दिया, "साधारण अर्थमें तो मैं प्रचारक नही हू। परन्तु अपने ढगका जरूर हू। मेरे और दूसरोके प्रचारमें भी कार्यके अन्य अगोकी भाति बडा अन्तर यह है कि मैं विपक्षीको गिरानेके लिअे असत्यका आश्रय नही लेता, बल्कि अुसके पक्षका खडन करनेमें भी अुसकी सचाअी और गुणोका अुल्लेख कर देता हू। सत्य और न्यायकी खातिर तो यह जरूरी है ही, व्यावहारिक दृष्टिसे भी लाभदायक है। अिससे विरोधीके विरोधकी तीव्रता कम होती है और

शालीन और निष्पक्ष लोकमतकी नजरोंमें हम अूचे अुठते हैं। रही बात विदेशोंमें प्रचारकी, सो प्रथम तो मैं यह मानता हू कि अुसके लिअे जितना खर्च जरूरी है अुतना फलदायक नही होता। दूसरे, कारगर प्रचार घटनाओंका होता है, किसी पक्षका अुतना नही होता। यदि हम कोअी ठोस काम करते हैं या घटनापूर्ण परिस्थितिया पैदा कर देते हैं, तो विदेशोंमें स्वभावत दिलचस्पी जाग्रत होती है और वहाके लोग और अखबार अपने आप प्रचार करने लगते है, भले ही वह विरोधमें हो या पक्षमें। तुमने देखा होगा कि असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें जितना प्रकाशन भारतको दूसरे मुल्कोंमें मिला अुतना पहले कभी नही मिला।" मुझे अुसी समय यकीन हो गया कि प्रचारका सबसे सफल तरीका यही है। अनुभवने बादमें अिस प्रतीतिको दृढ कर दिया।

५३

काठियावाडसे लौटकर मैंने बापूको वहाके अपने संस्मरण सुनाये और पूछा "आप जिस ढगसे काठियावाडके राज्योंमें काम कर रहे हैं, अुस ढगसे भारतके तमाम राज्योंमें क्यो नही करते?" "कर सकता हू और करना भी चाहता हू। देशी राज्योंमें कार्य करनेके सम्बन्धमें मेरे कुछ निश्चित विचार और तरीके हैं। लेकिन मेरी सेवाकार्यकी पद्धतिमें अेक अनिवार्य शर्त रहती है और वह यह है कि किसी विशेष कामको करनेके लिअे अेक सस्था हो और कमसे कम अेक योग्य आदमी सस्थाको पूरा समय देनेवाला हो।" क्षण भर रुककर मेरी ओर देखने लगे और पूछा, "तुम समय दे सकते हो तो मैं अैसी सस्था खडी करनेको तैयार हूं।" मुझे और क्या चाहिये था? मेरे लिअे 'चुपडी और दो दो' वाली बात थी। अपना प्रिय कार्य और बापूकी सीधी छत्रछायामें हो, अिससे बडा सौभाग्य और सुख और क्या हो सकता था? तुरन्त अुत्तर दिया, "शौकसे दे सकता हू।" मैंने देखा कि बापू निर्णय बहुत सोच-विचारके बाद करते हैं, परन्तु अुस पर अमल करनेमें देर नहीं लगाते। अुन्होंने कागज कलम अुठाया और आध घटेमें अेक विधान अंग्रेजीमें तैयार करके दे दिया। वह यह था:

The Princes & People's Service Society

Object

The object of the Society shall be the service of the Princes and people of Indian States

Means

(1) Where there is no prohibition from the State concerned, to undertake constructive work such as promoting Khadi, prohibition, social reform removing untouchability and communalism etc

(2) Where there is no prohibition from the State concerned, to make courteous submission to the Princes regarding the people's grievances.

(3) To conduct in a friendly spirit newspapers or magazines for the promotion of the objects of the society

(4) To discover the best basis of relations between the Princes and their people and the best system of government in accordance thereto and to cultivate public opinion on it.

Note : This Society does not share the opinion that the existence of the States is by their very nature contrary to the growth of the spirit of full democracy The society believes that their existence need not be inconsistent with the growth of such spirit

Limitations

(1) To refrain from criticising the acts and policy of one Prince in the territories of another.

(2) To refrain from desiring or seeking the interference of the British Power in the affairs of the Indian States on any occasion whatsoever

(3) No member of the Society shall ever depart from the path of truth and non-violence

(4) In all matters of difference and doubts and in the determination of new policies, reference shall be made to Mahatma Gandhi for his final decision

[राजा प्रजा सेवक समिति

अुद्देश्य

भारतके देशी राज्योंके राजा-प्रजाकी सेवा करना अिस समितिका अुद्देश्य होगा।

साधन

(१) जहां राज्यकी ओरसे निषेध न हो, वहां खादी-प्रसार, नशा-निषेध, समाज-सुधार, अस्पृश्यता और साम्प्रदायिकता-निवारण आदि रचनात्मक काम करना।

(२) जहां राज्यकी ओरसे निषेध न हो, वहां प्रजाके कष्टोंको विनयपूर्वक राजाके सामने रखना।

(३) समितिके अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे मित्रभावसे पत्र-पत्रिकाअें चलाना।

(४) राजा-प्रजाके पारस्परिक सम्बन्धोंका सर्वोत्तम आधार और अुनके अनुसार शासनकी सर्वोत्तम प्रणालीकी खोज करना और अुसके पक्षमें लोकमत तैयार करना।

नोट यह समिति जिस रायसे सहमत नही है कि राज्योका अस्तित्व लोक-सत्ताकी भावनाके विकासके विरुद्ध है। समितिकी मान्यता है कि अुनका अस्तित्व अिस प्रकारकी भावनाके विरुद्ध ही हो, यह आवश्यक नही है।

मर्यादायें

(१) अेक राज्यकी सीमामें दूसरे राज्योके कार्यो और नीतिकी आलोचना न की जायगी।

(२) किसी भी अवस्थामें राज्योंके मामलोमें ब्रिटिश सरकारका हस्तक्षेप न चाहा और न मागा जायगा।

(३) समितिका कोअी सदस्य सत्य और अहिंसाके मार्गसे कभी नही हटेगा।

(४) मतभेद और शकाके सब मामलोमें और नअी नीतिया निश्चित करनेमें गाधीजीसे पूछकर अुनका अतिम निर्णय लिया जायगा।]

५४.

अिस पर जिज्ञासाके तौर पर मैंने बापूसे लम्बी चर्चा की। मेरा पहला प्रश्न तो सस्थाके नाम और अुद्देश्य पर ही था। राजाओंके स्वार्थ प्रजाके स्वार्थोके विरुद्ध समझनेके मेरे सस्कार दीर्घकालीन और प्रबल थे। बापूने समझाया कि "सामंजस्यके दृष्टिकोणमें अिन दोनोके बीच मौलिक हित-विरोध नही माना जाना चाहिये। पूजीपतियो और भूस्वामियोकी तरह मेरे सरक्षकता (ट्रस्टीशिप) के विचार राजाओ पर भी लागू हो सकते है और होने चाहिये। मैं अुन्हे प्रजाका प्रथम सेवक बनाना चाहता हू और यह दिखा देना चाहता हू कि राजा-प्रजा दोनो मेरी बात मान ले, तो अुनके स्वार्थ भिन्न नही, अेक ही हैं। यह स्थिति मैं अुनका सम्मान करके, अुनका विश्वास प्राप्त करके और अुनके प्रति प्रजाका अधिकसे अधिक सद्‌भाव दिखलाकर ही ला सकता हू। वैसे, साधनोमें मैंने आत्यतिक सत्याग्रह तककी गुजाअिश सदा ही रखी है और यदि हमारे अिस सारे अुदार रवैयेके बावजूद राजाओका हृदय-परिवर्तन नही होगा, तो तीव्रसे तीव्र अहिंसक कारंवाअीके लिअे हमारे हाथ खुले ही है।"

मैंने कहा, "राजाओकी सेवाकी बात प्रजाको, जो अुनसे पीडित और क्षुब्ध हैं, पसन्द नही आ सकती। अिसलिअे शुरूसे ही अुसका सहयोग हमें नहीं मिलेगा।"

"तुम्हारे अिस अदेशेमें मुझे अनावश्यक भीरुता नजर आती है। मेरा अनुभव यह बताता है कि जनताके सच्चे हितको विचारपूर्वक समझकर अुसके अनुसार हम अुसके सामने शुरूमें अप्रिय लगनेवाली बात भी रखते है, तो धीरे धीरे वह असलियतको समझकर हमारे साथ हो जाती है। जनता तो अुसके विश्वासपात्र कार्यकर्ता जो रास्ता बताते है अुस पर चलती है। जब हमारी नीतिसे लोगोको राहत मिलने लगेगी और जब अुनकी प्रगति होने लगेगी — और अिसमें तो कोअी सन्देह नही कि अिस नीतिसे ये दोनो काम जल्दी और ज्यादा मात्रामें होते है — तो जनता वास्तविक रहस्यको समझकर हमसे हार्दिक सहयोग करने लगेगी।"

अपनी योजनाके दूसरे अंगों पर बापूने अपने आप ही प्रकाश डालना शुरू कर दिया। वे बोले "राजाओंके अंग्रेजोंके साथ जैसे सम्बन्ध हैं अुन्हें देखते हुअे रियासतोंमें ब्रिटिश हस्तक्षेप कराना राजाओंको अुनके अधिक पराधीन और प्रजाका विरोधी बनाना है। अंग्रेज शासक अपनी साम्राज्यवादी नीतिके अनुसार प्रजाका बलवान होना कभी पसन्द नहीं कर सकते। अिसलिअे वे आम तौर पर राजाओंको नाराज करके प्रजाका पक्ष न्याय्य होने पर भी नहीं लेते।

"अिसी प्रकार रियासतोंके आपसी ताल्लुकातको देखते हुअे अेक रियासतकी आलोचना दूसरी रियासतमें बैठकर करनेसे अुनको परेशानी होती है और जनताकी दृष्टिसे कोअी लाभ नहीं होता। काम तो शेरका सामना अुसकी मांदमें ही करनेसे चलेगा। कितनी ही मर्यादित आलोचना क्यों न हो, वह अुसी रियासतके भीतर करनेमें प्रजाका बल, थोड़ा ही सही, बढ़ता है।

"जनताके कष्ट-निवारणका काम भी राजाओंके सद्‌भावसे ही अच्छा हो सकता है। कमसे कम जब तक जनतामें जाग्रति और संगठनका बल न आ जाय, तब तक तो अेकमात्र मार्ग यही है। अिसलिअे अुन्हें पहले ही निश्चिन्त कर देना कमसे कम दूरदर्शिता तो है ही।

"संस्थाका सलाहकार रखनेकी बात मेरी कार्यपद्धतिका अेक खास अंग है। अिस सम्बन्धमें अेक दो जरूरी बातें तुम्हें समझा देना जरूरी है। पहली तो यह है कि काम करनेवाली संस्थाओंमें साधारण निर्वाचन प्रणाली ठीक साबित नहीं होती। अैसे मंडल समान गुणशील, स्वभाव और आदर्शोंवाले व्यक्ति मिल-जुलकर बना लें, यही अच्छा रहता है। अवश्य ही विचार करते समय सब सदस्योंको पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये, परन्तु काममें पूरा अनुशासन रहना चाहिये। फिर भी मतभेद होने स्वाभाविक हैं। अुन्हें झगड़ेकी हद तक न बढ़ने देनेके लिअे यह वांछनीय है कि जिस पर सब सदस्योंकी श्रद्धा हो, अैसे व्यक्तिको सलाहकार बना लिया जाय और वह जो राय दे अुसे सब मान लें।"

फिर कहने लगे, "संस्थाका दफ्तर फिलहाल मैं साबरमती ही रखना चाहता हूं और वह अिसलिअे कि संस्था भी अपने ढंगकी नअी होगी और तुम भी मेरे लिअे नये हो। अिसलिअे मेरी सीधी देखरेखमें काम होना आवश्यक है।"

चर्चाके अन्तमें बापूने बताया कि अुनका अिरादा सेठ जमनालालजीको समितिका अध्यक्ष, मणिलालजी कोठारीको अुपाध्यक्ष और मुझे मंत्री बनानेका था। वे मेरे अंग्रेजी साप्ताहिक 'यंग राजस्थान' और राजस्थान-सेवा-संघ द्वारा मणिलालजी कोठारीके सुपुर्द किये गये हिन्दी साप्ताहिक 'तरुण राजस्थान'को अेक करके दोनों भाषाओंमें चलाना चाहते थे और सम्पादकका काम भी मुझीसे लेना चाहते थे। परन्तु दुर्भाग्यवश जमनालालजी और मणिलालभाअीमें मतभेद रहा और वह योजना

कागज पर ही धरी रही। मुझे अिस घटनासे दुःख तो वहुत हुआ, परन्तु देशी राज्योके कामके बारेमें मेरा दिमाग साफ हो गया। बापूके बनाये हुअे अिस विवानका अुपयोग मुझे आगे चलकर हरिजन-सेवक-सघके काममें खूब लाभदायक सिद्ध हुआ। हमारी नअी संस्था राजस्थान-सेवक-मडलमें तो हमने अुस विवानको ज्योका त्यो ही अपना लिया।

५६

यग राजस्थान प्रेसमें अिन्दौरके अेक राजनीतिक कार्यकर्ताका वहाके शासनके विरुद्ध हिन्दीका अेक गुमनाम पर्चा छपा था। अुस पर छापखानेका नाम नही दिया गया। शक होनेके वावजूद अिन्दौरवालोको अजमेर पुलिसकी सहायतासे भी प्रेसका पता नही चला। हमारे यहा तलाशी हुअी, परन्तु अुनको कोअी सबूत हाथ नही लगा। मैं बापूके तत्त्वज्ञानको मानने लगा था। अिसलिअे यह रहस्य मेरे मनमें खटक रहा था। अिसे अुन पर प्रगट करके मैंने प्रस्ताव किया कि अधिकारियोको सही बात बता दी जाय। बापूको यह तजवीज बहुत पसन्द आअी और तय हुआ कि ब्यावर लौटते ही अजमेरके कमिश्नरको सूचना दे दी जाय कि वह पर्चा मैंने छापा था और अुसके कारण सरकार कानूनी कार्रवाअी करना चाहे तो अुसे भुगतनेको मै तैयार हूं। पत्रका मसौदा भी बापूने ही बनाया और पत्र ब्यावर पहुचकर भेज दिया गया। पत्र यह था

Young Rajasthan Office

Beawar, 8th Sept 1929

To

The District Magistrate,
Ajmer-Merwara,
Ajmer

Dear Sir,

I write this to inform you that as printer of the Young Rajasthan Press at Beawar, I printed in June last a Hindi pamphlet, entitled 'Indore Ka Kalankit Kushasan' (Scandalous mal-administration in Indore) in 1000 copies, at the instance of a gentleman who then chose to remain anonymous, but who has since disclosed his name before the Indore court which is Mr Raghunath Prasad Parsai The pamphlet does not bear the name of the press and the printer I was aware that by making this omission I was infringing the law

Since I have definitely changed my policy of work, which will now be strictly in conformity with the principles of truth

and non-violence, I take this the earliest opportunity of making a clean confession of my guilt I shall be pleased and prepared to take the consequences of my act and to present myself before you, if called upon to do so

Yours truly,
Ramnarayan Chaudhry

[यंग राजस्थान कार्यालय

ब्यावर, ८ सितम्बर, १९२९

श्री जिला मजिस्ट्रेट,
अजमेर-मेरवाड़ा, अजमेर

प्रिय महाशय,

अिस पत्र द्वारा मैं आपको सूचना देता हू कि 'यंग राजस्थान' प्रेस, ब्यावरके मुद्रकके नाते मैंने पिछले जूनमें 'अिन्दौरका कलंकित कुशासन' शीर्षकसे अेक हिन्दी पुस्तिका छापी थी। अुसकी १००० प्रतियां छपी थी और वे अेक अैसे सज्जनके कहनेसे छापी गअी थी जिन्होंने अुस समय तो गुमनाम रहना ही पसन्द किया था, मगर अुसके बाद अुन्होंने अिन्दौरकी अदालतमें अपना नाम श्री रघुनाथप्रसाद परसाअी प्रगट कर दिया है। पुस्तिका पर प्रेस और मुद्रकका नाम नहीं है। मैं जानता था कि नाम न देकर मैं कानूनका भंग कर रहा हूं।

चूंकि मैंने अपनी कार्यनीति निश्चित रूपमें बदल ली है और वह कड़ाअीके साथ सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तोंके अनुसार होगी, अिसलिअे जल्दसे जल्द अवसर पाते ही मैं अिस पत्र द्वारा अपना अपराध साफ तौर पर स्वीकार कर रहा हूं। मैंने जो कृत्य किया है अुसका नतीजा भुगतने और मुझे बुलाया जायगा तो आपके सामने हाजिर होनेमें मुझे खुशी होगी और मैं अुसके लिअे तैयार हूं।

आपका
रामनारायण चौधरी]

जहां तक मुझे खयाल है अिस अपराध पर अुस समयके कानूनमें लम्बी कैद और भारी जुर्मानेकी सजा थी। मगर गिब्सन साहबके लिअे और कुछ भी कहा जाय, वे मेरे जैसे अंग्रेजी राज्यके शत्रुको दंड देनेके अिस अवसरको सफा पचा गये और मेरे विरुद्ध कोअी कदम नहीं अुठाया। पुलिसने काफी जोर दिया और अेकसे अधिक बार गिब्सन साहबसे मेरे विरुद्ध मुकदमा चलानेकी मंजूरी मांगी, मगर अुनका जवाब यही रहा कि जिस आदमीने अपना दोष स्वीकार कर लिया अुसके खिलाफ कार्रवाअी करनेकी मेरा दिल गवाही नहीं देता। अिस घटनाका अुन पर अितना असर पड़ा कि जब १९३४में बड़ी धारासभाका चुनाव हुआ और मि० गिब्सन अुड़ीसाकी रियासतोंके रेजीडेंट थे, तब हम दोनोंके मित्र और अजमेरके प्रमुख कांग्रेसी

नेता प० गौरीशंकर भार्गवके मिलने पर मुझ जैसे 'योग्य आदमी' को कांग्रेसी अुम्मीद-वार न बनाने पर अुन्होंने आश्चर्य प्रगट किया। अिस घटनाने मुझे बापूने 'बहादुर' की पदवी तो दिलवाअी ही, साथ ही सचाअी प्रगट करनेके नुपरिणामका भी मुझे पहला अनुभव हुआ।

अिसके पहले मि० गिब्सन 'यंग राजस्थान' के अेक और मामलेमें पुलिसकी गलत रिपोर्ट पर मुझ पर नोटिस जारी कर चुके थे। लेकिन भूल मालूम होने पर खुली अदालतमें मुझसे माफी मांगनेमें नहीं हिचकिचाये थे। अैसे शरीफ अंग्रेजके हाथों काठियावाड़ पहुंच कर राजकोटमें बापू जैसी महान आत्माके साथ कुटिल व्यवहार होने पर बादमें मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ था। मालूम होता है कि यह परिवर्तन अुनमें १९३३-३४ की अेक घटनाके बाद हुआ। अिस घटनामें अजमेरके बापट नामक क्रान्तिकारीने अुन पर असफल गोली चलाअी थी।

५७

राजा प्रजा सेवक समितिकी योजना पार नहीं पड़ी, तो बापूने मुझे साफ राय दे दी कि "कोरा अखबार चलाकर तुम अपनी शक्ति व्यर्थ न गंवाओ। अखबार किसी कार्यका साधन हो सकता है, स्वयं कोअी कार्य या साध्य नहीं है। 'यंग राजस्थान' बन्द करके मेरे पास चले आओ।" मैंने अुनकी आज्ञा शिरोधार्य की और अखबार बन्द करनेकी सूचना देनेवाला लेख लिखकर अुन्हें बताया। वह अुन्हें पसन्द नहीं आया। वे बम्बअी जा रहे थे। दिनकी गाड़ी थी। मुझे बड़ौदे तक साथ ले गये और स्वयं लिख कर दूसरा लेख मुझे दे दिया। वह लेख यह था:

Farewell

With this issue the 'Young Rajasthan' ceases publication. While making this announcement, I cannot feel entirely happy and I believe my sorrow will be shared by many readers. But it is a decision born of considerable thought and valuable advice.

I must admit that the paper has not become self-supporting My views about work in Indian States have undergone a substantial change Perhaps a paper for doing work in accordance with the revised ideas is not absolutely necessary. I feel that much more substantial work is possible by greater restraint and even silence What is needed is constructive work This requires constant labour rather than newspaper propaganda Moreover, I have realized that there are too many papers in the limited area and for the one subject of Indian States I, therefore, feel that I shall better advance the goal by disappearing from journalism at least for one year. (Mahatma) Gandhiji's method has for some

time attracted me In order to study it more fully and at closer quarters, I have decided with his permission to pass one year at least in the Sabarmati Ashram doing such work as he may entrust me with I assure the readers and my many friends that I hope by this renunciation to become a better instrument of service.

My deep thanks are due to the patient readers Those who have paid their subscriptions in advance are entitled to a proportionate refund, if they desire

26-12-1929 Ramnarayan Chaudhry

[अलविदा

जिस अंकके साथ 'यंग राजस्थान' का प्रकाशन बन्द होता है। यह घोषणा करते समय मुझे प्रसन्नता तो नहीं हो रही है और मेरा विश्वास है कि बहुतसे पाठक मेरे जिस दुःखमें शरीक होंगे। परन्तु यह निर्णय काफी विचार और कीमती सलाहका परिणाम है।

मुझे स्वीकार करना चाहिये कि अखबार स्वावलम्बी नहीं बन पाया है। देशी राज्योंके कार्य-संबंधी मेरे विचारोंमें बहुत परिवर्तन हो गया है। शायद बदले हुअे विचारोंके अनुसार काम करनेके लिअे अखबारकी अत्यंत आवश्यकता भी नहीं है। मैं अनुभव करता हूं कि अधिक संयम और मौनसे भी कहीं अधिक ठोस काम हो सकता है। आवश्यकता रचनात्मक कार्यकी है। अिसलिअे प्रचारके बजाय सतत परिश्रमकी ज्यादा जरूरत है। अिसके सिवा मैंने समझ लिया है कि देशी राज्योंके मर्यादित क्षेत्रमें और अेक ही विषयके लिअे बहुत अधिक पत्र पहले ही मौजूद हैं। अिसलिअे मुझे महसूस होता है कि कमसे कम अेक सालके लिअे पत्रकार जगतसे ओझल होकर मैं अुद्देश्यकी अधिक अच्छी पूर्ति करूंगा। कुछ समयसे मुझे महात्मा गांधीके तरीकेने आकर्षित किया है। अुसका अधिक पूरी तरह और निकटसे अध्ययन करनेके लिअे मैंने अुनकी अनुमतिसे कमसे कम अेक वर्ष सत्याग्रह आश्रममें अुनका बताया हुआ काम करनेमें बिताना निश्चय किया है। मैं पाठकों और अपने अनेक मित्रोंको विश्वास दिलाता हूं कि मुझे अिस त्यागसे सेवाका अेक बेहतर साधन बन जानेकी आशा है।

मैं धैर्यशाली पाठकोंका बड़ा कृतज्ञ हूं। जिन्होंने अपना चन्दा पेशगी चुकाया है, वे चाहें तो अुन्हें अपना बाकी रुपया वापस लेनेका हक होगा।

२६-१२-'२९ रामनारायण चौधरी]

बापूकी सलाहके अनुसार सब ग्राहकोंको लिखा गया कि वे चाहें तो अुनका बचा हुआ चन्देका रुपया अुनको लौटा दिया जायगा, और जिन्होंने मांग की अुन्हें भेज भी दिया गया।

५८

अिस अवसर पर वापूने मुझे पत्रकार-सम्बन्धी अपने जो विचार बताये, वे कभी भुलाये नहीं जा सकते। अुनका सार यह था "आजकल अखवारोंमें जैसी व्यापारिकता आ गयी है वह अिस पवित्र धंधेके लिअे लज्जाजनक है। झूठी झूठी मनगढन्त बातें, निर्मूल खबरें अपने दिमागसे घडकर केवल विरोधियोको गिरानेके लिअे लिखी जाती हैं। सिर्फ सनसनी फैलानेवाले समाचार, जिनसे समाजका कोअी हित नहीं होता, महज बिक्री बढानेके लिअे दिये जाते हैं। राजनीतिको ही सब कुछ मान लिया गया है। समाज-सुधार, सेवाकार्य और मानव-जीवनको सदाचारी और सुखी बनानेकी प्रवृत्तियो पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। विज्ञापनोका यह हाल है कि सिनेमा, भोगविलासकी सामग्री और कामोत्तेजक दवाअोंसे अखवार भरे रहते हैं। ये सब बातें देखकर मेरे तो जीमें आता है कि मेरा बस चले तो 'यंग अिंडिया' और 'नवजीवन' (फिर कुछ देर ठहर कर बोले, 'कुछ और पत्रो') के सिवा और सब अखवारोको बन्द कर दूं। अखवारोंमें अच्छे साहित्यके अलावा कोअी विज्ञापन होने ही नहीं चाहिये। अुनका मूल्य ही अितना होना चाहिये कि वे स्वावलंबी हों। अगर जनताको अखवार पसन्द होगा और अुसे अुसकी जरूरत महसूस होगी तो ग्राहक खुशीसे पूरे दाम देंगे। जिस अखवारकी आवश्यकता न हो अुसे कृत्रिम और आपत्तिजनक अुपायोंसे जिन्दा रहनेका कोअी अधिकार नहीं। देशभक्त लोगोंको भी पत्र निकालनेका अितना मोह है कि वे स्वाभिमान खोकर, जमानतें देकर भी निकालते हैं।"

वापूने अपने अखवार अिन्हीं आदर्शों पर चलाये और जब कभी अुन पर आंच आते देखी तो अपने पत्रोंका प्रकाशन स्थगित या बन्द कर दिया, परन्तु अपने सिद्धांतो और विचार-स्वातंत्र्यका स्तर नीचा नहीं होने दिया। मुझे याद है जब मैंने १९४६ में वापूकी राजनीतिके अनुसार भी 'नया राजस्थान' नामक हिन्दी दैनिक निकालना चाहा तो अुन्होंने मेरे अनुनय-विनय करने पर भी अपना आशीर्वाद नहीं दिया सो नहीं दिया।

५९

१९२९ तथा १९३० के संगम पर लाहौरकी कांग्रेस हुअी। मैं भी गया था। पंजाबकी सर्दी और अूपरसे वर्षा — आनेवालोंके कष्टका कोअी ठिकाना नहीं रहा। अेक रोज मैं वापूके डेरे पर चला गया तो तुरन्त अन्दर बुला लिया गया। वे अकेले ही थे। मैंने सहज भावसे पूछा " . कहां है?" "बेचारा बहुत दुःखी हो रहा है। बहुत समझाया परन्तु मानता ही नहीं। रोये ही चला जा रहा है। भूल गंभीर रूप धारण कर लेती, परन्तु जल्दी ही संभल गया। कहता है 'भारी प्रायश्चित्त करूंगा'। यहांसे लौटकर जो कुछ करना हो करने पर राजी करनेकी कोशिश

कर रहा हू।" फिर मुझे सारा किस्सा सुनाया। मुझे अुस समय तो आश्चर्य हुआ कि मुझे यह सब किस लिअे कह रहे हैं। परन्तु बादमें मैंने सोचा कि बापूका कोमल हृदय अपराधीके हार्दिक पश्चात्तापसे कितना द्रवित हो जाता है और अेकके अुदा-हरणसे कैसे सुसस्कृत ढगसे वे दूसरोको शिक्षा देते है।

६०

लाहौर काग्रेसमें बापूकी लोकतत्री भावनाका प्रथम परिचय मिला। वे स्वय ब्रिटिश सत्ताके साथ औपनिवेशिक सम्बन्ध रखनेके प्रबल समर्थक थे। फिर भी चूकि काग्रेसजनोका भारी बहुमत अिस सम्बन्धका विच्छेद करनेके पक्षमे प्रगट हुआ, अिस-लिअे अुन्होने पूर्ण स्वाधीनताका ध्येय स्वीकार कर लिया।

६१

अिस अधिवेशनमें आगन्तुकोको जो कष्ट हुआ और आम तौर पर गरीब देशके निवासियोको सरदीके मौसममे यात्रा और आतिथ्य-सम्बन्धी जो शारीरिक और आर्थिक असुविधाअें होती हैं अुन्हे देखते हुअे बापूके सुझाव पर यह भी तय किया गया कि आयदा काग्रेसके अधिवेशन दिसबर-जनवरीके बजाय फरवरी-मार्चमें हुआ करे, ताकि ऋतु भी अनुकूल रहे और पडाल तथा ठहराने आदिका अितजाम भी बहुत खर्चीला न करना पडे।

६२

'यग राजस्थान' हम लोगोने बापूके आदेशानुसार बन्द कर ही दिया था। लाहौरमें यह भी तय हुआ कि अधिवेशनके बाद हम साबरमती पहुच जाय। तदनुसार १० जनवरी १९३० को मैं और भाअी शोभालालजी गुप्त सपरिवार साबर-मती आश्रममें पहुच गये।

अुस समय वहा लगभग दो सौ स्त्री-पुरुष थे। अिनमें से कुछ तो वे थे जो आगामी सत्याग्रहके सम्बन्धमे बापूसे सलाह-मशविरा करने और साथ ही आश्रम-जीवनका कुछ अनुभव प्राप्त करनेके लिअे कुछ दिनके वास्ते आने जानेवाले थे और बाकी स्थायी आश्रमवासी थे। नियम पालन अितनी सख्तीसे होता था कि जिससे महीने भरमें तीन गलतिया हो जाती अुसे आश्रम छोडना पडता था। अितने बडे समुदायमे स्वतन्त्रता, सयम, सफाअी, कार्यतत्परता, व्यवस्था, अनुशासन और सहयोग मेरे लिअे अेक मूल्यवान पदार्थपाठ था। शरीरश्रममें झाडू लगानेका मुझे हमेशासे शौक था। साबरमतीमें वही काम मिल गया और वह भी गाधीजीके सैर पर जानेके रास्तेकी सफाअीका। अिसके अलावा मुझे कताअी-बुनाअी सीखने, बहनो व बच्चोको हिन्दी पढाने और बापूके दफ्तरका कुछ काम दिया गया। मैं लगभग पाच महीने वहा रहा।

६३

बापू दिन रातके चौबीस घंटोंका यह विभाजन मानते थे कि ८ घंटे आराम अर्थात् सोनेमें, ८ घंटे शौच-स्नान, भोजन, व्यायाम, अुपासना, स्वाध्याय आदि शरीर व मनके स्वास्थ्यके खातिर निजी काममें और ८ घंटे सेवाकार्यमें लगाने चाहिये। आश्रमका कार्यक्रम अिसी बटवारेके अनुसार निश्चित होता था। सेवाकार्यका कमसे कम आधा भाग वे शरीरश्रम द्वारा सपन्न कराते थे। आश्रमके कार्यक्रममें सुबह शामकी प्रार्थना, कताअी-बुनाअी और अपने बर्तन, कपडे और स्थानकी सफाअी आप करना अनिवार्य था। अिन कामोंके लिअे नौकर नही रखे जाते थे। सफाअीमें पाखाना-सफाअी शामिल थी। प्रार्थना सामूहिक और सर्वधर्म-समभावके अनुरूप होती थी तथा भोजन सम्मिलित भोजनालयमें और मसाले, शक्कर और तली हुअी चीजोंसे रहित होता था। आश्रममें ब्रह्मचर्य, सत्य और अहिंसाका पालन, छुआछूत न मानना, खादी ही धारण करना, जेवर न पहनना और रोजनामचा लिखना सबके लिअे लाजिमी था।

६४

मैंने भी अिन पाच महीनोंका रोजनामचा लिखा था। अुसके कुछ अुद्धरण बापूके व्यक्तित्व, विचारों, प्रभाव और कार्य पर प्रकाश डालनेवाले होनेके कारण यहा दिये जाते है

११-१-'३० कअी वर्ष बाद जाडेमें आज प्रथम बार ठडे पानीसे स्नान किया। सर्दी लगनेके भयसे ठडे पानी जैसी बल अेव आह्लाददायक वस्तुसे दूर भागनेकी प्रवृत्ति आज छूट गअी।

पौने आठ बजे विद्यापीठके पदवीदान-समारभमें शामिल होनेको गया। रास्तेमें बापूजीका साथ हो गया। अुन्होंने हम लोगोके प्रकरणमें छगनलालजी जोशीसे व्यवस्था सबधी वार्तालाप किया, वह सुना। अुसी समय अेक छोटे बच्चेके प्रति अुनका व्यवहार देखकर नतीजा निकाला कि गाभीर्यके साथ जिन्दादिली भी होनी चाहिये।

६५

१२-१-'३० भोजनके बाद नवा बजे तक बापूजीके पास बैठा तकली कातता रहा और अेक अग्रेज महिलाकी अुनसे बातचीत सुनी। महिलाकी जिनेवा (स्विट्जर-लैंड) में पुस्तकोंकी दुकान है। वह वहा पूर्वी और पश्चिमी युवक-युवतियोंके परस्पर सम्मेलन और अन्तर्राष्ट्रीय विषयोंके अध्ययनके लिअे अेक छात्रावासके प्रश्न पर बापूजीका मन जानना चाहती थी। बापूजीने अत्यत स्पष्ट किन्तु अुतने ही शिष्ट शब्दोंमें अिस विचारको नापसन्द किया। अुनकी रायमें हमारे युवक अपनी सस्कृति जाने बिना यूरोप जाकर unhinged (डावाडोल) हो जाते हैं।

६६

१३–१–'३० विद्यापीठमे पहुचनेके कुछ क्षण बाद ही बापूजी वहा आ पहुचे। अुनसे काशी विद्यापीठके आचार्य नरेन्द्रदेवजीने प्रश्न किया कि काग्रेस कार्यमें राष्ट्रीय शिक्षण सस्थाओका क्या हिस्सा होना चाहिये? गाधीजीने अुत्तरमें बडा ओजस्वी भाषण दिया। यदि अहिंसात्मक युद्धके लिअे मर्मस्पर्शी अपील करना भडकाना हो, तो आज बापूने युवकोको खूब भडकाया। मूलमत्र यह था कि 'युवको, भारतके अुद्धारके लिअे मरनेकी तैयारी कर लो, पर मारनेका विचार तक न करना।'

६७

प्रार्थनामे बापूने आज शीतला रोग सम्बन्धी बातें बताओ। यह रोग शरीरकी गरमी निकालनेको होता है। अिसमें सिवाय छाछ या फलोके रसके कुछ न खाना चाहिये। कपडे रोज धोये बल्कि अुबाले जाय। लाल कपडा पहनाया जाय। सेवा करनेवालेके सिवा कोओ रोगीके कमरेमें न जावे। बच्चे सर्वथा अलग रखे जावें। धूपमें लिटाकर लाल काचमें से किरणें रोगीके शरीर पर डाली जावें या ठडे पानीमें भिगोकर निचोडे हुअे कपडेमें रोगीको लपेटकर अूपरसे अूनी कम्बलमें अुसे सुलावें।

६८

१४–१–'३० ३ बजेसे ४ बजे तक बापूजीके कमरेमें बैठा और तकली काती। भाओ शोभालालजीके टाअिप करनेके सम्बन्धमें जो राय जाहिर की गओ, अुससे सतोष हुआ और स्वच्छ काम करनेकी प्रेरणा मिली।

[यहा ११ मागोवाले अुस सुप्रसिद्ध पत्रके टाअिप करनेका हवाला है, जो बापूने नमक-सत्याग्रह आरभ करनेसे पहले वायसराय लार्ड अिर्विनको लिखा था और बादमें अगद नामसे प्रसिद्ध हुअे श्री रेनाल्ड्स नामक अग्रेज नौजवानके साथ भेजा था। अेक हाथ लगभग बेकार होने पर भी शोभालालजीने टाअिप अितना सुन्दर और शुद्ध किया था कि कही काट-छाट या विराम-चिह्नकी भी भूल नही थी। अिसीकी बापूने तारीफ की थी।]

६९

१६–१–'३० बापूजीकी अनुमतिसे पढने आओ हुओ कुसुम बहन (त्रिवेदी) को हिन्दी सिखाओ। यह बहन बडी जिज्ञासु और ज्ञानपिपासु होनेके साथ साथ समझदार और तत्पर प्रतीत होती है।

६ बजे अजनाके कपडे धोये। झूठी शर्म कहती थी, 'कोओ स्त्रीके कपडे धोते देखेगा तो क्या कहेगा?' पर कर्तव्यने अुत्तर दिया, 'सेवामें लज्जाका क्या काम?'

न्यायने और पुष्टि की, 'जो तुम्हारे लिअे सर्वस्व दे चुकी हो अुसको जरासा बदला देनेका पुण्य क्यो छोडते हो?'

६-२० पर सफाअीमें पहुच गया। ठडके समय मेहनतका काम और कृष्ण नायरजी जैसे सजीव सज्जनका साथ, क्या कहने?

७। से ८। तक प्रार्थनामें रहा। बापूजीने मेरे रोजनामचेके सम्बन्धमे अच्छे शब्द कह कर अच्छा नही किया। अुसे कअी लोग देखेंगे और अुसमे हैं कअी निजी बातें। अितनी जल्दी लोगोकी दृष्टिमें आना मेरे जैसे नये और छोटे आदमीके लिअे हानिकर भी हो सकता है।

[बात यह हुअी कि बापूने सबके लिअे डायरी लिखना अनिवार्य करके अेक बार सबको देख जाना जरूरी समझा। देख लेनेके बाद प्रार्थनामें अुन्होने मेरी डायरीको नमूनेदार बताया और अुसे देख लेनेकी सबको सूचना दी। फिर तो कअी भाअी-बहन मेरी डायरी पढने आने लगे। अिसीसे मुझे सकोच हुआ।]

७०

१७-१-'३० विद्यापीठमें बापूजीका छात्रालय-सम्मेलनमें भाषण था। यह आन्दोलन गुजरातकी अेक विशेष प्रवृत्ति प्रतीत हुअी। अिसमें राष्ट्रीय सस्थाओके अलावा दूसरे छात्रालयोंके प्रतिनिधि भी खासी सख्यामें थे। जिससे अिस प्रान्तमें राष्ट्रीयताका प्रभाव काफी मालूम होता है। बापूजीने छात्रालयो, छात्रो और गृहपतियोंके कर्तव्य बताये। सक्षेपमें अुन्होने कहा कि छात्रालयोके छात्रोमें जो अनीति, अराजकता और शौकीनी फैल रही है, अुसे कडे अनुशासन और सुव्यवस्था द्वारा दूर करके अुन्हें सच्चरित्रता और राष्ट्रसेवाके केन्द्र बनाना चाहिये और छात्रो और गृहपतियोके बीच पुत्र-पिता जैसे सम्बन्ध होने चाहिये।

दो विनोद भी बापूने मजेके किये। छात्रालयोमें सजाके प्रश्न पर अुन्होने कहा कि लडकोको सोटी (लाठी) लेकर गृहपतियोको पीटना चाहिये और यह कि, 'बाल वे ही लडके रखें जिन्हे लडकियोको मोहित करना हो। मैं तो किसी लडकीको अिसी कारण मोहित नही कर सका'। अवाछनीय प्रश्नोको अुडा देने और अप्रिय सीखको प्रिय बनानेका यह अच्छा ढग है।

७१

(आज प्रार्थनामें) बापूजीने आगतुकोके लिअे प्रार्थनाका महत्त्व समझाया। सार यह था कि किसी भी रूपमें साधारणत हर समय और नियमके तौर पर रात्रि और दिनके अन्तमें प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये, क्योकि अिससे जीवन धर्ममय और शान्तिमय रहता है। बात बिलकुल ठीक है।

* * *

(अुपवासके कारण) अजनाको अधिक घबराहट होनेसे बापूके पास ८।। बजे जाना पडा। अुन्होंने कहा, 'अुपवासके पहले तीन दिन कष्टके होते हैं, घबराना नहीं चाहिये। अेक औंस पानीमें ५ ग्रेन सोडा डालकर चम्मचसे पिलानेसे घबराहट मिटेगी। पसीना आना अच्छा लक्षण है। धूपमें खूब रहना चाहिये।' वे खुद ही देखने आना चाहते थे।

७२

१८-१-'३० अजनाके स्वास्थ्यके सबधमें बापूजीके पास गया तो देखा कि वे किसीके अग्रेजी पत्रका हिन्दीमें शोभालालजीसे अुत्तर लिखवा रहे थे। बीमारकी बात सुननेको वे तुरत रुक गये। आजसे मैंने भी निश्चय किया कि हिन्दी समझनेवाले भारतीयोंसे हिन्दीमें ही पत्रव्यवहार करूंगा और बीमारकी सेवाका अधिक ध्यान रखूंगा।

७३

५ बजे डॉक्टर (कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर) प्रार्थना-स्थानमें आये। बापू और अुनकी जोडी भली मालूम होती थी। भारतकी अिन दो विभूतियोंने देशका सिर अिस पराधीन अवस्थामें भी अूचा कर दिया। कवीन्द्र दो तीन ही मिनट बोले। परन्तु जो बात कही वह सोलह आने सही थी। अुनका सन्देश यह था कि अब हमें बकवास करना छोडकर अनुशासन-पूर्वक सत्यके लिये त्याग अेव परिश्रम करना चाहिये, क्योंकि अैसे ठोस कामसे ही देश स्वाधीन होगा।

* * *

८। बजे घर आये। रास्तेमें विचार आया कि गांधीजी जैसा कामवाला आदमी जब नये-नये और छोटे-छोटे कर्तव्य तक पूरे कर लेता है, तब हमारी कर्तव्य-विमुखता और सुस्तीके लिये क्या औचित्य है?

७४

१९-१-'३० ९ से ९।। तक जेठालालभाअीके साथ टट्टियां साफ कीं। अिस सर्वोच्च समाज-सेवाके कार्यमें मेरा यह पहला दिन था। लोग व्यर्थ ही अिससे घबराते हैं। काम तो बडा रोचक है। हां, यह अवश्य खयाल हुआ कि शौच जानेवाले अधिक सावधानीसे काम लें तो सफाअी अधिक अच्छी और सुनीतेसे हो सकती है।

* * *

आज प्रार्थनाके पहले पू० बा अजनाकी तबीयत देखने आअी थीं। अुनकी नम्रता और विनय देखकर अीर्षा और अपने पर लज्जा होती थी।

७५

२०–१–'३० . १२॥ बजे बापू अजनाको देखने आये। मौन होने पर भी रोगियो और दुर्बलोंकी अितनी चिन्ता! अवश्य ही अुनके जीवनकी भित्ति मनुष्यत्व और कर्तव्यनिष्ठा पर है।

७६

२१–१–'३० हा, आज १२॥ बजे बापू आये और वे नीबू और शहद भी बन्द कर देनेकी सलाह अजनाको दे गये। वैसा किये बिना सच्चा अुपवास नहीं होता। वे जीभकी परीक्षा करना भी बता गये। गुलाबकेसे रंगसे स्वास्थ्य प्रगट होता है, सफेदमें कुछ खराबी और काली पीलीसे बहुत रोग जाहिर होता है।

७७

२२–१–'३० : ५। बजे (सुबह) प्रार्थनासे लौट कर लेटा ही था कि काशी-नाथजी आ गये। बापूकी अिच्छा और अिनका आग्रह है कि 'हिन्दी नवजीवन' की भाषा अच्छी बनानेमें मैं भी हाथ बटाअू। आज मुख्य लेखका 'यंग अिंडिया' से अनुवाद मैंने ही किया। मेरी रायमें हिन्दी अच्छी और लोकप्रिय तभी बन सकती है जब अुर्दूका अुसमें सम्मिश्रण रोका न जावे। . . विदेशी भाषामें भी अितनी अच्छी महारत वस्तुत अेक बडी बात है। पर बापूके लेखोंमें प्राण और मौलिकता ही मुख्य गुण हैं। शब्दोंका माधुर्य, लाघव और ठीक ठीक प्रयोग गौण बात हैं। क्रान्तिकारी दलकी प्रशंसा और अुन्हें मूडनेका ढंग बहुत पसंद आया।

७८

९॥ बजे नारायणदासजी गाधी और पं० तोतारामजीके साथ पाखाने साफ किये। पहले सज्जनकी बापूजीने अेक दिन तारीफ भी की थी। अुनके त्याग, परिश्रम और नियमितताका अुल्लेख किया था। अुनकी सज्जनता, गर्वहीनता, शात और गंभीर स्वभावका तो मुझे भी आज परिचय मिल गया। पण्डितजी दूसरी किस्मके आदमी हैं। ये अफ्रीकाके मंजे हुअे हैं और मेहनतसे कमाअी और बनाअी हुअी शरीर-सम्पत्ति बुढापेमें भी रखते हैं।

७९

७। बजे तक बासे बातें की। बाकी मृदुलता देखकर आज माताकी याद आयी। थोडी आन्तरिक पीडा भी हुओी। ८। बजे तक प्रार्थनामें रहा। आज वहाका दृश्य गभीर था। बापूकी गिरफ्तारीकी कुछ जोरकी सी अफवाहे है। अत अुनके सम्बन्धमें अुन्होने कहा, 'गिरफ्तारी हुओी तो अच्छी ही बात होगी। अिस सम्बन्धमें दु ख या चर्चा न होनी चाहिये।' परन्तु हुओे दोनो ही। मन ही मन भावी वियोगकी कल्पना हुओी। गला भी भर आया। अुसके बाद बापूने छगनभाओी और रमणीकलालजीके आश्रमसे अलग रहनेकी घोषणा की। पहले अपने आपको सारे नियमो और अुनके पालनकी कडाओीमें पार अुतरनेमें असमर्थ पाते है और दूसरे अिनसे सहमत नही हैं। बापूने ममता और अनासक्तिके अद्‌भुत समिश्रणको प्रदर्शित करते हुओे अिन्हे अनुमति दी। तीसरा विषय था २६ जनवरीका। अुस दिन अेक समय फलाहार करने, आत्मशुद्धि करने और खूब कातनेका आदेश दिया गया। अेक डायरीमें बाल गगाधरके प्रसगमें बापूकी टीकाका समाधान किया गया था। बापूने अपनी भूल सदा स्वीकार करने और भूल न हो वहा किसीकी परवाह न करने पर जोर दिया।

८०

२३-१-'३० (प्रात) ५। बजे तक काशीनाथजीके साथ बापूकी प्रतीक्षा करता रहा। अिस बीचमें मौलवी सुरेन्द्रजी (वे रहते अिसी भेषमें जो है।) की मस्त गीत रटन, जो साबरमतीके किनारे अुनके 'कल्पवृक्ष' के नीचे चल रही थी, सुनी। वे बडे विनोदी, तत्त्वज्ञानी और फक्कड जीव है। जब बापू अपने 'पुस्तकालय' से — हुजूरने अपनी टट्टीको कुतुबखाना बना रखा है — निकल कर आये, तो ५।। बजे तक अुनसे 'हिन्दी नवजीवन' के सम्बन्धमें बातें हुओी। वे मानते हैं कि सुन्दरताकी ही नही, लोकप्रिय बनाने — मुसलमानो और अुर्दू-भाषी लोगोमें प्रचारकी दृष्टिसे भी 'हिन्दी नवजीवन' की भाषामें अुर्दूका समावेश होना चाहिये।

५। बजे परोसा लाने पहुचा। पडित खरेजीकी धर्मपत्नी लक्ष्मी बहनका स्वभाव बडा अुग्र सुना था। पर वे तो बडे सौजन्यसे पेश आयी। बात यह है कि लोग अपनी छोटी-छोटी सुविधाओके सामने व्यवस्थाकी अनेक और बडी कठिनाअियोका भी लिहाज नही करते। अिसी कारण कुछ बहनोमें गगा बहन जैसी कुशल, कर्तव्य-परायण और योग्य नेत्रीके प्रति भी थोड़ा असतोष है। अजनाने तो अुनमें बडी मुरव्वत देखी। . . अिस बीचमें मीराबहन और बा आओी। मीरा तो वास्तवमें 'यथा नाम तथा गुणा' वाली कहावतको चरितार्थ करती हैं। यह बहन कितनी सरल-चित्ता, सेवाव्रती, हसमुख और तपस्विनी तथा त्यागिनी है?

८१

८। वजे तक प्रार्थनामें रहा। आज नारायणदासजी गांधीके मंत्री बनाये जानेकी सूचना दी गअी। बापूने बताया कि अिस व्यक्तिके धन और अलग भोजन-व्यवस्था रखते हुअे भी यह पद अिस कारण दिया गया है कि अिनमें अन्य गुण विद्यमान हैं। ये दो त्रुटियां भी अुनके अपने कारण नहीं हैं। धनके वे ट्रस्टी मात्र हैं और चौका वे अपने वृद्ध पिताके कारण रखनेको बाध्य हैं। ये पिता अपने चार पुत्र आश्रमको अर्पण कर चुके हैं। अैसे अुपकारका लिहाज करना ही चाहिये। दूसरोंके प्रति अुदारता और अपने साथ कठोरता, यह गांधीजीके व्यवहार-शास्त्रका अेक खास सूत्र मालूम होता है।

८२

२४-१-'३० ७। तक सड़क सफाअी की। आज कप्तान मथुरादास भाअी थे। ये अपने ढंगके अेक ही आदमी हैं। सिपाहीकी भावना, अविश्रान्त परिश्रम और कड़ा अनुशासन, ये सीखना हो तो अिनसे सीखें।

३ वजे तक बापूजीका प्रवचन सुना। पूर्ण स्वराज्य दिवस मनानेकी तैयारियोंके सम्बन्धमें बोलते हुअे अुन्होंने बताया कि स्वर्गीय मगनलालजी गांधी केवल आश्रममें अुत्पन्न हुअी चीजें ही खाते थे। हमें कमसे कम अुपवासके दिन तो यह नियम पालना चाहिये। झंडेके बारेमें कहा कि, "देशमें अन्यत्र तो झंडा फहरानेकी मैंने अनुमति अिसलिअे दी है कि अुससे वातावरण पैदा करना अभीष्ट है, परन्तु आश्रममें तो वह है ही। यहां झंडा गाड़नेका अर्थ यह है कि सरकार हमें और आश्रमको 'जमी-दोज' करे तो भी झंडे पर हम अुसे कब्जा नहीं करने देंगे। अितनी तैयारी अभी नहीं है।" पड़ोसके गांवोंमें सेवाकार्यके लिअे जानेका प्रस्ताव अुन्हें पसन्द आया, परन्तु अिस शर्त पर कि कुछ लोग अुसे ले लें और दूसरे समय समय पर सहायता दें। मेरे प्रश्नों पर जेल-जीवनके विषयमें बापूने अुत्तर दिया कि मुख्यतः तो वहां हमारा व्यवहार विवेक पर निर्भर रहना चाहिये। वैसे गाली-गलौज, मारपीट, अमानुषिक व्यवहार, अखाद्य भोजन, अत्यधिक काम और सरकारी सत्ता मनवानेके विषयों पर सत्याग्रह किया जा सकता है। अध्यक्ष पटेलके त्यागपत्र न देनेको अुन्होंने पसंद नहीं किया, परन्तु वे अिसमें रुपये या पदका लोभ नहीं मानते।

८३

२५-१-'३० ८॥ तक प्रार्थनामें रहा। वहां बापूने भगवानभाअीकी पुत्री गीताके प्रातःकालीन देहावसानके प्रसंगको लेकर मृत्यु पर प्रवचन किया। सार यह था कि जन्म और मृत्यु समान घटनाअें हैं। न अेक पर हर्ष और न दूसरे पर विषाद होना चाहिये। दोनों ही अवसरों पर साधारण काम बराबर चलता रहना चाहिये।

८४

२६-१-'३० सुबहकी हाजिरी (प्रार्थनाकी) रावजीभाओी पटेल लेते है। ये अूपरसे बडे रूखे और बेमुरव्वत दिखाओी देते है, मगर हृदय सहानुभूतिसे भरा है।

* * *

९॥ बजे झडा फहराने और राष्ट्रीय गानके समारभमे शामिल हुआ। बापूजीने नामके बजाय प्रत्येक आश्रमवासीका नम्बर रखनेका अभिप्राय समझाया। भारतके बडे जेलके कैदियो और स्वातन्त्र्य-सग्रामके सिपाहियोकी हैसियतसे नम्बर हमारे लिअे अधिक गौरवास्पद अेव अुपयुक्त चीज है।

* * *

५॥ बजे तक राष्ट्रीय घोषणाकी रस्ममें शामिल हुआ। बापूजीने पहले हिन्दी और फिर गुजरातीमें घोषणा पढकर सुनाओी। अिससे पहले मजदूर बहनोसे दो शब्द कहे। अुनकी सादगीकी प्रशसा और हम लोगोके आडबर पर लज्जा प्रगट करते हुअे अुन्हे अैसे प्रसगोमें भाग लेनेको कहा। घोषणा पर सम्मति लेने हुअे कहा, 'बिना समझे कोओी हाथ न अुठाये। बालक तो राय देनेके लिअे समर्थ ही नही है। यह मजाक नही है, आजादीके लिअे जान देनेकी प्रतिज्ञा है।'

७ बजे तक शोभालालजीसे बातें की। अुनके देरसे काम पर पहुचने पर बापूजीने जो अुपदेश दिया वह ग्राह्य था। सिपाही तो जगह पर मौजूद मिलना ही चाहिये। वे सुनाते थे कि आज जापानी हाओी कमिश्नरके पैबन्द लगे हुअे जूते पर बापूजीने बडा हर्ष प्रगट किया और अुसके १०० रुपये मासिकसे भी कम वेतनके साथ भारतके कलेक्टरकी २५०० मासिक तनखाहका मुकाबिला किया। पर कोरियाके साथ जापानकी बेअिन्साफी पर असतोष भी बताया।

* * *

८ से ८॥ छगनभाओी जोशीकी धर्मपत्नी रमा बहन अजताके पास आओी थी, अुनसे बातें की। यह बहन बहुत क्रियाशील और हसमुख है। पतिदेव अुतने ही शान्त और गभीर है।

८५

२७-१-'३० ८॥ बजे प्रार्थनासे लौटा। आजका भजन बहुत सरस था। 'अजहु न निकसे प्राण कठोर,' दादूने अिसमें आत्माके परमात्मासे वियोगकी पीडा भर दी है। अब भी अिसके भाव हृदयमें खेल रहे है। परन्तु थोडी ही देर बाद जब बापूने डायरियोकी आलोचना आरभ की तब यह आनद शोकमें बदल गया।

मेरा आत्मीय है। परन्तु अुसने यहा अपने व्यवहारमें जिम्मेदारीसे काम नही लिया, नियमोका स्वय पालन नही किया और दूसरोकी टीका करके डायरी द्वारा बापू तक पहुचा दी। अिसकी वाचालता, कोरा बुद्धिवाद और लापरवाही जैसे घरमें सन्तापके कारण है, वैसे ही बाहर अपयशके अुत्पादक भी है।

८६

२८–१–'३० बापूजीने सलाह दी कि अुपवासीको नीद न आवे तो अुसे खुलेमें सुलावे और अुलटी पर तो सोडेका पानी देना ही दवा है।

* * *

८। प्रार्थनामें बज गये। आज बापूजीने अिस आक्षेपका अुत्तर दिया कि आश्रममें बौद्धिक विकास नही होता। अुदाहरणमें अुन्होने तुलसीभाअी नेपालीका जिक्र किया। अुनका कहना था कि केवल पुस्तक-ज्ञानसे अेक बाह्य वस्तु दिमागमें भर जाती है, विचारकी अुत्पादक शक्ति नही बढती। यहा जो वातावरण और शिक्षा है अुसमें छोटे-छोटे कामसे बडे तकमें मस्तिष्कका रचनात्मक व्यायाम होता है। हा, अेक दूसरेसे परिचय करने, नये आदमीको सहायता देने आदि सम्बधी त्रुटिया अवश्य यहावालोको दूर करनी चाहिये।

* * *

२९–१–'३० आज धीरू जोशी आदिके अुत्पातोकी शिकायत थी। बापूजीने बडी मिठास और धीरजसे अुन्हे समझाया। लडको पर असर हुआ।

८७

३०–१–'३० आज गगाबहन झवेरीसे बातें हुअी। यह महिला अेक सम्पन्न घरानेकी सुसस्कृत विधवा है। कार्यशक्ति और नि सकोचता अिनकी विशेषताअें मालूम हुअी।

* * *

८। तक प्रार्थनामें रहा। आज बापूने अेक डायरी पर आत्म-परिचय लिख रखने और दूसरी कचरा जगह जगह पर न डालनेकी बात कही। अुन्हीकी परिभाषामें 'कचरे'का अर्थ है अेक चीजको अुसके स्थानके अलावा दूसरे स्थान पर रखना। आजका भजन रामनामकी महिमा पर था। अच्छा था। बालकोबाजी यहाके तपस्वियो, मुनियों और ज्ञानियोंमें से है।

८८

३१–१–'३० ८ बजे तक पाखानेके खड्डे खोदे। काम परिश्रमका तो है, परन्तु बहुत कठोर भी नही है। शिक्षित लोग आलस्य, भय अथवा झूठे अभिमानसे शारीरिक मेहनतसे बचने और अनेक रोगोंमें फसते है।

१२॥ से ४ तक बापूजीके पास रहा। आज अिग्लैडके मजदूर दलके अेक नेता और पार्लियामेंटके सदस्य कमाडर केनवर्दीकी बातचीत हुअी। ३॥। बजे तक लगभग सारे भारत-सबधी मामलो पर चर्चा हुअी। आदमी होशियार मालूम हुआ। बापूजीके विचारोका विस्तृत पता अैसे अवसरो पर अच्छा लगता है। राष्ट्रीयताके नाम पर कमाडर बहुत बिगडे। यूरोपमे हिंसावादके आधार पर रची गअी राष्ट्रीय भावनाने वस्तुत बहुत अत्याचार किया है। परतु भारत अेक आदमीका भी खून किये बिना ही स्वराज्य लेना चाहता है। गाधीजी तो राष्ट्रीयताके सिरसे यह कलक दूर कर अेक नअी ही चीज दुनियाको देनेका प्रयास कर रहे है। सोना पहनने और रुपया गाडकर रखनेकी भारतीयोकी आदतके विषयमें बापूने कहा कि असख्य गरीब हिन्दुस्तानियोके पास सोना-चादी तो क्या, लोहा भी नही है। थोडेसे लोगोके पास है, तो अुन्हे हम शिक्षा अथवा कानून द्वारा रास्ते पर ले आयेंगे।

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर गाधीजीने कहा कि, 'मुझे तो न भीतरी लडाअीका और न बाहरी आक्रमणका डर है। यदि दोनो हो भी तो गुलामीसे भले है। वैसे जनसाधारणमें धार्मिक द्वेष नही है। अुनके हिताहित समान है। झगडा पढे-लिखोमें है। सो मै तो नौकरिया सारीकी सारी मुसलमानोको देनेको तैयार हू। कानून भी हम अैसा नही बनावेंगे जिसका मुसलमान जातीय रूपमें विरोध करे। आपसके झगडोको शान्त करनेमें हम सेनाकी मदद नही लेंगे, भले ही गृहयुद्ध हो जाय।'

राष्ट्रभाषाके बारेमें बापूजीने कहा, "सर्व साधारणके लिअे तो प्रातीय भाषाअे ही रहेगी। किन्तु पढे-लिखे लोगोके लिअे हिन्दी राष्ट्रभाषा होगी।" अनिवार्य और नि शुल्क प्रारभिक शिक्षाके बारेमें गाधीजीकी राय यह थी कि अग्रेजी ढगकी तालीम तो हानिकर और अितनी खर्चीली है कि सबको दी ही नही जा सकती। परन्तु हम पुराने भारतीय ढगसे देंगे और दे सकते है।

किसानोकी गरीबी दूर करनेके लिअे कमाडरने मुर्गी पालने और बगीचे लगानेके सहायक धधे बताये। बापूजीने कहा, "पहला शिक्षाके अभाव और दूसरा भूमि पर स्वामित्व न होनेके कारण तुरत सभव नही है। चरखे जैसी सुलभ चीज किसानोके लिअे दूसरी नही है।"

राष्ट्रीय ऋणके बारेमें कहा, "मैंने सब ऋण चुकानेसे अिन्कार नही किया है। मै तो अुसकी निष्पक्ष जाच कराना चाहता हू। हा, मेरे खयालसे यह कर्जा अधिकाशमें भारतके हितके लिअे नही लिया गया है। अिसके रहते स्वराज्य मिलने पर भी हम गरीबोकी भलाअीके लिअे रुपया नही बचा सकते।"

गोलमेज परिषदके प्रसग पर गाधीजी बोले, "बहुतसे अग्रेज मानते है कि अग्रेजी राज्यने भारतका हित किया है। मैं मानता हू और सच्चे अग्रेज लेखकोके कहनेसे मानता हू कि अिस राज्यने हमारा सत्यानाश किया है। अग्रेज जब तक यह न मान लें तब तक परिषदसे क्या लाभ? मैंने जो दस मागें पेश की है अुनके

मजूर कर लेनेसे अंग्रेजोकी सच्चाअीका सबूत मिल जायगा। ये मार्ग भी निर्विवाद है। सब देशवासी अिन्हे अेकमतसे तलब करेंगे।"

कमाडर साहब १५ वर्षमें सेनाका भारतीयकरण करनेका अेकमात्र रचनात्मक प्रस्ताव लेकर आये थे। अंग्रेजोकी कठिनाअियोका अुन्हे खयाल था, परन्तु भारतीय परिस्थितिको सर्वोपरि स्थान देते नही प्रतीत होते थे। हाजी विलमें अुन्हे जातीय द्वेषकी बू आती थी। बीकानेरके किसी कृषि-विभागके अफसरने अुन्हे बहका दिया था कि धार्मिक आपत्तिके कारण यहाके किसान आलू नही बोते और खाते।

देशी राज्योके बारेमें कमाडर साहब बहुत दिलचस्पी दिखाते थे। पटियाला, अलवर, बीकानेर और जामनगर जैसे छोटे नरेशोके मेहमान रह चुके है। अिनके परिश्रम, समयका लिहाज और शासन-सुधारकी तारीफ करते थे। बापूजीने कहा, "रियासतोमें अधिकाश बातोमें लोगोकी हालत अंग्रेजी अिलाकेसे खराब है, क्योकि अपने राज्योमें अंग्रेजोकी जिम्मेदारी सीधी होनेसे वे बदनामीसे डरते है और अच्छी हालत दिखानेका प्रयत्न करते है। रियासतोमें वे अप्रत्यक्ष शासन करते है। जो चाहते है, करा लेते है। बुराअी नरेशके सिर होती है। भावी भारतमें राजा रह सकते है, परन्तु प्रजाको अधिकार तो अुन्हे देने ही पड़ेंगे।" अित्यादि अित्यादि। अिस सारे समयमें से लगभग दो घटे मैंने तकली पर काता। वल्लभभाअी भी थे। अिनमें विनोद, व्यग और गुस्सा खूब मालूम होते है। जब कमाडर साहबने भारतीयोकी रिश्वतखोरीका जिक्र किया तो सरदार झुझलाये और कहने लगे, 'अंग्रेज सिविलियन भी खूब हाथ रगते है। पोलिटिकल अेजेंट लोग तो अेक सालमें ही अुम्र भरका सामान अिकट्ठा कर लेते है।'

* * *

८। बजे तक प्रार्थनामें रहा। वहा बापूजीने अेक अुदाहरण देकर बताया कि पाखानेमें जोर करनेसे गुदाद्वारमें चीरा पड जाता है और वह गभीर रोग है।

१०

१-२-'३० आज (प्रार्थनामें) बापूजीने और के अुदाहरण देकर कहा कि पहले दृष्टिदोषके कारण ब्रह्मचर्य और दूसरे अेक मासमें दो बार प्रार्थनामें समय पर आनेका नियम भग होनेके कारण आश्रमसे अन्यत्र चले गये। अिन दोनोने अपना कुसूर खुद बताकर अच्छा किया। विकार सबको होता है, परतु वह बुरा लगनेके बजाय अच्छा लगने लगे तो रोग न रहकर अपराध बन जाता है। बुखार और पचजा सबध बताते हुअे बापूने कहा कि कच्ची भाजी खूब लेना चाहिये। भात या तो न खाया जाय या खूब चबाकर खाया जाय। रोटी भी खूब खस्ता होनी चाहिये। दाल और पाके शाककी जरूरत नही। दूध और दही लिया जा सकता है। सुबह खाली पेट खूब गरम पानी पी लेना चाहिये।

९१

२–२–'३० ४ बजे तक बापूजीके यहा रहा। अेकातमें बातें हुअी। . और . . के वैमनस्यके विषयमें अुन्हे अलग अलग रखनेके पूर्व बापू अुनसे कल बात करेंगे। अुन्हे अपनी मेल करानेकी शक्ति पर बहुत विश्वास है। . बीमेको वे अनावश्यक समझते है। . . के प्रसगको लेकर ने जब बापूसे कहा कि मुझे पहलेकी तरह विकारमें आनन्द तो नही आता पर विकार तो आते है तो बापू बोले, 'आखें नीची रखकर स्त्रियोसे सपर्क रखना चाहिये। सपर्क अभी कुछ काल तक बन्द रखा जाय तो और अच्छा।' अिस विषयमे बापूने भाअीकी ताजा भूल और अुपवासका और . भाअीके पतनका अुल्लेख करते हुअे कहा कि साधना-कालमें बहुत सावधान रहना चाहिये।

९२

३–२–'३० आज (प्रार्थनामें) बापूजीने तीन बातें कही। अेक तो सबको अक्षर सुधारनेकी, दूसरी हिंदी शुद्ध करनेकी और तीसरी सस्कृत श्लोकोका हिन्दी अनुवाद करके अुन्हे प्रार्थनाका माध्यम बनानेके सबन्धमें राय मागनेकी।

* * *

४–२–'३० आज (प्रार्थनामें) बापूजीने सफाअी पर जोर दिया। अुनके खयालमें प्रत्येक राष्ट्रीय सिपाहीको अपने फटे कपडे सीना जरूर आना चाहिये।

९३

५–२–'३० अिसी बीचमें (१२॥ से १) बापू आये और . और . के वैमनस्यके सबधमें अपना अमूल्य समय लगा गये। मेरे लिअे तो शर्मकी ही बात है कि अिन कामोमें अुन्हे कष्ट हो।

आज (प्रार्थनामें) बापूजीने तीन बातें कही। अेक तो पाखानेकी सफाअी अच्छी होने पर जोर दिया। अिस सबधमें पाखानेकी बाल्टीमें घास डालनेकी विधि बताअी। दूसरी, बापूके लिहाजसे कोअी चेचकका टीका लगानेमें परहेज न करे। तीसरे सरकार अुन्हे गिरफ्तार करके आश्रम जब्त करे तो सब स्त्री-पुरुषोको डटकर रहनेकी तैयारी कर लेनी चाहिये।

९४

६–२–'३० : १०॥ तक पडित खरेजीसे हिन्दी वर्गोंके वारेमें वात की। आदमी जितना गुणी है अुतना ही सरल है। बीमार बच्चोंकी जिस प्रेम और धीरजसे सेवा करते है वह अनुकरणीय है।

आज काशीनाथजीने सुनाया कि वापूजीकी रायमें हम लोगोका अनुवाद रद्दी है। परतु जब मालूम हुआ कि महादेवभाओी जैसे पुराने और योग्य साथीका अनुवाद भी अुन्हें पसन्द नही आया तो जरा सतोष हुआ।

* * *

८–२–'३० : वापूने (प्रार्थनामें) पाखानोकी सफाओके नियम पढकर सुनाये। प्रार्थनामें देर करके आनेका अर्थ गैरहाजिरी वताया। चप्पलोकी चोरियोको हमारे परिग्रहके प्रति अुचित ओीर्ष्या या श्रोषका कारण वताया। थैलियोंमें जूते रखनेकी सलाह दी।

* * *

९–२–'३० : वापूजीकी भोजन अेव स्वास्थ्य-संबंधी पुस्तकोकी सूची बनाओी। . . . मालूम होता है वापूने शरीर-शास्त्रका खूब अध्ययन किया है।

* * *

१०–२–'३० आज प्रार्थनामें वापूने राष्ट्रपति जवाहरलालजीके परसो आश्रममें आने पर सम्मानपूर्वक नही, प्रेमपूर्वक स्वागत करनेकी सूचना दी। दूसरी बात नित्य डायरी लिखने और शिक्षकको दिखाने पर की गओी विद्यार्थियोकी ओरकी आपत्तिके सवधमें कही। जो नियम पालन न कर सकें वे आश्रमसे जानेको स्वतत्र हैं। . . के जिस कथनमें कितनी अधभक्ति थी कि जिस पुस्तक पर वापूके हस्ताक्षर हो अुसीमें अेक साधारण शिक्षकके भी दस्तखत वे सहन नही कर सकते।

९५

११–२–'३० ४ बजे तक बालवर्गमें रहा। आज वहा अेक दुखद घटना हो गओी। अुसकी पीडा अिस समय तक विद्यमान है। लड़कोका शोर बन्द नही हुआ। अुधर गगावहनको अेक बच्चेका कान अैंठते देख लिया। अुन्होंने शायद प्यारसे अैंठा होगा। मैंने मनुका कान आवेशमें मल दिया। वह खूब रोया। रसिकको हिमायत पर ले आया। रसिकका यह कार्य कहा तक साधिकार चेष्टा थी, यह नही कहा जा सकता। परतु मेरा वल-प्रयोग नि सदेह गर्हित कार्य था। गगावहनसे तो क्षमा माग चुका हू। और क्या क्षतिपूर्ति करू?

(अिस पर वापूने मेरी डायरीमें लिखा . "और कुछ करनेका नही है। अैसा दड द्वारा कभी न दिया जाय।—वापू")

९६

आज (प्रार्थनामें) बापूजीने कहा कि गलती चाहे अेक काममें तीन हो अथवा भिन्न भिन्न कामोंमें, वे सब गिनी जायगी। कर्तव्यकर्ममें जाग्रत रहना, प्रेमपूर्वक सेवा करना अथवा भावसहित भजन करना अेक ही चीज है। तीनोंसे भगवान बुद्धियोग देते है। . . केवल अतिथियोंको बुलाने पर भी अन्य आश्रमवासी बापूसे वार्तालापके समय क्यों वहा चले गये?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें यह लिखा "अतिथियोंके पीछे आना अनुचित था। अैसी जिज्ञासा अच्छी नही है।")

९७

१२–२–'३० आज विनोबा भावेजीने व्यक्तिगत और सामुदायिक प्रार्थनाका भेद बताया। अिनके कथनानुसार पहलीसे अीश्वरकी प्राप्तिके लिअे अपनेको और दूसरीमें दूसरोंको भी सहायता मिलती है। अजना स्वभावके वश बेकार तो अेक घडी रहती नही। बच्चा यह सहन नही करता कि अुसकी माता अुसकी ओर ध्यान न दे। फलत वह चिढती है और वह रोता है। मै अुद्विग्न हो जाता हू। क्या किया जाय?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें लिखा "अिसकी औषध बच्चोंकी सच्ची तालीम है।")

९८

. ११ तक अजना सहित आचार्य विनोबाजीका प्रवचन सुना। अुन्होंने चरखे और तकलीका तुलनात्मक महत्त्व बताते हुअे पहलेको यज्ञका और दूसरीको अखड अुपासनाका साधन बयान किया। कामके लिहाजसे अिन्हे क्रमश खरगोश और कछुअेकी अुपमा दी। आदमी बहुत सुलझी हुअी तबीयतके मालूम हुअे। . बालवर्गमें दस मिनट देरसे पहुचा। अिसकी क्षतिपूर्ति अुधर १५ मिनट अधिक लगाकर की। पर क्या यह समाधानकारक बात हुअी?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें लिखा. "हा।")

९९

(प्रार्थनामें) मेरे प्रश्न पर बापूने अिस प्रवृत्तिको नापसन्द किया कि जिस रोजनामचेमें अुनके हस्ताक्षर हो अुसमें दूसरे किसी साधारण मनुष्यके न हो।

[मैंने डायरीमें नमक-सत्याग्रहके बारेमें बापूके अिरादोंका अुल्लेख करते हुअे कुछ जिज्ञासा प्रगट की थी। अुसके अुत्तरमें अुन्होंने लिखा "इसके बारेमें वर्किंग कमिटी (कांग्रेस कार्यसमिति जो अुन दिनों साबरमती आश्रममें ही हो रही थी) का काम खतम होने पर पूछो। — बापू"]

१००

१४–२–'३० घाट पर प्रेमाबहनसे भेंट हुअी। यही अेक वीरांगना-सी आश्रमकी बहनोंमें दिखाअी देती है।

९ बजे तक बापूकी राष्ट्रीय नेताओंसे बातचीत सुनी। वायसरायके भवनको खाली कराने, दिल्लीके किले पर झंडा गाडने, जंगलोंको काटकर लकडियां लाने, ताडीके वृक्षोंको नष्ट करने आदिके प्रस्तावोंमें जनताके लिअे तथ्यकी और सबके साथ संबंध रखनेवाली बात न होनेसे बापूने तो नमककी खानों पर धावा बोलनेका ही निश्चय सर्वोत्तम बताया।

१०१

१५–२–'३० ७। तक बापूके साथ घूमा। डा० हार्डीकरसे वे राष्ट्रीय झंडेके रंगोंमें परिवर्तन करनेकी बाबत बातें कर रहे थे। वे खुद सिक्खोंको खुश करनेके लिअे लालके स्थान पर भगवा रंग रखनेको तैयार हैं। अेक दूसरे महाशयने कअी प्रश्न पूछे। अुत्तर झटसे और मजेदार मिलते थे। (प्रार्थनामें) बापूने कहा कि जिन लोगोंने सत्याग्रहके लिअे नाम दिये हैं, अुन्हें अेक ओर तो जेल, कोड़े और फांसी या गोली खानेको और दूसरी ओर जो भी काम बता दिया जाय वह करनेको तैयार रहना चाहिये।

* * *

१६–२–'३०. बापू मजूमदारसे कहते थे कि हम यहां संग्राम करेंगे तो संसारका ध्यान अपने-आप आकर्षित होगा। हमारे विदेशोंमें प्रचार पर शक्ति और रुपया खर्च करने पर भी वे अुसे अेकपक्षीय वस्तु समझेंगे।

१०२

१८–२–'३० ११ तक बापूसे नेताओंका शंका-निवारण सुना। आज तो अहिंसाका रुद्र रूप प्रगट हुआ। बापूके कहनेका सार यह था, "मैं जब तक नमककी खान पर धावा न बोल दूं, तब तक दूसरे परिस्थितिका अध्ययन करें, अच्छा मोरचा ढूंढें। शराब, विदेशी वस्त्र, जंगल, लगान जो अुपयुक्त हो अुसीकी तैयारी करें। चरखा संघका रुपया और कार्यकर्ता सब आहुतिके लिअे कटिबद्ध रहें। अिससे लाभ अुठानेवाले लोगोंको भावी समयका परिचय दें। वे स्वयं योग दें तो अुसका स्वागत किया जाय, कृत्रिम आन्दोलन खडा न किया जाय। स्त्रियां अभी भाग नहीं लेंगी। जब पुरुषोंका आन्दोलन खूब जोर पकड जायगा अथवा वे खत्म हो चुकेंगे तब स्त्रियोंको आमंत्रित किया जायगा। नमकके छोटे व्यापारियोंसे कहा जायगा कि वे नमक मुफ्त बांट दें, बनानेकी भी व्यवस्था की जायगी। बापूके गिरफ्तार होने पर

सब जगह जगह पर लड़ाअी छेड देंगे। किसान जमीदारोका लगान बन्द कर देंगे। रियासतोकी प्रजा भी नमक पर धावा बोल दे तो अुसे अधिकार है। अराजकता-सी पैदा करनी है। बापू यदि देखेंगे कि अहिंसक लोग नामर्द साबित हुअे अथवा लोगोने हजारो अग्रेजोको मारना आरम्भ कर दिया, तो वे जेलमें भी अनशन करेंगे। दूसरी बात होने पर अन्य अहिंसावादी नेता भी अनशन कर सकते है। बापू कार्यक्रमके सबधमें अपनी हिदायते छोड जायेंगे। १६ वर्षसे अूपरके स्त्री-पुरुषोको अिस युद्धमें लिया जा सकेगा। अस्तु, साभर झीलमें रियासतोमें झगडा न आता हो तो अुसे भी मोरचा बनाया जा सकता है।

१०३

. . ३। तक शोभालालजीसे हुअी बापूकी बातें सुनी। विषय था हिंसा-अहिंसाका और देशी राज्यो सबधी कार्यपद्धतिका। गीतामें स्थूल युद्ध नही, प्रत्युत आत्माका अिन्द्रियोसे सग्राम विषय है। हिंसा द्वारा प्राप्त स्वराज्य गरीबोके लिअे हितकर नही हो सकता। अच्छे अुद्देश्यका साधन भी अच्छा ही होना चाहिये। बबूलके बीजसे गुलाब पैदा नही हो सकता। दूसरेको मारनेकी अिच्छा रखनेवाला अुसके प्रति प्रेम नही रख सकता। दूसरे देशोमें जो स्वतत्रता है वह हिंसा द्वारा प्राप्त होनेसे दूषित है।

*　　　　*　　　　*

(प्रार्थनामें) बापूजीने अपने और प्रह्लादके अुदाहरणसे समझाया कि जो आज्ञा-पालन कर चुकते हैं अुन्हे ही सविनय भग करनेका अधिकार होता है।

*　　　　*　　　　*

१९–२–'३० ३।।। तक बापूजीसे बातें की। अिस लडाअीमें रियासती प्रजाको असीम लाभ होगा। यह अुनसे समझकर अपना नाम सिपाहियोमें देनेका निश्चय किया।

१०४

२५–२–'३० आज अेक गभीर घटना हो गअी। वसन्त खरे चल बसा। लडका कितना ज्ञानपिपासु, तीक्ष्ण-बुद्धि और होनहार था। बापूने मृत्यु और जन्मका अनिवार्य स्वरूप और हर्ष-शोककी नि सारताका तत्त्वज्ञान बहुत समझाया। परतु अुनका विषाद अुनके अिस वाक्यमें भरा था कि औश्वरका न्याय है, मैं साठ बरसका बुड्ढा बैठा हू और छ सालका वसन्त चला गया।

*　　　　*　　　　*

२६–२–'३० बापूने (प्रार्थनामें) झमकलालका अुदाहरण देकर समझाया कि जिन लोगोने नाम दे दिये हैं, वे तो जेल या मौतके सामने ही खडे है। जिन्होंने

नाम नहीं लिखाये हैं, वे भी आपत्ति या अिनामका आमन्त्रण मिलने पर तो अुसका स्वागत करनेको तैयार रहे ही। अिन दो श्रेणियोंके सिवाय अन्य लोगोंको तो अपनी और आश्रमकी प्रतिष्ठाके हितार्थ चले जाना चाहिये।

*　　　*　　　*

२८–२–'३० आज मेघजीका देहावसान हो गया था। बापूको भी दुःख हुआ ही। परन्तु सिद्धान्त छोड़कर टीका निकलवानेका आग्रह वे कैसे कर सकते हैं? आज अुन्होंने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के अपने भाव बहुत विशद रूपमें समझाये।

*　　　*　　　*

१–३–'३० आज (प्रार्थनामें) बापूने सत्याग्रही योद्धाओंकी चार अवस्थाओं पर प्रकाश डाला। वे कैद किये, पीटे, मारे या सम्पत्ति-विहीन किये जा सकते हैं। अतः अिन सबके लिअे तैयार रहना चाहिये। जो लडाअीमें न भेजे जाय अुन्हें लेडी स्मिथवाले प्रभुसिंहकी भाति योद्धाओंकी सहायताका कार्य पूर्ण कर्तव्यपरायणताके साथ करना चाहिये। अदालतमें सत्याग्रहियोंको सिर्फ सच्चा अपराध स्वीकार कर लेनेके सिवाय और कोअी बयान न देना चाहिये।

१०५

२–३–'३० (आज प्रार्थनामें) विवाहके सबधमें भावी वधुओंकी प्रतिज्ञामें से बापूने पतिको गुरु और देवतापद देनेकी बात निकाल देनेकी सूचना दी।

*　　　*　　　*

६–३–'३० आज 'योद्धाओं' की सूची पढी गअी। अपने रामका नाम न सुनकर निराशा तो हुअी, पर सेनापतिकी आज्ञा, क्या किया जाय?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें लिखा "क्योंकि राजपूतानामें जाना है अिस-लिअे नाम नहीं लिया है। —बापू")

*　　　*　　　*

७–३–'३० ३ से ४ तक विद्यार्थी-मंडलमें बापूका शंका समाधान हुआ। आज कूचके बारेमें वस्त्र, भोजन, सेवाकार्य अित्यादि विस्तारपूर्वक बातें हुअी। बिडलाजी कहते थे कि वायसरायने डॉ० मुंजेको गांधीजीका पत्र अशिष्ट बताया। शायद अुसमें पदवियोंका अुपयोग नहीं किया गया, अिसलिअे।

*　　　*　　　*

अुसी (सायकालीन प्रार्थनाके) समय तार द्वारा बापूको खबर मिली कि वल्ल-भाअीको बोरसद तालुकेके रास गावमें भाषणकी मनाअीका हुक्म तोडने पर पौने चार मासकी सादी सजा हुअी है और वे अभी साबरमती जेल लाये जा रहे हैं। प्रार्थना हो चुकने पर बापूने सबको शान्त और कर्तव्यपरायण रहनेका और प्रेस-प्रतिनिधियोंको सावधान रहकर सत्य लिखनेका अुपदेश देकर वल्लभभाअीके दर्शन कराये।

बादमे ९।। तक बापूके पास रहा। वहा मजदूरो और नगर-निवासियोसे हडताल करने और सभाकी सूचनाकी विज्ञप्ति बापूने मिल-मालिकोंकी सम्मतिसे अपने हस्ताक्षरसे लिखवाओ। वल्लभभाओकी प्रतिष्ठाका, अपने साथीका साथ देनेका अिस बूढेको कितना खयाल है!

१०६

८–३–'३० आज (प्रार्थनामें) बापूने कहा, "डॉ० हरिभाओ आदिने मेरी अनुपस्थितिमे आश्रमकी सेवाका वचन दिया है। परतु अुसका लाभ अनिवार्य अवस्थामे ही अुठाना चाहिये। विलायत तो मैं तभी जाअूगा जब सत्याग्रह खूब जोरोसे चलकर देशमें अितना बल आ जाय कि सरकारको हमसे संधि करनेके लिअे विवश होना पडे। अभी तो मैक्डोनाल्ड या बेन साहब बुला भी नही सकते और न लोग बुलाने देंगे। रेजीनाल्ड रेनाल्ड्स आश्रममें ही रहेगे। वे भारतको अग्रेजी प्रभुत्वसे छुडाने आये है। शिक्षित और अुच्च भावनावाले युवक है।"

* * *

१०–३–'३० आज लगभग दो हजार आदमी होगे। अत प्रार्थना नदीकी रेतमें हुअी। बापूने दर्शकोको कहा कि केवल कुतूहलके लिअे नही, प्रत्युत अुपासनाके प्रेमसे आअिये। खादी तो पहनिये ही और सत्याग्रहमें सहायता दीजिये।

१०७

११–३–'३० आज (सुबहकी प्रार्थनामें) बापूने कहा कि जो सत्याग्रह-युद्धमें शामिल हो रहे है अुन्हे जीत कर ही लौटना होगा। तब तक वे जेलमें रहेगे या काम करते करते मारे जायगे। अुन्हे अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रहके पाचो महाव्रत युद्धके अन्त तक पालन करने होगे। आश्रममे रहनेवाले स्त्री-पुरुषोको तो ये पालन करने ही होगे। दोनोमें से कोअी भी तैयार न हो तो वे युद्ध या आश्रमसे निकल सकते है। जिनकी स्त्रिया खुशीसे अनुमति न दें वे भी युद्धमे न जाय। स्त्रिया अपने बालकोको लाड न लडावें, शक्कर वगैरा न खाने दें। युवतिया शादी न करे, जब तक युद्ध जारी रहे, तो अच्छा है।

आज भी (शामकी) प्रार्थना नदी-तट पर ही हुअी। भीड़ ५००० के लगभग थी। बापूने आजका भाषण अपना वसीयतनामा, अंतिम भाषण कहकर दिया। कहा कि लोगोको मेरी गिरफ्तारीके बाद शान्त और अनुशासनपूर्वक लडाअी जारी रखनी चाहिये।

१०८

१२–३–'३० आज (दाडी-कूच) के चिरस्मरणीय दिन सडक पर हजारोंकी भीडके लिअे, जो रातभर पडी थी, अलग (प्रात कालीन) प्रार्थना हुअी। प्रार्थनामें वापूने पीछे रहनेवालोको कहा, 'अैसी तरह रहना कि आश्रमको शोभा दे।' अिन शब्दोंमें हमें शुद्ध, कर्तव्यपरायण, विनम्र और अनुशासनशील रहनेका अुपदेश भरा पडा है।

* * *

२२–३–'३० छात्रालयमें प्रतापको लिये खडा था कि यशोदावहनने प्रेमावहनकी प्रेरणासे मधुमक्षिकाओको अुडा दिया। वे मेरे आ लिपटी। मुझे और बच्चेको बुरी तरह काटा। भजनाके शीघ्र मिट्टीका तेल लगानेसे बच्चा बच गया। अिस अवसर पर आश्रमकी सब बहनोने जिस तत्परता और प्रेमसे सहायता दी अुससे मेरी श्रद्धा बढ गअी। विशेषत मोतीवहन, लक्ष्मीवहन और वेलावहनका स्वार्थत्याग और तारावहन तथा शान्ता आदिकी सेवा हम लोग नही भूल सकते।

१०९

अिन्ही दिनो अेक रोजकी वात है। ठड कुछ सदाकी अपेक्षा अधिक पड रही थी। सावरमती नदीका पानी बहुत ठडा हो गया था। कुछ आश्रमवासी नित्य स्नानका नियम पालन करनेमें ढिलाअी दिखाने लगे थे। आश्रम व्यवस्थापकने अिसकी सूचना वापूको दी। अुन्होने सामूहिक सूचनाअें शामकी प्रार्थनामें देनेके अपने रिवाजके अनुसार कहा, "भगवानने नदीका पानी दिया है, हाथ-पैर दिये है, फिर नहानेमें आलस्य क्यो ?" अिसका अुत्तर तुरत कट्टूने दिया। यह आश्रमके अेक कार्यकर्ता श्री गिरिराजजीका लडका हरि था, जिसको आम तौर पर कट्टूके नामसे पुकारा जाता था। वह आश्रमके चचल बच्चोकी टोलीका सरदार माना जाता था। अुसने कहा, "भगवाने टाढ पण दीधी छे! (भगवानने ठड भी तो दी है!)" सारा प्रार्थना-समाज खिलखिलाकर हस पडा। बापूजी भी अुसमें शरीक हुअे और मामला अुसीमें अुड गया।

११०

दाडी-कूचके कुछ समय पहले अेक दिन बापू और महादेवभाअी लार्ड अिविनके नाम भेजे जानेवाले पत्रके मसौदे पर विचार कर रहे थे। मै वही था। मीराबहन भी आ गअी थी। मसौदेमें अेक वाक्य था जिसमें so charged शब्द शायद अिस सिलसिलेमें आये थे कि वातावरण हिंसासे परिपूर्ण है। महादेवभाअीने अिसे टाअिप करनेकी भूल वताया और कहा कि सही शब्दप्रयोग surcharged होना चाहिये। वापूजीको सबके अग्रेजी ज्ञानकी परीक्षा लेनेकी सूझी। मीराबहनसे पूछा, 'क्यो मीरा, क्या होना चाहिये ?' मीराबहनने भी महादेवभाअीका समर्थन किया। अिसके बाद

मेरी वारी आओी। महादेवभाओी और मीराबहन जैसे अंग्रेजीके विद्वानोंके सामने मेरी तो क्या विसात थी? फिर भी शायद अिस खयालसे कि अल्पज्ञोंसे भी कभी कभी सही वात मिल सकती है मुझसे बोले, 'रामनारायण, तुमने भी तो अंग्रेजीका साप्ताहिक निकाला है। तुम बताओ, so charged ठीक है या surcharged होना चाहिये?' मुझे यह कहनेमें अेक क्षण भी नहीं लगा, 'बापू, मेरी रायमें so charged अधिक अुपयुक्त है।' बापूने कहा, 'मैंने यही शब्दप्रयोग किया है।' फिर तो अुन्होंने अिस शब्दप्रयोग पर ही नहीं, अंग्रेजी भाषा और अुसके मुहावरे पर अेक छोटासा प्रवचन दे डाला। मुझे अुनकी भाषाकी मर्मज्ञताका और छोटे आदमियोंकी भी अितनी परवाह करनेका पहला अनुभव हुआ।

१११

अिसके वाद यह सवाल पैदा हुआ कि बापूकी गिरफ्तारीके वाद 'यंग अिंडिया' का संपादन कौन करे। महादेवभाओीके शीघ्र गिरफ्तार होनेकी संभावना तो थी ही। बापूने कहा, 'रेनाल्ड्स तो है ही, बादमें रामनारायण संभाल लेगा।' महादेवभाओी बोले, 'हा, रामनारायणजी हुशार माणस छे (होशियार आदमी है)।' बापू बोले, 'बहादुर पण छे (बहादुर भी है)।' मैं अिस प्रशंसाको सुनकर शर्मके मारे झुक गया। मगर कर्तव्यवश साहस करके बोला, "बापू, आपने शायद 'यंग राजस्थान' के सम्पादन परसे मेरी योग्यताका अनुमान लगाया है। मगर वह व्यापार तो मैंने बहुत थोडी पूंजीसे चलाया था। 'यंग अिंडिया' के सम्पादनकी मुझमें जरा भी योग्यता नहीं है। यह जिम्मेदारी लेना मेरे लिअे सर्वथा अनधिकार चेष्टा होगी।' वात यहीं खत्म हो गओी, परन्तु मेरी कथित बहादुरीकी राय अंत तक कायम रही। अिसे मैं बापूकी महान गुणग्राहकता ही समझ सकता हूं।

११२

अेक दिन कुछ यात्री आश्रम देखने आये। दोपहरका वक्त था। मुझसे पानी मांगा। मैंने कुअेंसे बाल्टी खींचकर पिला दिया। अिस पर कुछ आश्रमवासियोंने मुझे रोका और बताया कि आश्रममें अिस तरह खिलाने-पिलानेका रिवाज नहीं है। मुझे अिसमें शुद्ध सेवा नजर आती थी। मैंने शामको घूमते समय बापूसे अिस रिवाजका कारण पूछा। अुन्होंने कहा, 'रोगी और अपंगकी शक्तिभर शरीर-सेवा कर देनी चाहिये। परंतु स्वस्थ मनुष्यको मुफ्त खिलाना-पिलाना आलस्यको बढाना, भिखमंगेपनको प्रोत्साहन देना और मानव-गौरव घटाना है। अिस बारेमें अिन्सानको स्वावलम्बी बनाना चाहिये। अिसीलिअे मैंने कुअें पर रस्सी बाल्टी रख छोडी है कि जिसे प्यास लगे कुअेंसे निकाल कर पानी पी ले। खानेके बारेमें भी यही बात है कि खैरातमें न देकर कामके बदलेमें देना चाहिये।'

११३

वल्लभभाओी नामके अेक कार्यकर्ता कुछ समय तक बिजोलिया (मेवाड) के किसानोंमें काम कर चुके थे। वहाके किसानो पर हम लोगोका प्रभाव अुन्हें मालूम था। अब वे गुजरातके किसी गावमें काम कर रहे थे। अेक दिन मुझे अचानक साबरमती आश्रममें मिल गये और अपने केन्द्र पर चलनेका आग्रह करने लगे। मैंने अपनी मर्यादा बताकर अिन्कार कर दिया। पर वे न माने। आखिर यह समझौता हुआ कि बापू अनुमति दे देंगे तो मैं चला चलूगा। वल्लभभाओीने जब बापूके सामने प्रस्ताव रखा तो वे बोले, "क्या गुजरातमें कोओी नेता नही रह गया?" मुझे यह अुत्तर अटपटा सा लगा। मन ही मन प्रान्तीयताकी बू भी आओी। तीसरे पहर जब मैं सदाकी भाति बापूके पास काम करने गया तो अेकान्त पाकर मैंने अपनी प्रतिक्रिया बापूको सुनाओी। अुन्होंने कहा, "तुमने अच्छा किया, मुझे अपनी शका बता दी। बात यह है कि मेरी स्वदेशीकी व्याख्या समझ लेनी चाहिये। जो चीज अपने मुहल्ले, गाव, जिले, प्रान्त और देशमें मिल सके अुसे महगी होने पर भी अपनाना हमारा धर्म है। अिससे स्थानीय व्यक्तियोंको काम, रोजगार, शिक्षण, अनुभव और प्रोत्साहन मिलता है। सार्वजनिक क्षेत्रमें लागू करने पर अिस सिद्धान्तका अर्थ यह होता है कि अखिल भारतीय व्यक्तियोंको अपवाद रखकर आम तौर पर हमें अपने प्रान्तकी सीमामें काम करनेवाले कार्यकर्ताओंसे ही काम चला लेना चाहिये। अिससे आत्मविश्वास और स्वावलम्बन तो पैदा होता ही है, साथ ही जो ज्ञान प्रान्तीय या स्थानीय परिस्थितियोंका वहाके कार्यकर्ताओंको होता है, वह बाहरवालोंको चाहे वे कितने ही योग्य या प्रसिद्ध हो, नही हो सकता। अिसलिअे अुन समस्याओंके सुलझानेमें वे ही अधिक कारगर हो सकते हैं। बाहरवाले कभी कभी अज्ञान या अधूरे ज्ञानके कारण अिरादा न होने पर भी समस्याको सुलझानेके बजाय अुलझा देते हैं। वैसे, हर प्रान्तमें जहा आवश्यकता हो, या कार्यकर्ताकी अिच्छा हो, बाहरसे आकर कोओी काम करे तो अुसका स्वागत ही होना चाहिये।" अिस प्रकार अेक तुच्छसे प्रसगसे मुझे बापूके अेक बडे अुसूलको समझनेका मौका मिल गया।

११४

साबरमती आश्रमकी ही बात है। नमक आन्दोलन शुरू होनेवाला था। नियम-पालन और समयकी पाबन्दीमें बडी कडाओी होती थी। प्रार्थना-भूमि पर घंटी बजते ही फाटक बन्द हो जाता था। घटी बजनेके बाद आनेवाले बाहर रहते और गैरहाजिर माने जाते थे। अेक रोज शामको बापू अैसे वक्त आये कि घटी बजते बजते अुनका अेक पैर फाटकके बाहर और दूसरा भीतर था। बन्द करनेवालेने अुन्हे अन्दर ले लिया और वे भी चले आये। प्रार्थनाके बाद बापू बोले, "आज मैंने भूल की। मेरा अधिकतर शरीर भीतर ही था, फिर भी बन्द करनेवालेने रियायत करके मुझे अन्दर

लेनेमे गलती की। मुझे भी बाहर रह जाना चाहिये था। मगर मुझे लोभ था कि अितने लोग मेरी प्रतीक्षामें होंगे। परतु रोगी या रोगीके सेवकके सिवा अैसी रियायत न किसीको करनी चाहिये, न करानी चाहिये।" अितनी प्रबल थी बापूकी आत्म-निरीक्षण और अपने प्रति कठोर रहनेकी भावना। अुस दिनके बाद प्रार्थना खुलेमें होने लगी।

११५

अेक भाअीकी डायरी देखकर अेक दिन सायकालीन प्रार्थनामें अुसे आदर्श बताते हुअे अुसके अक्षरोकी भी बडी तारीफ की और कहा, "जितने मेरे अक्षर खराब हैं अुतने ही अिनके अच्छे हैं। 'महात्मा' की भी बुरी बातकी नकल न करके छोटे आदमियोके भी गुणोका अनुकरण करना चाहिये। हमारी भारतीय शिक्षा-पद्धतिमें सुलेखन पर बडा जोर दिया जाता था और बहुत लोगोके अक्षर मोतीके दाने जैसे होते थे। आजकल अधिकाश पढे-लिखोके अक्षर भद्दे होते हैं। गोल गोल, बडे बडे और सुन्दर अक्षर लिखनेका अभ्यास मनुष्यकी सुघडताकी निशानी है।" बापू जितने आन्तरिक स्वच्छताके कायल थे, अुतने ही बाहरी सफाअीके भी हिमायती थे।

११६

अेक दिन तीसरे पहर नित्यनियमानुसार बापूके पास काम करनेके लिअे पहुचा तो जाते ही अुन्होने मेरे कुर्तेकी तरफ अिशारा किया। कधे पर अुसका कुछ हिस्सा फटा हुआ था। मैंने कहा, 'बापू, अजना बीमार है, अिसलिअे सिलना रह गया।' अुनके माथे पर हल्की-सी त्यौरी पड गअी, मगर मुस्कुरा कर बोले, 'तुम्हारे जैसे साफ-सुथरे, व्यवस्थित और सुरुचिपूर्ण आदमीको अितना लापरवाह नही होना चाहिये। कुर्ता पहनना जरूरी नही है, मगर पहनते हो तो साफ और सिला हुआ होना चाहिये। गदा या फटा कपडा काममें लेना आलस्य, अज्ञान और असभ्यताका चिह्न है। सेवकको अपने कपडे सीना नही तो अुनकी मरम्मत करना तो आना ही चाहिये।' छोटी छोटी बातो पर कडी नजर रखकर वे अपने साथियोको कितना जागरूक रखते थे!

११७

आश्रमके हिसाबका कोअी मामला था। व्यवस्थापक पर आरोप था कि हिसाब ठीक ढगसे नही रखा गया। आरोप लगानेवालोमें गाधी-परिवारके व अन्य कुछ 'बडे' लोग भी थे। बापूने दोनो तरफकी बात सुनकर व्यवस्थापकको निर्दोष करार दिया। कुछ ही दिन बाद काठियावाडमे काम करनेवाले अेक गाधी-कुलके भाअी पर अिसी प्रकारका आक्षेप हुआ। अुसमें भी बापूने अुभय पक्षका मामला सुनकर अभियुक्तके हकमें फैसला दिया। न पहले केसमें 'स्वजनो' की शिकायत पर दूसरेको कसूरवार

ठहराया और न दूसरे मामलेमें स्वजन होनेके कारण ही बेकसूरको गुनहगार बताया। दोनों मामले मेरे सामने निपटाये गये थे। मुझे बापूकी निष्पक्षता पर तो आश्चर्य नहीं हुआ, परन्तु अुनकी हिसाब-किताबकी बारीकियोंकी जानकारी देखकर बड़ा ताज्जुब हुआ। अिससे भी बढ़कर मैंने यह देखा कि प्रामाणिक भूल, अज्ञान या असावधानीके और अप्रामाणिकताके बीच वे कितना सूक्ष्म विवेक करते थे और साथ ही हिसाब बाकायदा स्वच्छ रखनेका कितना आग्रह रखते थे। गुजरातके अेक प्रमुख सेवकका किस्सा तो भीतरी हल्कोंमें मशहूर ही है कि अुन्हें बापूसे केवल अिसीलिअे अलग होना पड़ा कि वे सार्वजनिक धनका हिसाब नहीं रख पाते थे।

११८

अेक रातको कोअी चोर भोजनालयमें घुसा। अुस दिनों आश्रमवासी बारी बारीसे टोलियोंमें पहरा देते थे। चोर पकड़ लिया गया। रातको तो अुसे कोठरीमें बन्द रखा गया। परन्तु सुबह जब बापू नाश्ता कर रहे थे, तब अुसे अुनके सामने पेश किया गया। अुन्होंने सबसे पहले पूछा, 'अिसे नाश्ता करा दिया है?' मेरे लिअे पहला आश्चर्य तो यह असाधारण औदार्य ही था। खैर, नाश्ता कराकर लाये तो बापूने चोरको बड़े प्रेमसे समझाया कि अिस तरह चोरी नहीं करनी चाहिये, चोरी करना पाप है और अगर गरीबीके कारण अैसा किया गया है तो आश्रममें काम मिल सकता है। चोर तो चला गया, मगर शामको बापूने प्रार्थनामें कहा, "समाजमें चोरी-डाके अिसलिअे होते हैं कि अधिकांश लोगोंको कड़ी मेहनत करने पर भी पूरा रोटी-कपड़ा नहीं मिलता और मुट्ठीभर आदमी शरीरश्रम न करके भी आराममें रहते हैं। हम आश्रमवालोंने व्रत तो गरीबीका — अपरिग्रहका — लिया है, परन्तु हमारे पास कितना फालतू संग्रह है? अिसे देखकर पड़ोसके गांववालोंको अीर्ष्या हो तो क्या आश्चर्य? हमें अन्तर्मुख होकर अैसा आचरण करना चाहिये जिससे दूसरोंको अुद्वेग न हो।" बापूने अपराधी मानसका जो निदान और अिलाज बताया, वह सदाके लिअे हृदय और बुद्धिमें घर कर गया।

११९

जिस दिन मैं साबरमती पहुंचा अुसी दिन बापूने पिछला अितिहास जानना चाहा। मैंने अेकान्त मांगा, क्योंकि अुसमें कुछ बातें खानगी होना स्वाभाविक था। परंतु मुझे बापूके सिवा दूसरे लोगोंमें अुतना विश्वास नहीं था। मेरे वार्तालापमें दूसरोंका सबंध आनेवाला था। बापूको मेरा अेकान्त चाहना अच्छा तो नहीं लगा, परन्तु मेरी भावनाओंका लिहाज करके वे मेरी बात मान गये। जब मेरी अुनकी बातचीत खतम हो गअी तब बोले, "तुम्हारी भावनाओं ठीक थीं। मुझे अिसमें भीरुता लगी थी, अिसीलिअे मैंने अुसे नापसन्द किया था। वैसे आम तौर पर मैं चाहता हूं कि सभी

सेवक खुली किताब बनकर रहे। मेरा अपना जीवन तो अैसा ही है। परतु दूसरोकी रक्षाके लिअे मुझे कभी बार अेकान्तता रखनी पडती है। तुमने भी अुसी विचारसे अैसा किया तो ठीक ही किया।" बापू हर बातमें दूसरेको समझाने और दूसरोसे समझनेकी वृत्ति रखते थे और जहा कोअी सिद्धान्त आडे न आता हो वहा दूसरोकी सुविधाको प्रधानता देते थे।

१२०

चि० प्रताप बच्चा था। अेक दिन बापूकी कमरसे लटकती हुअी घडी देखकर अुसके लिअे मचल गया और अपनी माकी साडी पकडकर रोने लगा। बापू जहा सबके लिअे स्नेहपूर्ण हृदय और बच्चोके प्रति अत्यत कोमल भाव रखते थे, वहा वे यह भी मानते थे कि बच्चोकी भी अनुचित माग पूरी नही करनी चाहिये और अुन्हे सच्ची तालीम देकर सही रास्ता दिखाना चाहिये। अत· वे प्रतापके पास आये और अुसके कानसे घडी लगाकर कहने लगे, 'देखो, कैसे टिकटिक बोलती है। मगर यह तेरा खिलौना नही, मेरा है। तुझे नही मिलेगा।' फिर तो जब बापू और प्रताप मिलते तो दोनो अेक-दूसरेको 'टिकटिक' कहकर सबोधन करते, यह क्रिया दोहरा दी जाती और मामला शान्त हो जाता।

१२१

अेक दिन शामको बापू सदल-बल सैर करके लौट रहे थे। साबरमती आश्रमके पास पहुचे तब बैलोका झुड पीछेसे दौडता भागता सीग फटकारता हुआ आया। साथके लगभग सब लोग डरकर अिधर अुधर बिखर गये, मगर बापू अपने मार्ग पर स्थिर भावसे चलते रहे।

१२२

दाडी-कूचसे पहली रातको बापूकी गिरफ्तारीकी अफवाहे बडी गरम हो गअी थी। पुलिस भी आ पहुची। आश्रमके सब लोगोमें हलचल मच गअी। मगर बापूको जगाकर सूचना दी गअी तो सुनकर चुपचाप सो गये, मानो कोअी बात ही नही।

१२३

आश्रम पहुचने पर मुझे नियमित डायरी लिखनेका आदेश देनेके साथ बापूने यह भी कहा कि अपने जीवनके सक्षिप्त अितिहासके साथ साथ परिवारके सब लोगोके नाम भी लिखू। अुस समय अिस हिदायतका रहस्य मेरी समझमें नही आया। बादमें देखा कि साथियोके घरके सब आदमियोसे वे अपना सीधा सबध रखते थे, सबके नाम

अुन्हें याद रहते थे और अुनसे कितना ही संक्षिप्त किन्तु अलग अलग पत्रव्यवहार भी करते थे। अैसे सैकडों व्यक्तियोंको वे अपने परिवारके सदस्य मानते और वैसा ही व्यवहार अुनके साथ रखते थे।

१२४

अितने निर्भय, अितने शुद्ध होने पर भी बापू अपनी कमजोरियोंको साथियों और जनतासे छिपाते नहीं थे। वे किसीसे डरते नहीं थे, मौतसे भी नहीं डरते थे। मगर सांप-बिच्छूका भय अुन्हें अन्त तक बना रहा। यह वे कहते भी थे और लिखते भी थे। रातको सोते समय पोटास और अिमलीका सत पास रखकर सोते थे, ताकि अिन विषैले जन्तुओंके काटने पर अिन दवाअियोंका तुरंत अुपयोग कर लिया जाय। पर वे अिन जानवरोंको मारने नहीं देते थे। पकडवाकर दूर छुड़वा देते थे। अुनका खयाल था कि ये जीव भी सताये जाने पर ही काटते हैं।

१२५

आश्रममें ब्रह्मचर्य पालन अनिवार्य था। अिसलिअे स्त्री-पुरुषोंके रहनेका स्थान अलग था। फिर भी रोगियों और पीडितोंके लिअे वे अन्य नियमोंकी तरह अिस नियमके पालनमें भी अपवाद कर देते थे। पति पत्नीमें से कोअी बीमार होता तो अेक-दूसरेकी सेवाके लिअे साथ रहनेकी छूट दे देते थे। अंजनाकी मांदगीमें मुझ जैसे नये आदमीको भी साथ रहनेकी अनुमति दे दी थी। अितना ही नहीं, अुसे देखने अेक बार तो नियमित रूपमें आते, अुसके दांतोंमें पायरियाके लिअे टिंचर आयडीन खुद लगाते और अुसके खानपान, रहन-सहन और पथ्यादिके बारेमें ब्यौरेवार सूचनाअें देकर जाते थे। खानपानके बारेमें स्वयं बहुत कडे होकर भी अपने कुछ पुराने साथियोंकी अनुकूलता और रुचियोंका लिहाज करके अुन्हें अलग रहने और खाने-पीनेकी सुविधा भी अुन्होंने अैसी अुदार भावसे दे रखी थी।

१२६

चि० प्रतापको बहुत बचपनमें पेशाबकी तकलीफ रहती थी। जननेन्द्रियके घूंघटकी सख्ती शायद अुसका कारण थी। अेक रातको वह चिल्लाया तो दूसरे दिन सुबह बापूको किसी बहनने कह दिया कि अंजना बहनके प्रतापको रातको बडी पीडा रही। सहृदय बापूने हम दोनोंको नाश्तेके समय बुलाकर मीठी-सी डांट पिला दी, प्रतापके अवयवकी परीक्षा की, अुसी समय अहमदाबादके प्रसिद्ध सर्जन और गांधी-भक्त डॉक्टर हरि-प्रसाद देसाअीके नाम अपने हाथसे पत्र लिखकर दिया और हमें सख्त हिदायत की कि आज ही जाकर आपरेशन करायें। हमने गद्गद होकर आज्ञा शिरोधार्य की। अैसे थे वात्सल्यमूर्ति बापू!

१२७

अजनादेवीको पायरिया (दतरोग) और सग्रहणी—दो बीमारिया लगी हुअी थी। प्रताप ९ महीनेका हो चुका था। बापूने माका दूध मा और बच्चा दोनोके हितमें तुरत छुडवा देनेकी सलाह दी। तदनुसार दूध छुडवा दिया। वह रातको चिल्लाया। रोना सुनकर बापू स्वय अुठकर आये और स्वय प्रतापको किशमिश खिलाकर गये। फिर तो गायके दूधमें किशमिश भिगोकर देनेका नुसखा कारगर हो गया। अिस प्रकार व्यक्तिगत राहत तो पहुचा दी, साथ ही बच्चेके चिल्लानेसे दूसरोकी नीदमें खलल न पडे, अिसके लिअे अुस रातको हमें साबरमती तट पर भेज दिया।

१२८

दाडी-कूचमें शरीक होनेकी मुझे मजूरी नही मिली थी। अजनादेवीके स्वास्थ्यको देखते हुअे और मुझे रचनात्मक कार्यक्रमका अधिक अभ्यास करानेके खयालसे बापू मेरा आश्रममें ही कुछ समय तक और रहना बेहतर समझते थे। लेकिन जब 'बुद्धिमानो' के अुपहास और शकाओका पात्र यह छोटासा नमक-आन्दोलन देशव्यापी तूफानकी शकल पकड गया तो मुझसे नही रहा गया। अुधर अजमेरके प्रमुख कार्यकर्ताओकी तरफसे भी मेरी वहा माग हुअी। मै छोटेलालजीको साथ लेकर दाडी पहुचा और बापूसे मिला। अुन्होने मेरी तीव्र अिच्छा, साथियोकी माग और राजस्थानकी आवश्यकताको समझकर मुझे अनुमति दे दी। साथ ही मेरी आवश्यकताओको भी न भूले और मेरे जेल जानेके बाद भी खर्च भिजवाते रहनेकी आश्रम-व्यवस्थापकको सूचना दे दी। अितना अचूक ध्यान वे अपने नयेसे नये साथियोका रखते थे।

१२९

काग्रेस सगठनमें मध्यभारत अुन दिनो अजमेर प्रान्तकी सीमामें ही माना जाता था। नमक-सत्याग्रहके लिअे मालवेसे जो स्वयसेवक आये थे, अुनमे अेक पहलवान भी था। अुसने काग्रेसका काम न करके घर लौटनेके लिअे काग्रेससे रुपयेकी माग की। मै अुन दिनो प्रान्तीय काग्रेसका मत्री था। मैने स्वयसेवकको समझाया कि अगर तुम जेल जाकर आते तो घर वापस जानेके लिअे खर्च दिया जा सकता था, मगर जिस कामके लिअे तुम आये वह भी नही करना चाहते, तब काग्रेससे रुपया कैसे दिया जा सकता है? यह बात अुसे पसन्द नही आअी और अुसने मुझ पर हमला कर दिया। मेरा स्वभाव तेज माना जाता था, मगर मैने अुनका आक्रमण सह लिया और दूसरे स्वयसेवकोको भी प्रतिकार करनेसे रोक दिया। यह बापूके ताजा सत्सग और सदुपदेशोका ही फल था।

नमक-सत्याग्रहके सिलसिलेमें मुझे भी अेक सालकी कड़ी कैदकी सजा मिली। जेल-जीवनका अनुभव तो पहले ही अेकसे अधिक बार हो चुका था। जिस बार बहुतसे कार्यकर्ता साथ थे। प्रथम श्रेणीका व्यवहार था। अिसलिअे कोअी कष्ट तो महसूस नही हुआ। परतु बापूके सहवासके प्रकाशमें कुछ नये अनुभव जरूर हुअे। पहला तो यह था कि सामूहिक जीवनमें सहिष्णुता आअी। दूसरी, भूल होने पर अुसकी जल्दी ही प्रतीति होने लगी और अुसे सुधार लेनेमें मिथ्याभिमान या भीरुता पर विजय प्राप्त करनेकी वृत्ति आने लगी। जिसका प्रमाण अेक अरुचिकर घटनामें मिला। अुसका वर्णन मेरी अुस समयकी जेल डायरीमें जिस प्रकार है -

"अगस्त (१९३०) के अुत्तरार्धमें जेलरकी वाणी और कर्मसे स्वभाव, कार्याधिक्य और दबावके कारण कुछ अैसी भूलें हुअी कि जिनसे कैदियोंमें नाराजगी फैली। मैं भी क्रुद्ध हो अुठा। शायद दूसरोंसे अधिक आवेशमें आया। होना चाहिये था विपरीत। मनुष्य अुपकार बहुत शीघ्र भूल जाता है। अपकार खूब याद रखता है। यदि अिस बारेमें जोड़-बाकीका नियम रखा जा सके तो भी बहुत कुछ बिगाड़ बचाया जा सकता है। मैंने यद्यपि आरम्भसे ही जेलरसे कमसे कम रियायतें लेनेका प्रयत्न किया है, फिर भी अुनके सावारण सद्व्यवहारका लाभ तो अुठा ही चुका था। परन्तु कमजोरीका ही नाम तो मनुष्य-स्वभाव ठहरा। अिधर सुपरिन्टेन्डेन्टने परेड कराने और खड़े करने पर आग्रह किया। व्यक्तिश: अेक सत्याग्रही कैदीकी हैसियतसे साधारणत: जेलके नियम मानना और अधिकारियोंका आदर करना मेरा फर्ज था। परतु हमारे स्वाभिमानने अहंकारका रूप धारण कर लिया था। जो चीज हम दूसरोंमें, यदि हम पर आजमाअी जाती तो, बुरी समझते थे, वही स्वयं दूसरो पर आजमाना कर्तव्य समझ बैठे। अुसमें ये दोनो बातें भूल गये कि हम सत्याग्रही है और कैदी हैं। . . खासकर जब जेलरने हाथ जोड़ जोड़ कर यह सलाह दी थी कि परेडमें खड़े हो जाअिये, तब तो हमें अुन्हींकी खातिर झुक ही जाना था। परतु रास्ता चूके सो चूके। अुस समय यह सुमति कहासे आती कि 'दब तो नही रहे है', अिस चिन्ताके साथ यह भी खयाल रखें कि 'अनुचित तो नही कर रहे है'?

" लड़ाअी छेड़ ही तो दी। यहा भी भूल हुअी। पद्धति गलत अख्तियार की। कौशल और सिद्धान्त दोनोंकी दृष्टिसे चूके। अुत्तरोत्तर नियम-भगके मार्गका आश्रय लिया। विपक्षीको अधिक चिढ़ानेकी योजना की। . नारोंमें व्यक्तिगत हिंसा थी और वह अुस समयके बाद भी जब जेलर बेचारे हमारे प्रतिनिधियोंके सम्मुख अपनी गलतियोंके लिअे माफी माग चुके थे और प्रायश्चित्त तक करनेको रजामद थे। बात यहा तक बढ़ी कि वे जो करते थे, अुनमें प्रत्यक्ष भलाअीको भी हम

बुराओीसे प्रेरित समझने लगे। अस्तु, लडाओीका अस्त्र भूख-हडताल चुना गया। मेरी राय तो यही थी। अुसके दो कारण थे। अेक तो अिसमे प्रमुख शक्तिया अधिक मात्रामे योग दे सकती थी। दूसरे, अधिकारियोको अुत्तेजनाके स्थान पर सहानुभूति ही होती। . .

"१ सितम्बरकी पिटाओीमें तो अपने रामका नम्बर आया नही, सिर्फ धक्के-धूमसे ही पावन किये गये। परतु ५ ता० को जब सजाओं दी गओी तो ठेठ १५ ता० तक बेडिया पहननेवालोमे अवश्य अपना भी सम्मान हुआ। अेकान्त कोठडी तो अन्य साथियोके साथ ही मिली थी। कुछ भी हो, ये ११ दिन बीते बडे मजेमें।

"यहा आकर हृदयमथन शुरू हुआ। बापूजीके साथ जेल-जीवन सम्बन्धी वार्तालाप याद आया। . और सत्याग्रहीके आचरणकी विधि पर खयाल गया। प्रतीति हुओी कि भटक गये। झूठे अभिमान, क्रोध और अविवेकके वेगमें अपना विनय, गाभीर्य और सतर्कता खो बैठे। दूसरोकी नीति अख्तियार कर ली, अपनी छोड दी। बापूके आदेशानुसार जेल-जीवनमें कष्ट-सहनकी प्रामाणिक वृत्तिका परिचय क्यो न दिया, अपनी शक्तिकी सीमा क्यो भूल गये, व्यक्तिको अुसके कुछ कार्यों परसे ही दुष्ट क्यो समझ लिया, अनुशासनप्रिय होते हुओे भी अधिकारियोके प्रति सम्मान दिखानेसे क्यो अिन्कार किया, जिस झूठे स्वाभिमानके कारण बाहर भी अितने झगडे होते है अुसीको — वह भी अिस चारदीवारीमे — अितना अुच्चासन क्यो दिया, जिस नियमनको अपने अधीन लोगो पर लादनेकी स्वय हमको अितनी चिन्ता रहती थी अुस पर सुपरिन्टेन्डेन्टके आग्रही होने पर हमें अितना अेतराज क्यो हुआ, जेलरकी बात बातमे दुर्भावकी गध हमे क्यो आने लगी, जो अिस तुन्द-मिजाजीमें हमसे सहमत न हो सके अुनके प्रति असहिष्णुता क्यो होनी चाहिये? अित्यादि अनेक प्रश्न खडे हुओे और प्रत्येकका अुत्तर अपनी अक्षमता मिला। अेक प्रकारका बोझा अुतर गया। परतु असफलता कबूल करनेके लिओे साहस न हुआ। अन्तमें परमेश्वरने बल दिया। . . अिस नतीजे पर पहुचे कि स्पष्ट शब्दोमें सुपरिन्टेन्डेन्टसे कह देना चाहिये। सत्य ही धर्म है, फिर चाहे कोओी कुछ भी कहे। १५ ता० को सुपरिन्टेन्डेन्टके सामने फिर पेशी हुओी। न तो 'प्रतिष्ठा' और न पास खडे अन्य साथियोके सकोचका ही खयाल आया और पूरी बात कहे बिना सतोष न हुआ। .

"सारी बातो पर विचार किया जाय तो समझौता सम्मानपूर्ण और अनुभव मूल्यवान हुआ।'

भूल करके अुसे स्वीकार करनेका साहस करनेमें पहल मैंने की, जिससे मुझे सतोष हुआ और अिस बारेमें बापूके अुपदेशका मूल्य मेरे तेज स्वभावने पहली बार प्रत्यक्ष रूपमें समझा।

१३१

गांधी-अर्विन समझौतेके मातहत जब हम लोग जेलसे छूटे तो जमनालालजीने गांधी-सेवा-संघके अध्यक्षके नाते मुझे भी संघका सदस्य बननेका अनुरोध किया। विचारोंकी दृष्टिसे मुझे कोअी दिक्कत नहीं थी, परन्तु मैं देशी राज्योंकी प्रजाकी राजनीतिक सेवाका व्रतधारी था और अिसके लिअे संघके कार्यक्रममें गुंजाअिश नहीं थी। सेठजी अिस अंशको जोड़ना मेरे साथ विशेष रियायत समझते थे, जो संस्थाके अध्यक्षके नाते अुन्हें पक्षपात प्रतीत हुआ। अुधर मुझे सबमें लेना भी चाहते थे। अन्तमें मेरे सुझाव पर यह तय हुआ कि वे बापूसे परामर्श कर लें और बापू जो निर्णय दें वह मुझे और अुन्हें भी स्वीकार हो। बापूसे सलाह ली गयी तो अुन्होंने वह गुंजाअिश कर दी। अुनका कहना यह था कि 'मैंने देशी राज्योंमें राजनीतिक कार्यकी स्पर्धा राजा प्रजा सेवक समितिके विधानमें बता ही दी है और वह रामनारायणको स्वीकार है, अिसलिअे संघके सदस्य बन जानेमें अब कोअी कठिनाअी नहीं।' मैं सदस्य बन गया। बापूमें कार्यकर्ताओंकी प्रत्येक प्रामाणिक कठिनाअीको दूर करनेकी जितनी वृत्ति थी अुतनी ही क्षमता भी थी।

१३२

सन् '३१ के राष्ट्रीय सप्ताहमें अजमेरमें खादी फेरीका संगठन मेरे सुपुर्द हुआ था। अिस सिलसिलेमें दो अंग्रेज अधिकारियोंसे भी मिलनेका काम पड़ा। मैंने अुन्हें खादीके शुद्ध आर्थिक परोपकारका पहलू समझाया तो अुन्होंने काफी खरीदारी की। अुनमें मैंने बापूके प्रति व्यक्तिगत सम्मान और अुनके बारेमें जाननेकी अुत्सुकता तो पायी ही, बापूकी निर्भीक दलील और अपीलके शालीन ढंगका प्रभाव भी प्रत्यक्ष होते देखा। बात यह हुअी कि रेलवे कारखानेके अुच्चाधिकारी मि० कोट्स्वर्थने, जैसा अंग्रेज अफसर अुन दिनों किया ही करते थे, मुझसे पूछा . "अंग्रेज चले जायेंगे तो हिन्दू-मुसलमानोंमें अमन कैसे रहेगा?" मैंने वही अुत्तर दोहरा दिया जो बापूने अिसी सवालके जवाबमें कमांडर केनवर्दीको पिछले साल साबरमती आश्रमकी भेंटमें दिया था . "आप लोगोंके आनेसे पहले भी हम किसी प्रकार जी रहे थे। जहां आप लोग नहीं पहुंचे हैं, वहां भी लोग सुख, शान्तिसे रहते ही हैं। और अगर जर्मनी अिंग्लैंड पर अधिकार जमाकर कहने लगे कि अुसका राज अुठ जानेसे रोमन कैथलिक और प्रोटेस्टेण्ट अथवा स्कॉच और अंग्रेज आपसमें लड़ मरेंगे, तो क्या अंग्रेज अपना घर जर्मनोंके हाथमें रहने देंगे? आखिर, देश हमारा है, अुनकी अितनी फिक्र आप क्यों करते हैं? अपने घरकी चिन्ता हमें ही कर लेने दीजिये।" साहब सुनकर लाजवाब हो गये।

जिसी तरह जब मेरे कालेजमें वहाँके अंग्रेज वाअिस प्रिंसिपल द्वारा किये गये [illegible] अपमान पर मैंने बापूके लहजेमें अुनकी अुदात्त भावनाओंको छूते हुअे अुनको लिखा, तो प्रिंसिपल महोदयने लिखित माफीनामा देनेमें भी पसोपेश नहीं किया।

१३३

गांधीजीका आरम्भ होनेके साथ ही कांग्रेसके कार्यक्रममें अस्पृश्यता-निवारण अेक अविभाज्य अंग बन गया था। सुधारक आन्दोलनों और संस्थाओंके प्रयत्नोंके फलस्वरूप हिन्दुओंके प्रगतिशील हल्कोंमें अछूतपन बुरी चीज माना जाने लगा था। मगर साधारण हिन्दू समाजके शरीरमें यह रोग अभी गहरा पैठा हुआ था। अिधर रैम्जे मैकडोनाल्डकी सरकारने मुसलमानोंकी तरह अछूतोंका अेक अलग राजनीतिक वर्ग कायम करके राष्ट्रको दो से बढाकर तीन टुकडोंमें बांट देनेका निर्णय किया। गांधीजी गोलमेज परिषदमें ही यह चेतावनी दे चुके थे कि अैसी कोअी योजना अमलमें आअी तो अुसके विरोधमें मैं अपनी जान लडा दूंगा। सन् १९३२ में जब ब्रिटिश हुकूमतका साम्प्रदायिक निर्णय प्रकाशित हुआ और अछूत जातियोंके लिअे पृथक् निर्वाचनकी पद्धति कायम कर दी गअी, तो गांधीजीने यरवडा मंदिरसे ही घोषणा कर दी कि यदि हिन्दू नेताओंने हिन्दूधर्मके सिरसे अस्पृश्यताका पाप धो डालने और विदेशी सरकारने हिन्दूजातिका अंगभंग करनेवाले फैसलेको बदल देनेका आश्वासन नहीं दिया तो मैं आमरण अनशन करूंगा।

तदनुसार यह व्रत आरम्भ भी हो गया। मुल्कके अेक कोनेसे दूसरे कोने तक हाहाकार मच गया। असंख्य नर-नारियोंने हडताल, अुपवास, सभाओं और जुलूसों द्वारा अपने अवतारस्वरूप महापुरुषके प्रति सहानुभूति और श्रद्धा प्रगट की और यह सिद्ध कर दिया कि भले ही लाखों मनुष्य पुराने विचारोंके कारण गांधीजीसे किसी प्रश्न पर जल्दी सहमत न हों, फिर भी वे अुन्हें भारतकी दिव्य विभूति, महानसे महान हस्ती और हिन्दुत्वके प्राण समझते हैं और अुन्हें किसी भी तरह खो देना सहन नहीं करेंगे। फल यह हुआ कि हिन्दू नेताओं और अंग्रेज शासकोंको गांधीजीकी मांग स्वीकार करनी पडी और अुनका अुपवास नाजुक स्थितिमें पहुंचकर समाप्त हुआ। देशमें अपूर्व अुत्साह फैल गया। लोगोंमें राजनीतिक आन्दोलनकी शिथिलतासे पैदा हुअी निराशा अेक बडे सुधारकी संभावना खुल जानेसे आशामें बदल गअी। यह शुद्ध सत्याग्रहकी सफलताका चमत्कारी प्रमाण ही था कि केवल अेक आदमीके त्यागसे संसारके सबसे बडे साम्राज्यको अपना बहुत बडा फैसला बदलना पडा, रूढिवादी हिन्दू समाज अछूतपनको धर्मके बजाय अधर्म माननेको तैयार हुआ और मेरे जैसे कट्टर राजनीति-प्रेमी सेवकोंको हरिजन-सेवा जैसे सामाजिक कार्यमें सारी शक्ति लगा देनेकी प्रेरणा हुअी। सत्याग्रहकी अनन्त शक्तिकी मुझे पहली बार प्रतीति हुअी।

१३४

बापू भी पूरे बनिये थे। अुन्होंने अिस परिस्थितिसे कसकर लाभ अुठाया और अिस अभूतपूर्व जाग्रतिका खूब सदुपयोग किया। अुन्होंने अेक तरफ अछूतपनके खिलाफ प्रचार करने और दलित जातियोंके अुत्थानके लिअे सतत कार्य करनेवाली अेक अखिल भारतीय संस्था स्थापित की और दूसरी ओर जेलमें बैठे बैठे अिन अुद्देश्यकी सफलताके लिअे अुद्योग करनेकी सरकारसे सुविधायें प्राप्त कीं, जिनमें 'हरिजन' पत्रोंका सम्पादन करना, हरिजन कार्यके लिअे अखबारोंमें बयान देना और बेरोकटोक अराजनीतिक पत्रव्यवहार व मुलाकातें करना तक शामिल था। अेक कैदीको और वह भी राजद्रोहीको अिस प्रकारकी आजादियां प्राप्त होना संसारके किसी भी राज्यके अितिहासमें बेमिसाल घटना थी। यह सत्याग्रहका ही करिश्मा था, बापूके अद्वितीय व्यक्तित्वका ही जादू था। मगर अिन गैरमामूली सहूलियतोंको बापूने जिस कठोर मर्यादाके साथ काममें लिया, अुससे अुनके आदर्श कैदी होनेका भी अुतना ही अुज्ज्वल प्रमाण मिलता है जितना अेक आदर्श अहिंसक वीर होनेका।

१३५

हरिजन-सेवक-संघ स्थापित हुआ। अुनके प्रधान मंत्री बनाये गये श्री अमृतलाल ठक्कर। वे अपनी दीर्घकालीन शीलसेवा, त्यागमय जिन्दगी और पीड़ितोंके प्रति अगाध सहानुभूति और बुजुर्गीके कारण सार्वजनिक हलकोंमें ठक्करबापाके नामसे मशहूर थे। बापामें कठोर अनुशासन, असाधारण परिश्रमशीलता और स्निग्ध खानगी व्यवहारका अजीब सामंजस्य था। अिन गुणोंने अनेक काम करनेवाले आदमियोंको अुनका भक्त बना दिया था। वे संघके प्राण थे। अुनसे अच्छा चुनाव अैसी संस्थाके संचालकके पदके लिअे और कोअी नहीं हो सकता था। अनुभवने भी सिद्ध कर दिया कि बापूको मनुष्यकी कितनी गजबकी पहचान थी!

१३६

केन्द्रीय कार्यालयका संगठन पूरा करके बापा प्रान्तीय शाखायें स्थापित करनेके सिलसिलेमें अजमेर आये। मुझे मिलने बुलाया और राजपूतानेका प्रान्तीय मंत्रीपद स्वीकार करनेको कहा। मैं बापाके देशी राज्य प्रजा परिषदके जलसोंमें अेक दो बार दर्शन तो कर चुका था, परन्तु प्रत्यक्ष मुलाकात और विचार-विनिमयका यह पहला ही अवसर था। अिस बूढ़ेकी लगन, सचाअी, कार्यकुशलता, साफगोअी और नम्रताका कुछ अैसा असर पड़ा कि अुनके प्रस्ताव पर अिनकार करनेका साहस नहीं हुआ। मगर मैं जिन दो आदमियोंकी अनुमति जरूरी समझता था वे दोनों जेलमें थे। बापाने बापू और जमनालालजीकी मंजूरी दिलानेका जिम्मा अपने अूपर ले लिया। बापूके असाधारण प्रभावने मेरी सबसे बड़ी कठिनाअी पहले ही दूर हो चुकी थी, क्योंकि मुझे

मालूम हो गया था कि बापूके अिस अुपवासके कारणोमे अेक कारण सवर्णोंके प्रति यह शिकायत भी थी कि पश्चिमी राजस्थानमें हरिजनोको पानीके लिअे घोर यातनाअें सहनी पडती हैं। अिस पापके प्रायश्चित्तकी भावना मेरे राजस्थानी हृदयको प्रेरणा दे रही थी। राजनीतिके झगडे-टटोसे अरुचि भी हो चली थी। प्यारे राजस्थानके निम्नतम और दलित वर्गोंकी प्रत्यक्ष सेवाका अवसर सामने था। मैं बापाके आग्रहके आगे झुक गया, अिस नये भारको स्वीकार कर लिया और अिस नवीन क्षेत्रमें साहसी तबीयत आत्मविश्वासके साथ आगे बढी। लेकिन अिसमें भी यही चीज सबसे अधिक प्रेरक बन रही थी कि यह बापूका प्रिय कार्य है और मैं अुनके अुठाये गोवर्धन जैसे भारको हलका करनेमे अपनी तुच्छ शक्तिरूपी लकडीका टेका लगाकर अपना जन्म सफल कर रहा हू।

१३७

परन्तु हमारा प्रान्त राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक कट्टरताका गढ ठहरा। वहा जात्यभिमान नगा नाच करता था। जीवनके हर क्षेत्रमें अूच-नीचकी भावनाका बोलबाला था। शासन-सत्ताअें अनेक और निरकुश थी। वे प्रजामें जीवन और बल पैदा करनेवाली हर योजनाको सन्देहकी नजरसे देखती थी। सत्याग्रह आन्दोलन जारी था। अुसके कारण सरकारी हलकोमें काफी चौकन्नापन था। अग्रेज भी हमारे राजाओको बराबर पट्टी पढा रहे थे कि काग्रेसवाले हरिजन-सेवाकी आडमें राजनीतिक बदअमनी फैलाना चाहते है, अुनसे खबरदार रहना चाहिये। मेरी ख्याति प्रान्तमे अेक प्रमुख राजनीतिक पुरुषकी थी। अिधर सेवाकार्योंसे सहानुभूति रखनेवाले धनिक और शिक्षित समुदायोमें अजमेर आपसी लडाअी-झगडोके लिअे बदनाम था। गरज यह कि परिस्थिति बडी प्रतिकूल थी। परतु यहा भी बापूके अुपवास और व्यक्तित्वने, बापूके कार्यकी महानता और पवित्रताने और अुन्हीकी बताअी हुअी पद्धतिने मेरा मार्ग सरल कर दिया।

१३८

बात यह हुअी कि ज्यो ही ठक्करबापाने मुझे काम सौपकर दिल्लीकी राह ली, मैंने 'राजा प्रजा सेवक समिति' का विधान निकाला। यह विधान बापूने १९२९ में तैयार किया था और अुसमें देशी राज्योके लिअे नम्रता, दक्षता और सचाअीकी त्रिविध नीति स्थिर की थी। मैंने अुसीके प्रकाशमें काम करना शुरू किया। प्रान्तीय सघके विधानमें केन्द्रीय सघसे अेक कदम आगे बढकर यह नियम बनाया गया कि अुसके वैतनिक कार्यकर्ता सत्याग्रहमें ही नही, राजनीति मात्रमें भाग न लें। बूदी, मेवाड और जयपुरके सिवा जहा मेरा दाखिला बन्द था, मैंने राजपूतानेकी प्राय सभी रियासतोका दौरा किया। जिन अिलाकोमें सार्वजनिक प्रवृत्तियोका अभाव था अुन पर खास ध्यान दिया गया। मैं जहा जाता वहाके दीवान और पुलिस अधिकारीको अपने आनेकी पहले सूचना देता। अुसीमें यह आश्वासन भी दे देता कि सघ

अधिकारियोंकी सहानुभूतिके साथ ही काम करना चाहता है, जिन प्रवृत्तियों पर राज्यको आपत्ति होगी, वे वहां शुरू नहीं की जायेंगी और अगर अुन्हें मेरा आना नापसन्द होगा तो मैं नहीं आअूंगा। विरोधी या सभाव्य विरोधीको पहलेसे निश्चिन्त कर देनेकी बापूकी अिस कार्यप्रणालीका यह असर हुआ कि अिक्कीस रियासतोंमें वासवाडेके सिवा और किसी रियासतने मेरे जाने पर आपत्ति नहीं की। अुस रियासतने भी कुछ समय बाद मुझे बुलावा भेज दिया। मैं जिस रियासतमें पहुंचता सबसे पहले दीवान और पुलिस तथा दूसरे महकमोंके अुच्चाधिकारियोंसे मिलकर अुनका शका-समाधान करता। नतीजा यह हुआ कि हरिजन-कार्यमें किसी राज्यने बाधा नहीं पहुंचाअी और कुछ राज्योंने तो सहायता भी दी। सनातनियोंकी ओरसे भी कोअी खास बाधा नहीं हुअी, क्योंकि मैं जहां भी जाता, पहले सनातनी नेताओंसे अवश्य मिल लेता था और अुनके विरोधको कुछ न कुछ कम कर ही देता था। हर जगह कुछ सुधारक, दो चार हरिजन-सेवक और अेकाध कार्यकर्ता भी मिल जाते थे। अनपेक्षित स्थानोंमें अितनी सफलता मिलना गांधीजीके पुण्य-प्रतापका ही फल था।

१३९

सबसे अधिक आश्चर्य — सानदाश्चर्य — तो मुझे अुस दिन हुआ, जब कोअी विशेष दिवस मनानेके सिलसिलेमें अजमेरके नये बाजारकी चौपडमें अेक जुलूस निकला। यह स्थान कट्टरपंथियोंका गढ है। मगर देखता क्या हूं कि थोडी देरमें वकील, डॉक्टर और शिक्षित समुदायके लोग ही नहीं, व्यापारी और पुराने विचारके लोगोंकी भी भीड़ लग गअी। सबने अेक अेक झाडू-टोकरी अुठाअी और कतारें बनाकर हरिजन-सेवाके नारे लगाते और गीत गाते जुलूस बनाकर आगे बढे। जब यह पंक्तिबद्ध मानव-समूह रूढिवादी मुहल्लोंमें होकर गुजरा, तो लोगोंके अचभेका पार नहीं रहा और माताओं और बहनें छतों पर विस्मयपूर्ण दृष्टिसे देखने लगीं। हरिजनोंके मुहल्लोंमें पहुंचकर जब 'अूंची जाति' वालोंको सफाअी करते देखा, तो हरिजन भी चकित हो गये! वस्तुत: अैसा लग रहा था कि लंगोटीधारी गांधीबाबाने भारतमें अेक सामाजिक क्रान्ति कर दी है!

१४०

सन् १९३४ में गांधीजीने हरिजन-कार्यके लिअे देश भरका दौरा किया। कार्यमें केन्द्रित (intensive) और व्यापक (extensive) दोनों पहलुओं पर नजर रखने और दोनोंका साथ साथ विकास करते थे। वे दोनोंको अेक-दूसरेके लिअे पूरक और परस्पर अनिवार्य मानते थे। अुन्हें जिस महान यज्ञमें आहुति देनेवाले हजारों कार्यकर्ता, राष्ट्रव्यापी वातावरण और विपुल धनराशिकी जरूरत थी। अिसके लिअे मुल्क भरका पर्यटन आवश्यक था।

१४१

लेकिन वे जितने कुशल सगठनकर्ता थे, अुतने ही वीर सुधारक भी थे। अुन्होंने अपना दौरा सबसे पहले कट्टरताके सबसे बडे गढ दक्षिणमें रखा। तामिलनाड, आन्ध्र और मलबारके सबसे मुश्किल किले सर्वप्रथम सर करनेका निश्चय किया। ये वे प्रदेश थे जहा मनुष्य अछूत ही नही, अगम्य और अदृश्य भी माना जाता था। पचम वर्णके अिन्सानोका स्पर्श तो दूर रहा, अुनकी परछाअी पड जाना ही नही, अुनके दर्शन हो जाना भी पाप समझा जाता था। सवर्णोको देखकर अिन अभागे प्राणियोको पेडोकी या और किसी चीजकी आडमें छिप जाना पडता था। अिस दुर्गम दुर्गको विजय करनेका साहस करना अेक अनुपम योद्धाका ही काम था।

१४२

मुझे भी अिस प्रवासमें अेक मासके लगभग गाधीजीके साथ रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। अुन्होंने पहला झटका तो शुरूमें ही दे दिया। श्री चद्रशकर शुक्ल मुझसे छोटे थे। अुनकी तरफ अिशारा करके बोले, "अिनके हाथके नीचे काम करोगे ? अिस प्रश्न पर मुझे तो चोटसी लगी ही, जमनालालजी भी, जो दिल्लीके बिडला भवनमे पास ही खडे थे, आश्चर्यसे देखने लगे। वे मेरे स्वभावसे वाकिफ थे। अुन्हे शका थी कि मै कही अिनकार न कर् दू। परन्तु मुझे बापूके साथ चौबीसो घटे रहकर अुन्हे जानने और हरिजन आन्दोलनका निकटसे अध्ययन करनेका लोभ अितना प्रबल था कि निर्णय करनेमें अधिक देर नही लगी। और मैंने 'हा' कह दिया। मैंने देखा कि बापू हर विषयके निष्णातको दूसरी तरह 'छोटा' आदमी होने पर भी अुसकी सामाजिक या बौद्धिक स्थितिकी परवाह न करके सामान्य मनुष्यसे अधिक महत्त्व देते थे। अिसी घिसाअीके लिअे, समता पैदा करनेके लिअे, वे भोजनालयमें पुरुषोसे स्त्रियोके अधीन, खादीकार्यमे विद्वानोसे अपढ निपुणोके मातहत, सफाअीके काममें अमीरोसे गरीबोकी देखरेखमें और पुराने कार्यकर्ताओसे नये गाधीमार्गियोके हाथके नीचे काम लेते थे।

१४३

जाडेके दिन थे। बापूकी हरिजन-यात्रामें मै भी दिल्लीसे अुनके साथ था। दिल्लीकी सरदी, खूब गरम कपडे पहनकर चला। मुझे अनुभव नही था कि अुत्तर और दक्षिणके प्रदेशोमें तापमानमें अितना गहरा अन्तर होता है। जब बेजवाडा पहुचे तो सुबहका वक्त था। मै गरम कोट पहने ही अुतरा। अपार भीड थी। अेक तो गरमी और दूसरे भीड — मै पसीनेमें तर हो गया और भीडके बीच बुरी तरह फस गया। दम घुटने लगा और बेहोशी-सी आने लगी। यह नौबत कोअी अेक-दो मिनटमें ही आ गअी। अितनेमें बापूको, जो कुछ ही आगे चल रहे थे, खयाल आया और

मुड़कर देखा। अुन्होंने मुझे तुरन्त स्वयंसेवकोंके घेरेमें लेकर अपने साथ कर लिया। अगर अुनमें अितनी तत्पर बुद्धि और साथियोंकी चिन्ता न होती, तो मेरा तो अुस दिन भगवान ही मालिक था। दोपहरको भोजनके समय अुन्होंने मुझे बेजवाडेका ही १९२१ का अेक किस्सा सुनाया कि किस तरह वे भीड़से बचकर सभासे निवास-स्थान पर पहुंच गये थे और भीड़में चलने और निकलनेके अुपाय बताये। साथ ही भूगोलके ज्ञानकी ओर ध्यान दिलाकर समझाया कि भिन्न भिन्न प्रदेशोंके जलवायुके अनुसार कपड़े काममें लेनेकी सावधानी रखनी चाहिये।

१४४

अकसर महापुरुषोंके लिअे कहा जाता है कि अुनमें दूरसे जितना आकर्षण होता है अुतना नजदीक जाने पर नहीं रहता। मगर गांधीजीमें मैंने अुलटी ही बात पाओ। मैंने देखा कि वे जो मानते थे वही कहते थे, जो कहते थे वही करते थे और जो करते थे वही दूसरोंसे करवाते थे। वे अितने गुथे हुअे कार्यक्रममें भी प्रार्थना, सैर, कताअी, मालिश, भोजन आदि सब काम समय पर कर लेते थे, सुखकी नींद सोते थे, अपना स्वास्थ्य अच्छा, स्वभाव कोमल और चेहरा प्रसन्न रख पाते थे। अितना विलक्षण था अुनका मनोबल!

१४५

कभी लोगोंको डर था कि हिन्दू समाजकी कट्टरता गांधीजीके अिस क्रांतिकारी आन्दोलनको बरदाश्त नहीं कर सकेगी, अुनकी लोकप्रियता घट जायगी और अुनके राजनीतिक सामर्थ्यको गहरा धक्का लगेगा। अिन लोगोंके खयालमें ब्रिटिश सरकार अैसे ही परिणामोंकी आशामें अुन्हें जेलमें असाधारण सुविधाअें देने, अुन्हें जेलसे छोड़ने और बाहर अबाधित रूपसे काम करने देनेको राजी हुअी थी। लेकिन मैंने आंखों देखा कि जहां कहीं वे गये, अपार भीड़ने अुनका स्वागत किया, अुनकी हरिजनसेवार्थ फैली हुअी दानकी झोली भर दी और अिक्के-दुक्के लोगोंको छोड़कर सर्वसाधारणने अुनके कार्योंका समर्थन किया। अिससे जहां हिन्दू जनताका विवेक प्रगट होता था, वहां गांधीजीकी विचार-दृढ़ता भी साबित होती थी। अिस दृढ़ताका अेक प्रबल प्रमाण मैंने यह भी देखा कि रातको नौ बजेसे पांच बजेके बीच सोनेके समय रेलवे स्टेशनों पर जो भीड़ अुनके दर्शनोंके लिअे आती थी, अुसे दर्शन देनेको वे कभी नहीं अुठते थे। अंधश्रद्धा, दुराग्रह और अज्ञानवश लोग 'महात्मा गांधीकी जय' के नारे लगाते, बापूके डिब्बेको घेर लेते और कभी कभी खिड़कियां तोड़ देनेकी नौबत भी ला देते, तो भी बापू टससे मस न होते। जिस हरकतको बापूजी अनुचित समझते, जिस प्रवृत्तिको दूषित मानते और जिस कृतिको ज्यादती खयाल करते, वह अपनोंकी होती तो भी अुसके सामने वे हरगिज नहीं झुकते थे। अिस प्रकार वे अपनी भक्त

जनताको विवेक, अनुशासन और मर्यादा पालन करनेका पदार्थपाठ पढाते थे और अपनी लोकप्रियता घटनेकी जरा भी परवाह नही करते थे।

१४६

गाधीजीके अुत्कट राष्ट्रभाषा प्रेमका परिचय मुझे अिसी दौरेमें हुआ। स्वय बहुत अच्छी हिन्दी न जानते हुअे भी अुसका अधिकसे अधिक प्रयोग तो वे बोलचाल और पत्रव्यवहारमें सदा ही करते थे और हिन्दी-भाषी प्रान्तोमें हमेशा हिन्दीमें ही भाषण देते थे। परन्तु अहिन्दी-भाषी प्रान्तोमें भी आम तौर पर और दक्षिण भारतमें खास तौर पर मुख्यत हिन्दीमें ही बोलते थे। अुनके भाषणोके अेक अेक वाक्यका अनुवाद स्थानीय कार्यकर्ता तेलुगु या तामिलमें करते जाते थे। अग्रेजीमें बहुत ही कम जगह और बहुत आग्रह किये जाने पर ही और वह भी गौण रूपमें ही बोलते थे। अिस प्रकार हरिजन-कार्यके साथ साथ वे राष्ट्रभाषाका प्रचार भी प्रचड रूपमें कर लेते थे।

१४७

अिस यात्रामें अेक बडी खूबी बापूकी मैंने यह भी देखी कि वे जहा कही जाते वही विरोधियोके दृष्टिकोणको समझते और अुसमें जितना सत्य प्रतीत होता अुसे ग्रहण करते, अपनी बात दलीलोके साथ अुनके गले अुतारते, अुनके अूधम और धाडको सहन करते हुअे भी अपने व्यथित अनुयायियोके सार्वजनिक आवेशसे अुनकी रक्षा करनमें कभी नही चूकते थे। मै देखता था कि कभी कभी सनातनियोकी ओरसे कोअी बहुत कडवी बात कही जाती, तो भी अुसे हस कर सह लेते थे, मगर जिसमें धमकीकी गध आती अुसके सामने हरगिज नही झुकते थे। नेतृत्वका यह गुण बापूमें असाधारण मात्रामें था।

१४८

लोगोंकी श्रद्धा और भक्तिका सदुपयोग करना भी वे खूब जानते थे। भीडको दर्शन देनेके लिअे जब वे रेल्वे स्टेशनो पर खिडकीसे मुह निकालते तभी मार्गमें हरिजन-कार्यके लिअे चदा मागनेको हाथ भी फैला देते थे। लोगोंको महात्माजीके स्पर्शका लोभ होता ही था। बातकी बातमें रुपये-पैसे, नोटो और छोटे-मोटे गहनोंके रूपमें सैकडो रुपये जमा हो जाते। सभाओमें भाषण देनेके बाद भी वे साथियोंको हरिजन-कोषके लिअे भीखकी झोलिया लेकर अुपस्थित जनतामें बखेर देते थे। झोलिया अकसर भरकर लौटती थी और हजारो रुपये आसानीसे अिकट्ठे हो जाते थे। बडे आदमियोके हस्ताक्षर (autograph) लेनेकी जो हवा आजकल युवक-युवतियोमें चल पडी है, अुसका भी यह काठियावाडी बनिया अच्छा व्यापार कर लेता

था। प्रत्येक हस्ताक्षरकी अुन्होंने पाच रुपये फीस लगा रखी थी। अिससे भी खासी रकम मिल जाती थी। कुछ बहनें भक्ति-भावसे बडे जेवर भी भेंट करने आती थीं। अुनके साथ व्यवहारमें अितनी विशेषता होती थी कि अुन्हें बापू अपने डब्बेमें या कमरेमें बुलाकर अुनकी भेंट स्वीकार करते और आशीर्वाद, विनोद और कामके दो शब्द कहकर प्रसन्न वदनसे विदा करते थे।

१४९

हिन्दीको बापू कितना महत्त्व देते थे, यह अेक छोटीसी घटनासे अिसी यात्रामें प्रगट हुआ। भाओी चन्द्रशकर शुक्ल यात्राकी साप्ताहिक चिट्ठी 'हरिजन' के लिअे अग्रेजीमें लिखा करते थे। अुनका अनुवाद मैं 'हरिजनसेवक' के लिअे हिन्दीमें करके भेज देता था। अेक दिन बापूने जब मुझसे नियमानुसार वह पढ़वाकर सुना तो कहने लगे, 'तुम हिन्दीमें स्वतन्त्र साप्ताहिक चिट्ठी नही लिख सकते?' मैंने कहा, 'लिख तो सकता हू मगर शायद अितनी अच्छी न हो और मुख्य पत्र तो आपका हरिजन ही है। अुसका अनुवाद 'हरिजनसेवक' में चला ही जाता है।' 'नही, नही', वे तुरन्त बोले, 'यह खयाल तुम्हारा सही नहीं है। मै तो 'हरिजन' कर्तव्यवश ही निकालता हू, क्योंकि विदेशोंमें, सरकारमें और देशमें भी अैसे लोग हैं जो हिन्दी नही जानते और जिन्हें मुझे अपनी बात बतानी है। अिसलिअे अग्रेजीका आश्रय लेना पडता है। अन्यथा जनताके लिअे तो हिन्दुस्तानी माध्यम ही हो सकता है और जनता ही मेरे लिअे मुख्य है। मगर मेरी कठिनाअी यह है कि अग्रेजी जाननेवाले तो महादेव और प्यारेलाल जैसे मेरे कुछ साथी हैं, जो मेरे विचारोंको अच्छी तरह समझते हैं और व्यक्त कर सकते है। हिन्दीके अैसे लेखक साथियोंकी मेरे पास कमी है।' अिसके बाद मैंने अेक या दो साप्ताहिक चिट्ठिया लिखी और बापूने अुन्हें पसन्द भी किया। परन्तु मेरा स्वास्थ्य बिगड जानेके कारण मुझे यात्राके बीचमें ही अजमेर लौट आना पडा और वह क्रम टूट गया।

१५०

अिस दौरेमें मेरा मुख्य काम बापूके हिन्दी पत्रव्यवहारको सभालना था। हरिजन आन्दोलनके कारण अुनकी हिन्दीकी डाक बहुत भारी हो गअी थी। बापू नये साथियोंको अपनी ओरसे चिट्ठी लिखनेका अधिकार नही देते थे। अुनके पुराने साथियोंको भी यह अधिकार सीमित ही होता था। जहा तक होता वे, छोटासा सही, जवाब खुद ही देनेकी कोशिश करते थे। स्त्रियो, बच्चो, हरिजनो, विद्यार्थियो, कार्यकर्ताओं, अल्पसख्यको और विदेशियोंको बापू मुलाकात और पत्रव्यवहार दोनोंमें तरजीह देते और अकसर स्वय ही अुनसे बातचीत करते और अपने ही हाथसे अुन्हें पत्र लिखते थे। मुझे वे दोपहरके भोजनके समय बुलाते और चिट्ठिया सुनकर अुनके जवाब

नोट करा देते थे। जिन पत्रोंका अुत्तर पूरा ही अुन्हें अपनी कलमसे लिखना होता, अुन्हें वे अपने पास रख लेते थे। मैं डाकसे पहले पहले खतोंको तैयार करके अुनसे हस्ताक्षर करा लेता और डाकमें डालनेको रख देता था। बापूके पत्रव्यवहारके सबंधमें कुछ खास बातें अुल्लेखनीय हैं।

अेक तो अुनके पत्र संक्षिप्त होते थे। थोड़ेमें बहुतसा सार रख देनेकी जैसी अुनकी लेखन शैलीकी विशेषता थी, वैसी ही पत्रव्यवहारकी भी थी। दूसरे, सफाअीका ध्यान बहुत रखा जाता था। काटफांस अुन्हें बिलकुल पसन्द नहीं थी। अिसमें वे विचारहीनता और लापरवाही पाते थे। तीसरे, अक्षरोंकी सुन्दरता पर अुनका बड़ा आग्रह रहता था और अपने अक्षरोंकी आलोचना करनेका मौका वे कभी हाथसे नहीं जाने देते थे। चौथी और सबसे बड़ी बात थी मितव्ययकी। पोस्टकार्डसे काम चल सकता तो कभी लिफाफा अिस्तेमाल नहीं करते थे और लेखों और बयानोंके मसौदोंकी तरह पत्र लिखनेके लिअे भी आम तौर पर अखबारोंके रैपर या रद्दी हुअे अेक तरफ लिखे हुअे खत काममें लिये जाते थे। जहां तक अुनका अपना संबंध था, अुनके लिअे कोअी चीज गुप्त नहीं थी। परन्तु दूसरोंका खयाल करके या लम्बा पत्र लिखना होता तभी वे लिफाफा काममें लेते थे। पत्रोंको दुबारा पढ़े बिना नहीं भेजते थे। और कभी अितना समय न मिलता तो पत्रके कोने पर लिख देते थे कि दुबारा नहीं पढ़ा। अितनी सावधानी वे अपनी तहरीरमें बरतते थे।

अेक दिन कहने लगे, 'मैं तुम्हें अुत्तरके मुद्दे नोट कराता हूं। अिसमें समय बहुत लगता है और काम कम होता है। अब मेरे विचारों और रीतिनीतिसे तो काफी परिचय हो गया दीखता है। क्या मुद्दे सुनकर जवाब तैयार नहीं कर सकते? अिसमें समय बचेगा और काम अधिक होगा।' मुझे लगा कि बुड्ढा मेरी स्मरण और ग्रहण-शक्तिकी परीक्षा ले रहा है। मैंने कहा, 'मेरे पिताजी तो अैसा ही करते थे। मैं भी करके देख लूं तो क्या हर्ज है?' अुस दिनसे वैसा ही होने लगा और जब तक मैं दौरेमें साथ रहा यही परिपाटी बनी रही। अिस प्रकार सहज ढंगसे बापू अपने साथियोंकी परीक्षा लेते और अुनकी शक्तिका विकास करते थे।

१५१

भाषाकी शुद्धि पर बापूका आग्रह मैंने अिसी पत्रव्यवहारमें देखा। आजकल पढ़े-लिखे लोगोंमें आपसमें भी अंग्रेजी लिखने-बोलनेकी कुटेव तो है ही, हिन्दी या देशी भाषाके साथ अंग्रेजीका पुट लगानेका दोष भी बहुत है। बापूको अिन दोनों ही आदतोंसे चिढ़ थी। अिस यात्राके पत्रव्यवहारमें कअी बार बापूको मैंने नौजवानोंके गलत अंग्रेजी लिखने या गंगा-जमनी भाषा लिखने पर अुलहना देते देखा। कभी कभी तो वे अुनके अंग्रेजीका गलत प्रयोग अुद्धृत करके अुनसे पूछते कि विदेशी भाषा और वह भी अैसी अशुद्ध लिखनेसे क्या लाभ? अुनकी अिस मीठी डांटके फलस्वरूप कअी लोगोंके अुत्तर ये आते कि वे आयंदा खालिस हिन्दीमें ही पत्रव्यवहार करेंगे

और अंग्रेजी लिखना ही पडी तो शुद्ध लिखनेका ध्यान रखेंगे। बापू हर मौके पर अपने देशवासियोंका सही मार्गदर्शन करनेका ध्यान रखते थे।

१५२

जब बापू हरिजन-यात्रा पर रवाना हुअे तो रास्तेमें नागपुरसे वर्धा तक डॉ० मुंजे भी साथ हो लिये। बातें शुरू हुआी। डॉक्टरका प्रिय विषय था हिन्दू-मुस्लिम संबंधों और बापूकी 'मुसलमानोंको खुश करनेकी नीति' की आलोचना। अुनके कथनका सार यह था कि गांधीजीने मुसलमानोंके साथ बेजा रियायतें करके अुनके दिमाग बिगाड़ दिये हैं। सबसे बड़ी शिकायत यह थी कि मुसलमान हिन्दू स्त्रियोंको भगा ले जाते हैं और अुन पर बलात्कार भी करते हैं। बापूने कहा, 'मैं अपने ढंगसे मुसलमानोंसे निपटता हूं। सभीके अत्याचारोंका सामना करनेका मेरा अपना तरीका है। अुसके अनुसार मैं प्रेमसे समझानेकी कोशिश करता हूं। अिससे काम नहीं चलता तो स्वयं कष्ट अुठाकर अन्यायका विरोध करता हूं। किसी बहन पर बलात्कार होता दिखाअी देगा, तो मैं अपनी आहुति देकर अुसे बचानेका प्रयत्न करूंगा। आपका रास्ता दूसरा है। अुसे गलत मानते हुअे भी मैं आपके विश्वासकी सचाअी स्वीकार करनेको तैयार हूं। परन्तु आप मुझे मेरा रास्ता छोडकर चलनेको क्यों कहते हैं? मेरे अुपाय आपको ठीक नहीं लगते, तो अपने अुपायों पर आप अमल क्यों नहीं करते? अगर स्त्री-जातिके सतीत्वकी रक्षाके लिअे तलवार अुठाना जरूरी समझते हैं, तो अुसे म्यानमें क्यों रख छोड़ा है? मनुष्यकी सचाअीकी परीक्षा अुसके अपने सिद्धान्तके अनुसार व्यवहार करनेमें ही होती है।'

डॉक्टर साहब तो निरुत्तर हो गये, मगर मुझे अुनसे चार पांच वर्ष पूर्व बम्बअीके सरदार होटलमें हुअी बातचीत याद आ गअी। अुस समय मैं देशी राज्य प्रजा परिषदके अधिवेशनमें गया था। मुंजे साहबको यह आन्दोलन पसन्द नहीं था, क्योंकि अधिकांश रियासतें हिन्दू होनेके कारण हिन्दू राजाओंका ही विरोध अधिक होता था। अुन्होंने कहा, 'मुसलमान हमारी स्त्रियोंके साथ कितने अत्याचार करते हैं, अुनके खिलाफ लड़ना चाहिये।' जब मैंने अुन्हें बताया कि हिन्दू राजा और जागीरदारोंके यहां भी अिस प्रकारके जुल्म कम नहीं होते, तो कहने लगे, 'भाअी, आखिर तो वे हमारे धर्मभाअी ही हैं। हमें बरदाश्त करना चाहिये और प्रेमसे सुधारना चाहिये।' मैंने कहा, 'मुसलमान भी तो हमारे देशभाअी हैं। अुनके साथ भी वैसी ही सहिष्णुता और मुहब्बतसे क्यों न काम लिया जाय?' अस्तु, बापू-मुंजे संवादसे मैंने पहली बार यह समझा कि मतभिन्नता तो अलग अलग व्यक्तियोंमें स्वाभाविक है, परन्तु मनुष्यकी अीमानदारीकी कसौटी यह है कि वह अपने विश्वास, सिद्धान्त या विचारके अनुसार आचरण करता है या नहीं।

१५३

मैंने खादी तो १९२० की नागपुर काग्रेससे पहले ही पहनना शुरू कर दिया था। बापू वर्धा आ चुके थे और अुनके प्रथम सपर्कसे ही हम दपति खादीधारी बन गये थे। अहमदाबादकी काग्रेसके बाद १९२२ में मैं जब अपनी जन्मभूमि नीमके थाने पहुचा, तो मेरी माने मुझे नये भेसमें देखा। मेरा कुर्ता मोटी खादीका और धोती जोड लगी हुअी वैसी ही खादीकी देखकर अुसे दु ख हुआ। वह जानती थी कि मैं बढिया कपडे पहननेका शौकीन रहा हू। वह मानती थी कि मेरे खाने-पहननेके दिन है। अितने पर मैंने यह प्रस्ताव और रख दिया कि मा मुझे कातना सिखाये। 'हा, यही कसर रही थी। अब औरतोका काम भी सीख ले।' मैंने खर्चकी बचत, स्वदेशी और कअी बातें समझानेकी कोशिश की, लेकिन अुसको अेक भी नही जची। अन्तमें जब मैंने बताया कि गाधीजी गोभक्षक अग्रेजोको निकाल देना चाहते हैं, अिसके लिअे और विधवाओको पवित्र रहकर घर बैठे रोजी देनेके लिअे खादी पहनने और चरखा चलानेकी गाधीजीकी बात माननी जरूरी है, तो मेरी माको गाधीजीका यह दयाभाव सोलह आने गले अुतर गया और अुसने मुझे खुशी खुशी कातना सिखा दिया। अिस प्रकार बापूके अलग अलग काम कट्टरसे कट्टर लोगोको भी अपील करते थे।

१५४

शरीरको बापू brother ass (गधा भाअी) कहते थे। काम भी अुससे वैसे ही लेते थे। परन्तु अुनका खयाल था कि यह परमात्माका दिया हुआ सेवाका साधन है, अिसलिअे अुसका पूरा सदुपयोग करना हो तो अुचित पथ्य, नियम, व्यायाम, सफाअी और आरामसे अुसको सभालकर रखना चाहिये। तदनुसार वे स्वस्थ और दीर्घ जीवनके लिअे स्वय तो सम्यक् आहार-विहार रखते ही थे, अपने साथियोसे भी अैसे ही आग्रहकी अपेक्षा रखते थे और अुनकी तदुरुस्तीके बारेमें अितनी चिन्ता रखते थे कि अुसकी खातिर और सब काम खुद भी छोड देते थे और अुनसे भी छुडवा देते थे। मगर बीमारो और कमजोरोसे अुनकी स्थितिके अनुकूल काम करानेका भी अुतना ही ध्यान रखते थे।

१५५

राजपूताना हरिजन-सेवक-सघके अेक प्रमुख नेताने चन्दा लिख तो दिया, मगर सघको दिया नही। कअी तकाजे किये गये, मगर बेकार साबित हुअे। मैंने बापूसे पूछा, क्या किया जाय? 'किया क्या जाय?', वे तुरन्त बोले, 'अुनसे कह दो कि या तो तीन दिनमें वादा पूरें या अिस्तीफा दे दें।' मैंने वैसा ही किया और चदा जमा हो गया! बापूने जरा भी परवाह नही की कि नेताकी नाराजगीसे काममें हानि

होगी। वे स्वयं वचन पालन करनेमें जितने दृढ थे, अुतने ही अपनोंसे पालन करानेमें भी मजबूत थे।

१५६

हरिजन-यात्रामें मद्रास पहुंचे तो वहांके मारवाड़ियों और गुजरातियोंने बापूको अभिनंदन-पत्र और हरिजन-कार्यके लिअे थैलिया अर्पण की। अभिनंदन-पत्रोंमें बापूके प्रति गहरी श्रद्धा और अुनकी सेवाओंकी अत्यंत प्रशंसा थी और राजस्थान और गुजरात काठियावाड़के गौरव पर जोर दिया गया था। अुत्तरमें बापूने कहा, "मानपत्रोंमें तारीफोंके पुल नहीं बांधने चाहियें। जिनका सम्मान किया जाय अुसकी सेवाओंका अुल्लेख करके अुसका अनुकरण करनेका अिरादा जरूर जाहिर किया जा सकता है, और वह स्वाभाविक भी है और अुचित भी है। परंतु जिस संस्था या समाजकी ओरसे मानपत्र दिया जाय, मुख्यत. अुसकी आवश्यकताओं, समस्याओं और सुधार-योजनाओं पर प्रकाश डालना चाहिये, ताकि अुसके अुत्तरमें मेहमान अपने विचार और सुझाव दे सकें। साथ ही जो जातियां दूसरे प्रान्तोंमें जाकर धन कमाती हैं अुन्हें अपने मूल प्रान्तोंकी सेवाका खयाल गौण और वर्तमान क्षेत्रोंकी भलाअीका ध्यान अधिक होना चाहिये। आप लोग जहां रहते हैं वहांके लोगोंमें आपको घुलमिल जाना चाहिये और अुन्हींके कल्याणके लिअे अधिक धन और समय लगाना चाहिये।" मुझे पहली बार आदर्श मानपत्रकी कल्पना हुअी और प्रचलित प्रथासे भिन्न यह विचार मिला कि प्रवासी राजस्थानियोंको मुख्यतः अपने नये व्यवसाय-क्षेत्रोंके प्रति वफादार होना चाहिये। यह विचार सचमुच प्रान्तीय रागद्वेष कम करने और राष्ट्रमें अेकता और मेल बढ़ाने तथा शोषण घटानेका नया मार्ग सुझानेवाला था।

१५७

अिस यात्राके अनुभवों और गांधीजीके दिन-रातके सहवाससे अनुप्राणित होकर जब मैं अजमेर लौटा तो सालभरमें ही राजस्थानमें हरिजन सेवक समितियोंका जाल बिछ गया। अवश्य ही अिसमें साथियोंका बहुत बड़ा हाथ था, फिर भी जिस द्रुत गतिसे पाठशालाओं और अुनके विद्यार्थियोंकी संख्या बढ़ी, जिस तादादमें हरिजनोंने शराब, मुर्दार मांस और दूसरी बुरी आदतें छोड़ीं और अेक सौसे अधिक सेवक निकल आये, अिन सारी सफलताओंका असली रहस्य बापूके महान व्यक्तित्व और अुनके महान कार्यमें ही छिपा हुआ था। अिन्हीं दोनों प्रेरणाओंसे ये कार्यकर्ता जब अजमेरके पास अेक गांवमें खोले गये सेवा-आश्रममें तालीम लेने आये, तो अुनकी कड़ी शर्तें खुशी-खुशी पालन करने लगे। यह प्रशिक्षण काल छह मासका था। अुनके लिअे खादी पहनना, कताअी-पिंजाअी सीखना, शिक्षा-पद्धति और गांधी साहित्यका अध्ययन करना अनिवार्य था। वे मलमूत्रकी सफाअी करते, चक्की चलाते,

गावके गदे मुहल्लोमे झाडू लगाते, मिट्टी खोदते, भोजन बनाते, पानी खीचते और अपना व आश्रमका सब काम अपने हाथोसे करते थे। यह सब वे अेक अत्यत पिछडे हुअे प्रान्तके निवासी होकर भी खुशीसे न करते, यदि अुनमें अेक प्रकारकी मिशनरी भावना काम नही कर रही होती। अिसी भावनाके कारण सारे आग्रहो और पूर्वग्रहोकी अुपेक्षा करके वे राजनीतिक आकर्षणोसे अलग रहे, छूत-अछूत सभी बिना किसी भेदभावके खानपान और रहन-सहनमें अेक साथ रहे और जलवायु, रुपये-पैसे और कौटुम्बिक व सामाजिक विरोध सबधी कठिनाअीकी अवहेलना करके भी अपने कर्तव्य-पालनकी योग्यता प्राप्त करनेमें लगे रहे। लेकिन अिस सारी तपस्याकी तहमें वही बापूकी प्रेरणा विद्यमान थी। वह प्रेरणा अितनी बलवान थी कि आज भी अुन कार्यकर्ताओमें से बहुत अधिक लोग सार्वजनिक क्षेत्रमें कही न कही सेवा कर रहे है और कुछ तो राज्योके मत्री तक रहे और है।

१५८

अजमेरके हरिजन-कार्यमें कुछ क्रान्तिकारी युवक भी शरीक हुअे। स्वय अिस दलमें रहकर मैं देख चुका था कि अिन लोगोका जीवन कितना शुद्ध और अुच्च था, अुनका कार्यक्रम कितना साहसपूर्ण था और अुनमें कर्तव्यनिष्ठा कितनी जबर्दस्त थी। मुझे मालूम था कि वे पूजीपति या सामन्तवादी व्यक्तियोके यहासे डाके डालकर रुपया ले जा सकते है, मगर मुझे अुनसे चोरी जैसे कायर कृत्यकी स्वप्नमें भी आशा नही थी। मैंने अुन पर विश्वास किया, परतु पता नही अुन पर साम्यवाद या विप्लव-वादके किस विपर्यासका भूत सवार हुआ कि अुन्होने हरिजन-सेवक-सघको अेक पूजी-वादी सस्था समझ लिया, विश्वाससे मिली हुअी सुविधाओका दुरुपयोग करके वे रातको चुपकेसे सघके दफ्तरमें घुस गये और मेजका ताला तोडकर लगभग ५०० रुपया चुरा ले गये। अिन नकली अिन्कलाब-पसन्दोकी अिस कमीनी हरकतने मेरे दिल पर बडी बुरी प्रतिक्रिया पैदा की। अुस समय तो मुझे सन्देह ही हुआ, हालाकि वह सन्देह बहुत प्रबल था। बादमें अुसी दलके लोगोसे पता चला कि अिसी रुपयेसे वह पिस्तौल खरीदा गया, जिसके शिकार अजमेरकी खुफिया पुलिसके डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट श्री डोगरा हुअे।

खैर, मैंने पुलिसको तो साथियोके आग्रहके बावजूद अिस चोरीकी सूचना नही दी और बापूसे सलाह पूछी। अुनका स्पष्ट आदेश आया कि हमारी ओरसे पुलिसको खबर न दी जाय, अुसे स्वतत्र रूपसे पता चल जाय और वह हमसे पूछताछ करे तो जो बात हमें जैसी और जितनी मालूम हो अुसे कह दे। अपनी ओरसे जिन पर शक हो अुनसे दर्याफ्त करे, वे अपराध स्वीकार कर लें और रुपया लौटाकर भविष्यमें अैसा कुकर्म न करनेका वचन दे दें तो अुन्हे क्षमा कर दिया जाय और वे अैसा न करे तो अिस हानिको सहन कर लें। अन्तमें यह आखिरी बात ही हुअी। अैसी थी बापूकी क्षमाशीलता और अुदारता, और अैसा था अुनका अपराध-चिकित्साका

मनोवैज्ञानिक मार्ग, जिसके अनुसार मनुष्य दण्ड देकर नही, परन्तु प्रेमसे ही सुधर सकता है।

१५९

हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें बापू अजमेर भी आये थे। अुन्हीके साथ लगी हुअी स्वामी लालनाथकी मडली भी आ पहुची। यह मडली बापूके सनातनी विरोधियोकी थी और जहा बापू जाते वही अुनका पीछा करती, अुन्हे काले झडे दिखाती और अुनके अस्पृश्यता-निवारण कार्यके विरुद्ध प्रचार करती। बापू अपने विरोधियोंके लिअे अुतनी ही आजादीके पक्षमें थे, जितनी वे अपने लिअे चाहते थे। अिसलिअे हर जगह मडलीकी रक्षाका ध्यान रखते और अपने साथियो और जनताको अुनके प्रति सहनशील होनेका अुपदेश देते थे। दुर्भाग्यवश अनेक सावधानिया रखते हुअे भी अिन लोगोंके साथ अजमेरमें मारपीट हो गअी। अिस पर गाधीजीको गहरा आघात पहुचा। अुन्होने स्वामी लालनाथकी मरहमपट्टी करवाअी और अुन्हे मच पर बुलाकर अुनके घावको दिखाकर जनताको शर्मिन्दा किया और अपने विरोधी विचार प्रगट करनेका स्वामी लालनाथको अवसर दिया। कराची पहुचकर बापूने अिस घटनाके प्रायश्चित्त-स्वरूप ७ दिनके अुपवासकी घोषणा की। जब मैंने अखबारमें यह खबर पढी तो यह हाल हो गया कि काटो तो खून नही। अितनी आत्मग्लानि हुअी। वह तब मिटी जब कुछ दिन बाद मारपीट करानेवालोमें से अेकने बताया कि वह योजनापूर्ण थी और अिसलिअे कराअी गअी थी कि स्थानीय सामाजिक क्षेत्रके दो विरोधी पक्षोमें से अेकको, जो हरिजन सेवामें हमारे साथ था, बदनाम किया जाय। अुपवासके बाद जब मैंने यह रहस्योद्घाटन वर्धा जाकर बापू पर किया, तो वे अेक दीर्घ नि श्वासके साथ केवल साश्चर्य दु ख प्रगट करके रह गये। शायद अुनका आशय यह था कि हिंसक वृत्ति मनुष्यसे क्या नही करा सकती?

१६०

कुछ भाअियोंने बापूसे शिकायत की थी कि राजपूतानामें हरिजन सेवाके वृत्तान्त बहुत बढा-चढाकर प्रकाशित किये जाते है और दरअसल अितनी मात्रामें नही है जितना अखबारोमें प्रचार किया जाता है। अजमेर पहुचते ही बापूने मुझसे अिस शिकायतका जिक्र किया। ठक्करबापा भी मौजूद थे। मैंने कहा, 'बापू, हाथ कगनको आरसी क्या? वैसे तो बापा अिस प्रान्तके सगठन, व्यवस्था और कार्यसे परिचित है। अिनसे मालूम कर सकते है। परतु अिसकी भी जरूरत नही। आज ही आपको खुद असलियतका पता चल जायगा।' तीसरे पहर राजस्थानके कोने कोनेसे समितियोके मत्री और कार्यकर्ता अपनी छोटी छोटी थैलिया बापूके चरणोमें रखने लगे और बापा अुनके नाम सुनाने लगे, तो मैंने बापूके चेहरेसे देख लिया कि अुनका न सिर्फ शका-

समाधान हो गया है, बल्कि राजपूतानेके कामसे भी सतोष है। यह समारोह समाप्त होने पर अुन्होंने मुझ पर शब्दोंमें भी अपना समाधान और सतोप प्रकट कर दिया। साथ ही सफलतासे फूलनेके वजाय नम्र बननेका अुपदेश भी दिया। अिस प्रकार बापू अपने साथियोंके विरुद्ध लगाये जानेवाले आरोपोंके प्रति जितने जागरूक रहते थे, अुनकी सफाअी पर अुतने ही प्रसन्न भी होते थे और अुन्हे प्रोत्साहन देनेके साथ साथ अुनमें अभिमान भी पैदा न होने देनेकी सावधानी रखते थे।

१६१

असहयोग कालमे गाधीजी और दूसरे बडे राष्ट्रीय नेता अजमेर आते तो आम तौर पर स्व० गौरीशकरजी भार्गवके यहा ठहरा करते थे। हरिजन-यात्रामे जब बापू अजमेर आये तो स्वागत-समितिने अुनके ठहरनेका अिन्तजाम अपनी तरफसे दूसरी जगह किया। भार्गवजीने बापूको अुलहना दिया और कहा कि आपको कमसे कम मेरे घर पर अेक बार चलना तो जरूर चाहिये। बापूको अिस पर आपत्ति नही थी, परन्तु अजमेरके कुछ अैसे कार्यकर्ताओने, जिनकी बातका बापूजी पर कुछ असर माना जाता था, भार्गवजीके व्यक्तिगत जीवन-सबधी कुछ शिकायतोंके कारण बापूका अुनके यहा जाना नामुनासिब समझा। बापूने कहा, 'शिकायतें सही हो तो नही जाअूगा।' मगर शिकायत करना जितना आसान होता है अुतना अुसे साबित करना नही होता है। अन्तमे बापूने दृढतापूर्वक कहा कि, 'सुनी-सुनाअी बातो पर मैं किसीको दोषी नही मान सकता। अब गौरीशकरके यहा जाना मेरा धर्म है।' तदनुसार वहा गये और अिस प्रकार न्यायके मूल सिद्धान्तोका कड़ाअीसे पालन करके वे भार्गव परिवार पर अपनी अमिट छाप छोड गये।

१६२

अुसी समय प० अर्जुनलालजी सेठीका पत्र मेरे पास आया कि अुनकी हार्दिक अिच्छा है कि बापू अुनके घर पर पधारे। पत्र बडा विनम्र और भावनापूर्ण था। अिस मामलेमें भी अुपरोक्त कार्यकर्ताओंने अडगा लगाना चाहा। अुनकी दलील यह थी कि गाधीजीके वहा जानेसे सेठीजीकी प्रतिष्ठा बढेगी और वे अुसका दुरुपयोग करेंगे। बापूको यह भी कहा गया कि सेठीजी बापूके विरोधी हैं और अुनके खिलाफ प्रचार करते रहते हैं। बापूने कहा, 'मैं जानता हू वे मेरे विरुद्ध हैं। परतु यह कोअी कारण नही कि अुनके विनयपूर्ण निमत्रणको स्वीकार न करू।' मुझसे पूछा, 'तुम्हारी क्या राय है?' मैंने कहा, 'वे देशके अितने पुराने सेवक हैं कि अुनकी प्रतिष्ठा बढनेका प्रश्न अुठाना मुझे अशोभनीय लगता है। आपकी विचारधाराके अनुसार तो सेठीजीका विरोधी होना आपके लिअे अुनके घर जानेके विपक्षके बजाय पक्षमें अेक दलील है।

मेरे खयालसे अुसका अच्छा ही असर होगा।' हुआ भी वही। बापू गये तो सेठीजीने बापूके चरण छूकर अुनकी आरती अुतारी, बापूको हरिजन-सेवाके लिअे अच्छीनी रकम मिली और कांग्रेसके कार्यके प्रति अुदासीनता छोडकर सेठीजी अुसमें अमली दिलचस्पी लेने लगे! बापू अपने विरोधियोंके प्रति अुदारताका व्यवहार करके अुनके भी हृदय जीत लेते थे।

१६३

हमने अजमेरके नजदीक अेक गावमें जो आश्रम खोला था, अुसके बारेमें बापूने विस्तारसे पूछताछ की। जब मैंने अुनसे कहा कि हम फल और सागभाजी अजमेरसे मगाते हैं तो अुन्हें आश्चर्य हुआ। वे कहने लगे, 'मेरे खयालसे तो फल भी तुम्हें वही जो मिलें लेने चाहिये। सागभाजी तो वहींकी खानी चाहिये। तुम्हारी जरूरतकी चीज वहा पैदा न होती हो तो गाववालोंसे पैदा कराना शुरू करो या स्वय सागभाजी पैदा करो।' नतीजा यह हुआ कि हमने अपने यहा कुछ सागभाजीकी खेती शुरू कर दी, जिनमें हमारा खाद भी काम आने लगा। बापू कार्यकर्ताओंको खाने-पहननेके बारेमें स्वावलम्बनका पाठ हमेशा पढाते रहते थे।

१६४

सन् १९३५ की बात होगी। हरिजन आश्रम, दिल्लीके नये मकानमें हरिजन-सेवक-संघके केन्द्रीय बोर्डकी बैठक हो रही थी। मैं भी अुसके सदस्यके नाते गया था। बापू तो थे ही। कार्रवाअी शुरू होनेसे पहले बेजाब्ता चर्चा चल रही थी। किसी बात पर श्रीमती रामेश्वरी नेहरू, जो बोर्डकी अेकमात्र महिला सदस्य और अुपा-ध्यक्ष थी, कह रही थीं और काफी आत्मसतोषके साथ कह रही थीं कि मुझे अपने घरवालोंकी तरफसे अिस काममें कभी कोअी रुकावट नहीं होती। बापूजीको और क्या चाहिये था? अुन्हें तो अपने साथियोंकी सुखवृद्धि, प्रोत्साहन और आत्मोन्नतिका मौका हाथ लगना चाहिये। कहने लगे, "हा, भाभी, तुम सचमुच भाग्यशाली हो जो पिता भी अैसे ही अुदार मिले और पतिदेव भी अैसे ही फर्माबर्दार जो तुम्हें अितनी स्वतंत्रता देते हैं—अच्छे कामोंमें।' ये पिछले तीन शब्द अुन्होंने अेक क्षण ठहरकर कहे। रामेश्वरी बहनका चेहरा शर्मभरी खुशीसे लाल हो गया, क्योंकि अिसमें अुनके साथ साथ अुनके प्रियजनोंकी भी तारीफ थी। दूसरे लोगोंको भी यह सुखद विनोद भाया दिखाअी दिया। मुझे अिसमें अेक प्रोत्साहक किन्तु सावधान गुरुकी झलक दिखाअी दी।

१६५

अिसी अवसर पर शायद किसीने घनश्यामदासजी बिडलाको गुदगुदानेके लिअे कहा, "आखिर आपने बापूको पकड लिया।" बिडलाजी तो अितना ही कह पाये थे कि "अिस बैठकमें बापूका आना जरूरी था।" मगर बापूजीको मजाकका अवसर मिल गया, "मैंने घनश्यामदाससे विवाह जो कर लिया है। वह बुलाये और मैं न आअू, यह हो सकता है?" बेचारे बिडलाजी तो लज्जाके मारे झुक गये, परन्तु औरोंने अिस स्नेह-प्रदर्शनका काफी आनंद लिया। मैंने यह शिक्षा ग्रहण की कि बापूमें जो नम्रता और अनुशासन-प्रेम है, वह अनुकरणीय है और जब हम अपनेसे छोटेको भी किसी पद पर बिठाते हैं तो अुस काममें अुसकी आज्ञा हमें माननी ही चाहिये।

१६६

शायद १९२८की बात है जब मैं पहले-पहल बापूके पास साबरमती आश्रममें महीने भर रहा। मेरे पूर्व जीवनकी पूछताछके सिलसिलेमें राजस्थान-सेवा-संघका जिक्र आया। मैंने बताया कि संघके कार्यकर्ता-१५ रुपये मासिक प्रतिव्यक्तिसे अधिक नहीं लेते थे और फिर भी जो बच जाता वह संस्थाको वापस कर देते थे। अिस संबंधमें जब मैंने अपना भी अनुभव सुनाया और संस्थाके अध्यक्षके ७–८ रु० मासिकसे अधिक न लेनेकी बात कही, तो कातते कातते बडी अुत्सुकतासे बापू मेरी तरफ देखने लगे और कहने लगे, 'यह बचा हुआ रुपया लौटानेकी बात अनोखी है और ग्राह्य है।' नअी और अच्छी बात छोटोंसे भी लेनेकी बापूकी विलक्षण वृत्ति थी।

१६७

२६ और २७ जून १९३६ को राजपूतानेके हरिजन-सेवकोंका अेक सम्मेलन अजमेरके पास हमारे नारेली आश्रममें हुआ था। बापूने हरिजनोंकी भलाअीका विचार करनेवाले अिस छोटेसे आयोजनको भी महत्त्व दिया और मेरी मांग पहुंचते ही अुसे यह सन्देश भेजा

"अिस समय हिन्दू धर्मकी परीक्षा हो रही है। वे ही सच्चे सेवक हो सकते हैं, जिनमें धर्मके प्रति श्रद्धा है, हरिजनोंके प्रति प्रेम है और जो अपनेको हरिजन सेवाके लिअे समर्पण करनेके लिअे तैयार हैं।"

अिस छोटेसे किन्तु सारगर्भित सन्देशने सम्मेलनको जो प्रेरणा दी, वह दो दिनकी सारी कार्रवाअीने भी नहीं दी।

१६८

दिल्लीमें बापूके मार्गदर्शनमें शहरसे बाहर अेक गोशाला चल रही थी। अुसीके पास अेक विद्याश्रम नामक बालशिक्षा सस्था भी थी। अुसे देखा तो वहाकी पद्धति बहुत पसन्द आअी और मैंने चि० प्रताप और अेक दो साथियोके बच्चोको वहा रख दिया। थोडे ही समय बाद बापू अुस सस्थाको देखने गये। सचालकोने बापूके और मेरे सबधोका खयाल करके चि० प्रताप वगैराको खास तौर पर बलाया। 'क्या रामनारायणके बच्चे भी यहा है?' अुन्होने आश्चर्य और अप्रसन्नतासे कहा, 'तब तो वह योग्य पिता नही है। अुस जैसे सेवक और शिक्षकको तो अपनी सन्तानको अपने ही पास रख कर तालीम देना चाहिये।' जब मुझे बापूकी यह राय मालूम हुअी तो मैंने बच्चोको तुरत वापस बुला लिया, परतु मनमें शका ही रही। जब बापू अजमेर आये तो मैंने अुनसे अपनी शका कही। वे बोले, 'आम तौर पर मातापितासे जो प्यार बच्चोको मिलता है, जितनी खबरदारी अुनकी वे करते है और जैसी स्वाभाविक शिक्षा वे देते है, वैसी पराये लोगोंके हाथो नही मिल सकती। कार्यकर्ताओके लिअे तो यह कर्तव्य और भी महत्त्वपूर्ण है। अपने बच्चोको शिक्षा देनेमें अुनके धीरजकी, अुनकी योग्यताकी भी परीक्षा अधिक होती है। और सबसे बडी बात यह है कि मातापिताकी छत्रछायासे अलग रहकर बच्चे अक्सर बिगड जाते हैं।' बापूने खर्चकी बात नही कही, मगर मुझे विश्वास है कि यह बात अुनके ध्यानमें जरूर रही होगी।

१६९

बापूके सात दिनके अुपवासके बाद जब मै अुनके पास सफाअी देने पहुचा, तो वे वर्धाके महिला-आश्रममें आराम ले रहे थे। जमनालालजी मुझे अुनके पास ले गये थे। वे मुझे गाधी-सेवा-सघके कामके लिअे अपने निकट रखना चाहते थे। मगर हरिजन-सेवक-सघसे मुझे हटानेके लिअे अुन्हे बापूसे मजूरी लेनी आवश्यक मालूम होती थी। अुन्होने जाते ही अुलहनेके लहजेमें बापूसे कहा, 'आप हमारे प्रथम श्रेणीके कार्यकर्ताओको तो हरिजन-सेवाके काममें लगाये चले जा रहे हैं। अब हम गाधी-सेवा-सघके लिअे अच्छे सेवक कहासे लायेंगे?' बापू अिस सकेतको फौरन ताड गये और बोले, 'काम तो दोनो अेक ही है और हमारे ही हैं। फिर रामनारायण जब अेक काममें लगे हुअे हैं और अुसे अच्छा कर रहे हैं तो अुन्हें अुससे अनिवार्य आवश्यकताके बिना हटानेसे वह काम बिगडेगा। किसीको अनिवार्य समझना अुसमें अभिमान और हममें परावलम्बन अुत्पन्न करता है। यह दोनोंके लिअे पतनकारी होता है।' जमनालालजीने फिर कुछ नही कहा। मैंने देखा बापू किस तरह अेक ही निर्णयसे कअी समस्याअें अेक साथ हल करते थे — अेक ही अुपदेशसे कअी शकाओका समाधान कर देते थे।

१७०

अिसी अवसर पर श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने बापूको अुपालम्भ दिया कि आप अमर शहीद गणेशशकरजी विद्यार्थीके स्मारकके लिअे कुछ नही कर रहे है। "तुम्हारी शिकायत वाजिब है। मगर मै तो अपने सभी काम अलग अलग आदमियोके मारफत कराता हू। यह काम मैने . को सौपा था। परतु अग्रेजीमे कहू तो His is a case of arrested growth (अुनको अनुकूल काम न मिलनेके कारण अुनकी शक्तियोका विकास होते होते रुक गया है।) विद्यार्थी-स्मारकका काम भी शायद वे अिसीलिअे नही कर पाये है।" श्री का चरित्र-चित्रण अुन्होने अेक ही वाक्यमें जिस खूबीसे कर दिया, वह अुनके मानव अध्ययनकी अेक अनूठी विशेषता थी।

१७१

शायद मार्च १९३३ की बात है। मै बापूसे यरवडा मदिरमें मिलने गया। मैने सोचा, 'मदिर जा रहा हू। वहा अपने अिष्ट देवके दर्शन होगे। कोअी भेंट तो ले ही जाना चाहिये।' मेरे भावुक स्वभावको यही अुत्तम प्रतीत हुआ कि राजस्थानके हरिजनोकी स्थितिका चित्र लिखकर बापूके नजर करू। मैने जाते ही अेक कागज अुनके चरणोमें रख दिया, जिसका शीर्षक था 'राजस्थानका हरिजन' और मजमून यह था

"पता नही मनुष्य किस तरह अितना विवेकभ्रष्ट और हृदयहीन बन सका होगा और हिन्दुत्व जैसे दयाप्रधान धर्ममें यह अमानुषिकता क्योकर घुसी होगी कि अिन्सानको अिन्सान हैवानसे भी बदतर समझने लगा। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का नित्यपाठ करनेवाले लोग अपने ही समाजके अेक अगको अछूत और अदृश्य तक मानने लगे, अुनसे गदेसे गदे काम लेने लगे, अुन्हे कमसे कम और खराबसे खराब अन्नवस्त्र, जूठन और अुतारन देने लगे और अूपरसे तिरस्कार व ताडनाका दण्ड भुगताने लगे। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक अुन्नतिके सारे द्वार अिन अभागोके लिअे बन्द कर दिये गये। अुनको छूना पाप, देखना पाप, अुनकी छाया पडना पाप गिना जाने लगा — यहा तक कि देवदर्शन भी अुनके लिअे निषिद्ध हो गया। अैसी दशामें बेचारे हरिजन क्या तो पढ़ें-लिखें, क्या व्यवसाय-अुद्योग करे, क्या समाज और देशकी अुन्नतिमें भाग लें और क्या अीश्वरदत्त शक्तियोका विकास करे? पानीके लिअे तरसते रहे, मगर कुअें-बावडी पर पैर नही रख सकते। शिक्षाके लिअे अुत्सुक है, पर स्कूलमें भरती नही हो सकते। भूख लगी है, मगर पैसा देकर भी होटल-ढाबेमें खा नही सकते। हृदय हरिदर्शनके लिअे आतुर है, परन्तु मदिरकी देहलीको लाघ नही सकते। चमडा ये कमाते, कूडा-करकट ये अुठाते, टट्टी-पेशाब ये साफ करते — गरज यह कि वे सब काम करते है जो माता करती है और जिनके बिना समाज दो दिन जिन्दा नही

रह सकता। मगर हिन्दू समाज है कि आत्मविस्मृतिमें अंधा होकर अिसकी बहुमूल्य सेवाओंका बदला, जुल्म और शोषणसे अुसे किसी रूपमें बदला देना ही नहीं जानता। अजमेरके मशहूर मुहल्लेमें मैला स्टेशन देखा और मजदूरोंको मलमूत्रके कुंडमें काम करते पाया तो दिल ग्लानिके मारे भर गया। जब मालवेका हाल सुना कि वहां सवर्ण लोग हरिजन स्त्रियोंके सिरों पर मैलेके घड़े फोड़कर और अुनके साथ खुले रूपमें कुत्सित व्यवहार करके जुलूस निकालते हैं तो ऐसा लगा कि मानवता हिन्दू समाजको छोड़कर रसातल चली गयी है और दण्डस्वरूप अुसके गलेमें गुलामीका तौक डाल गयी है। हरिजनोंकी दुःखगाथा यहीं समाप्त नहीं होती। सवर्ण गेहूं और शक्कर खाते हैं तो हरिजनोंको जौ, बाजरे और गुड़से ही संतोष और ब्याह करने चाहिये। 'अूंची जाति' के मंदिर पर सोनेका कलश चढ़े तो 'नीचों' के भगवानका घर बिना कलशके ही रहना चाहिये। हरिजन अपने दूल्हेको घोड़े पर चढ़ा कर ले जायगा तो सवर्ण वरराजके लिअे हर जगह हाथी कहांसे लायेगा? साअिकल पर बैठनेकी मनाअी! अिसके सामने मजाल है जो अछूत खाट पर बैठ जाय, मैं लगाकर हुक्का पी ले या नया जूता पहनकर निकल जाय! यह अभिशाप सवर्णोंमें भी आपसमें मौजूद है। किसी राजपूत गांवमें बनिये और शूद्रोंको राजपूतोंके सामने अिसी तरह अपमानित होना पड़ता है। बल्कि ठाकुर साहबको सेठजीके आगे कमर झुकाये सलाम झुकाते हुए किसी मिलके दरवाजे पर देखा जा सकता है। झाला-वाड़ राज्यमें अेक लखपती चमारके सामने ब्राह्मण देवताको हाथ बांधे भीख मांगते भी पाया गया है। रेलवे और सरकारी विभागोंमें अछूत हाकिमोंकी खुशामद करते हुअे रातदिन ठाकुर साहब, पंडितजी और सेठजी सभी देखे जाते हैं। फिर भी भले ही कुत्ते बिल्ली छू जाय, मंदिरमें चले जाय और घरभरमें चक्कर लगाते रहें, मगर हरिजनका कहीं गुजर नहीं। अिनके मकान देखें तो अंधेरे, तंग और धूल-मिट्टीके ढेर, जहां हवा, रोशनी और सुविधाओंका नाम नहीं। खाना जूठा और सड़ा-बासी और कपड़ा अुतरा हुआ मिले, मगर काम करना पड़े कठोर कड़ी मेहनतका। बेगारमें जबर-दस्ती और मुफ्त हर कस्बेका काम और हर राजकर्मचारीका करना पड़े। यह अभिशाप तो हरिजन मात्रके भाग्यमें जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त लगा ही है। न बड़ोंका लिहाज, न गुण और वयका खयाल; डांट-डपट और गाली-गलौज व मारपीट अूपरसे। अैसी नरक यातनाओंको कहां तक सहा जाय? अैसी हालतमें क्या आश्चर्य यदि लाखों विधर्मी हो जायं और अपने देश और जातिके कट्टर दुश्मन बन जायं?"

बापूने यह नोट पढ़कर सिर्फ दो बातें पूछीं। अेक तो राजपूतानेमें हरिजनोंके लिअे पानीकी व्यवस्था और दूसरी, अजमेरका मैला स्टेशन। मैंने दोनोंका हाल सुनाया तो गंभीर मुद्रा करके बोले, 'पानीके बारेमें तुम राजपूताने जाकर मुझे विस्तारसे लिखना और मैला स्टेशन मैं कभी अजमेर आअूंगा तो देखूंगा।' अिस प्रकार बापूने सारे निबन्धमें से समस्त ये ही दो मुद्दे चुन लिये जो सबसे महत्त्वके थे। विषयके मर्मको पकड़नेकी अुनकी क्षमता विलक्षण थी।

१७२

मैंने अजमेर पहुंचकर जल्दी ही पानीकी व्यवस्थाका कच्चा चिट्ठा अुन्हें लिख भेजा। अिस समस्याने अुन्हें अितना चिन्तित किया कि अुन्होंने मेरा पत्र पहुचनेके दिन ही राजाजीसे अपनी महत्त्वपूर्ण मुलाकातमें अुसका अुल्लेख किया, जिसको महादेवभाअीने अपनी डायरीके तीसरे भागमें पृ० २१६ पर अिन शब्दोंमें अुद्धृत किया है

'बापू ओ हो! अपना धर्म मैं क्यों छोड दू? मैं कोअी अुन्हें अपना धर्म छोडनेके लिअे नही कहता। परन्तु आज जैसी दशा है अिसका अुन्हें खयाल नही। मेरे नाम रामनारायण चौधरीका अेक पत्र आया है, जिसमें पश्चिमी राजपूतानेके हरिजनोंकी खराब हालतका वर्णन है। अेक भी कुअेंसे वे पानी नही भर सकते। जानवरोंके हौजमें से अुन्हें गन्दा पानी लेना पडता है। हौजका अैसा गन्दा पानी वे कहा तक काममें लेते रहेंगे?'

अितना ही नही, बापूने तीसरे ही दिन अर्थात् २-४-'३३ को यरवदा मदिरसे यह पोस्टकार्ड लिखा

"भाअी रामनारायण,

तुमारे खतका मैंने 'हरिजनसेवक' में अुपयोग किया है—देख लेना। दी० ब० (दीवान बहादुर हरबिलास शारदा) और तुमारे धनिकोंके पास जाकर कुओंके लिअे दान लेना चाहिये—नकशा बनाना चाहिये और कहा कहा कुओंकी आवश्यकता है बताना चाहिये। कितने हरिजन हैं, वे क्या करते हैं अि० खबरका सग्रह करना चाहिये। कुअेंका क्या खर्च होता है अि० खोज करो।

"अजनादेवीको आशीर्वाद

बापूके आशीर्वाद"

१७३

जब बापू हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें अजमेर पहुचे और कार्यक्रमके बारेमें पूछा तो अुसमें पहली बात यह थी कि, 'मैला स्टेशन जानेका रखा है न?' जब अुसे आखों देखा तो अुनका मुख म्लान हो गया और अुस दृश्यको अुन्होंने 'हरिजनसेवक' में लिखते हुअे 'अजमेरका नरक' नाम दिया। दुखकी बात है कि देशके आजाद हो जाने और अजमेरमें जनताका राज्य हो जाने पर भी अभी तक वह नरक ज्यों का त्यों बना हुआ है।* अितने जागरूक थे हमारे राष्ट्रपिता और जितने प्रमादी है अुनके

* श्री राजकुमारी अमृतकौरके प्रयत्नसे अजमेरका यह नरक कुछ अंश ता० २७-७-'५४ को श्री मोरारजीभाअीके हाथों हरिजनोंका स्नानकुंड बना दिया गया है।—लेखक

अनुयायी हम लोग! परन्तु जब मैं सिंहावलोकन करता हूं तो अैसा लगता है कि गांधीजीने सचमुच अपने अैतिहासिक अुपवाससे नदियोंके सोये हुअे हिन्दू अन्तःकरणको जगाकर और अुसे हरिजन-सेवाके महान प्रायश्चित्तमें लगाकर मानवता, हिन्दू धर्म और भारतवर्षकी अपूर्व सेवा की और वे और कुछ भी न करते तो अकेले अिस अलौकिक कार्यके लिअे भी अितिहासमें अमर हो जाते।

१७४

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें दौरा करते हुअे जब मैं बागड (डूंगरपुर-बांसवाडा प्रदेश) में पहुंचा, तो वहांके भीलोंकी स्थितिका अध्ययन करनेका अवसर मिला। जहां तक मैं जानता हूं, यह जाति भारतकी सबसे गरीब जाति है। अज्ञान, अंधविश्वास तथा शोषणका अैसा दृश्य शायद और कहीं नहीं मिल सकता। राज्यसत्ता और सूदखोर महाजनोंके मारे ये भोलेभाले प्राणी प्रायः निस्सहाय अवस्थामें थे। अुनकी खेतीका ढंग बिलकुल प्रारंभिक, जमीन और औजार घटिया, सिंचाअीके स्थायी प्रबन्धका अभाव और मवेशी दुबले और घटिया थे। अिसी तरह अुनके स्वास्थ्यकी तरफ भी किसीका ध्यान नहीं था। बीमारीमें अुन्हें दवा मिलना मुश्किल और यदि कोअी संक्रामक रोग फैल गया तो सैकडोंकी संख्यामें कीडे-मकोडोंकी तरह मर जाते। मकान अुनके खपरैल, बांस और मिट्टीके बने हुअे तंग, नीचे और अंधेरे थे, जिनमें अेक ही जगह खाना, सोना, और पशुओंके रखनेका स्थान होता था। खुली हवा और धूप आदि प्रकृतिकी देन, भीलोंकी अपनी सैनिक वृत्ति और कठोर परिश्रमशीलताके कारण वे बेचारे किसी तरह जिन्दा रहते थे। अन्यथा अुन्हें तन ढकनेको कपडा और खानेको पूरा अन्न भी मयस्सर नहीं होता था। आधे पेट खाना, अर्धनग्न रहना और जाडोंमें आगके सहारे रात बिताना, यह अुनका साधारण जीवनक्रम था। शिक्षाके लिअे राज्योंकी ओरसे नहींके बराबर व्यवस्था थी। बेगारकी मार और सूदखोरोंकी लूटके आगे वे हमेशा तंग रहते थे। अूपरसे सरकारी प्रबन्धमें शराबका दुर्व्यसन अुनके लिअे अेक बडा अभिशाप बना हुआ था। सामाजिक दृष्टिसे भी अुनके साथ लगभग अछूतोंका-सा व्यवहार होता था।

मैंने बापूको यह दशा बताअी और सुझाव दिया कि भील-सेवाको हरिजन-सेवाका अंग मानकर कमसे कम राजपूतानेमें अुसे हरिजन-कोषसे सहायता दी जाय। अुन्होंने ठक्करबापासे कहनेको कहा। बापाको तो भीलोंके प्रति पक्षपात था ही। अुन्होंने समर्थन किया और बापूने अपनी मर्यादाओंकी कडाअीको नरम करके अिस साक्षात् दरिद्रनारायणकी सेवाको हमारे कार्यक्रममें शामिल करनेकी मंजूरी दे दी। वे सचमुच भगवानको गरीबों, पीडितों और शोषितोंके रूपमें ही पूजते थे।

१७५

१९३५ या १९३६ की बात होगी। मुझे दिलके दौरे होने लगे थे। बापूको मालूम हुआ तो अपने पास बुलवा भेजा। अुन्हे सेवाग्राममें बसे हुअे थोडा ही समय हुआ था। जब मैं पहली बार पहुचा तो कहने लगे, 'मैं रखना तो चाहता था तुम्हे अपने ही पास, मगर यहा स्थानकी बहुत कमी है। तुम्हे तकलीफ होगी। अिसलिअे रहो बजाजवाडीमें और महादेवके साथ रोज यहा आ जाया करो और अुन्हीके साथ लौट जाया करो। खानेमें नाश्ता और शामका भोजन वर्धा और दुपहरी मेरे साथ कर लिया करो।' तदनुसार महादेवभाअी, जो पहले पैदल आया जाया करते थे, अब मुझे लेकर जमनालालजीकी 'बैल मोटर' में आने-जाने लगे। मुझे बापू खानेको अपने ही पास बिठाते और अपने ही हाथसे परोसते। पहले ही दिन अैसा महसूस हुआ कि मेरी मा मरी नही है या बापूके रूपमें अुसने फिरसे अवतार ले लिया है। अितना स्नेह था अुनके व्यवहारमें!

१७६

मेरे खाने-पीनेकी व्यवस्थाका भार भाअी राधाकृष्ण बजाज पर था। अिस रूखेसूखे दीखनेवाले अपने भूतपूर्व विद्यार्थीकी स्निग्धताका प्रथम परिचय अिन्ही दिनो हुआ। वे मुझे सुबह ही सुबह बादामका हरीरा देना चाहते थे। मैं अुन दिनो आश्रमी भोजनके बारेमें बडा कट्टर था। परन्तु जब मैंने सेवाग्राम जाकर बापूसे पूछा तो अुन्होंने तुरन्त कह दिया, "कोअी हरकत नही। जरूर लो।" छोटा भाअी दुर्गाप्रसाद साथ ही था। अुसने भी मौका देखकर पूछ लिया, "भाअी साहबका दिल नही लगता। अगर थोडी देर ताश खेल लिया करें तो कुछ आपत्ति है?" बापूको अेक क्षण भी नही लगा और वे बोले, "कोअी आपत्ति नही।" दोनो अुत्तर मेरी कल्पना और आशाके बाहर थे। मैंने समझ लिया कि रोगियोके प्रति अुनके मनमें कितनी करुणा और साथियोके लिअे कितनी कोमलता है! नैतिक मामलोके सिवा वे और बातोंमें बहुत समझौता कर लेते थे।

१७७

अुन दिनो अेक निकटके साथीके विचारो तथा व्यवहारमें मेरे दिल पर चोट लगी थी। प्रसगवश बापूसे जिक्र आ गया तो मेरी आखे भर आअी। बापू द्रवित होकर बोले, "अैसा अनुभव सभीको होता है। देखो, अुन दिन आये थे। अुनकी लेखमाला पढकर मैंने अुन्हे चर्चाके लिअे बुला लिया था। जब बात हुअी तो बच्चोकी तरह रोने लगे। कहते थे, 'बापू, मेरा दिल तो आपकी तरफ दौडता

है, मगर दिमाग दूसरी ही दिशामें जाता है। अिसका मुझे दुःख है, बताअिये क्या करूं?' मैंने अुन्हें साफ कह दिया, "अभी अपने हृदयको ताकमें रख दो और जो बुद्धि कहे वही करो। अपने आप सही रास्ता मिल जायगा। तुमने मुझे अपना दर्द बता दिया, परन्तु मैं अपना दुखड़ा किसके आगे रोअूं? अिसलिअे तुम्हें भी मेरी यही सलाह है कि साथीसे कह दो, वह तुम्हारे निजी सम्बन्धका लिहाज न करके अपनी अन्तरात्माका आदेश माने।" अिस प्रकार अपनी व्यथा प्रकट करके अुन्होंने मेरी सारी पीड़ा शमन कर दी। साथ ही मुझे अेक नया प्रकाश मिला कि बापू व्यक्तिके विचार और तदनुसार आचरणकी स्वतंत्रताके कितने प्रबल समर्थक थे। अितना ही नहीं, मुझे जीवनका अेक नया मंत्र भी प्राप्त हुआ कि प्रेमको मनुष्योंकी गुलामीका कारण नहीं, प्रत्युत स्वतंत्रताका निमित्त होना चाहिये। मुझे पहले-पहल अिस आरोपकी निःसारता प्रतीत हुअी कि बापूके अनुयायी अुनके प्रति अंधश्रद्धा रखते हैं या वे अंधानुगमनको प्रोत्साहन देते हैं।

१७८

बापूके पोते कान्तिभाअी अुन दिनों शायद मैसूरमें डॉक्टरीकी पढ़ाअी कर रहे थे। छुट्टियोंमें सेवाग्राम आये हुअे होंगे। अेक दिन जब मैं वहां पहुंचा तो अुनके और बापूके बीच विवाद चल रहा था। वे अेक धोती अधिक चाहते थे और बापू अुसकी जरूरत नहीं समझते थे। पता नहीं मेरे पहुंचनेसे पहले कितनी देरसे बहस हो रही थी, परन्तु मेरे सामने भी कोअी पंद्रह मिनट तो चली ही होगी। आखिर बापूने मंजूरी नहीं दी सो नहीं दी। कान्तिभाअीके अुठ जानेके बाद मुझसे नहीं रहा गया तो मैं पूछ बैठा, 'बापू, आपका समय अितना कीमती है और बात अितनी छोटीसी थी।' मैं अितना ही कह पाया था कि बापू बीचमें ही बोल अुठे, 'हां, मैं तुम्हारी बात समझ गया। परन्तु प्रश्न छोटी-बड़ी बातका नहीं, अेक सिद्धान्तका है। हम दरिद्रनारायणके पुजारी हैं। हमें अुसकी सेवा करनी है तो जनतासे अपने लिअे कमसे कम लेकर अुसे अधिकसे अधिक देना चाहिये। जरूरत न होने पर अेक पैसा भी खर्च करना मुझे चोरीकी तरह खटकता है। आवश्यकता हो तो हजार रुपये भी कोअी चीज नहीं। रुपयेकी मनुष्यके मुकाबिलेमें कुछ भी हैसियत नहीं। तुम देखते हो बालकोबाके अिलाजके लिअे मैं कैसे पानीकी तरह रुपया बहा रहा हूं। अुसका मुझे जरा भी अफसोस नहीं। मगर कान्तिके लिअे जब वह धोती जरूरी नहीं लगती तो कैसे मंगाकर दूं?' वास्तवमें बापूजी जनताके धनके सच्चे रक्षक थे और अपनोंके प्रति अधिक कठोरता करते थे।

१७९

बापूके अेक नजदीकी साथी अुन दिनों अपने व्रतसे विचलित होकर अपनी मृगमरीचिकाके पीछे भटक रहे थे। अुन्हे खर्चकी जरूरत हुअी। अुन्होने महादेव-भाअीकी मारफत रुपयेकी माग की। महादेवभाअी तो ठहरे सहृदयताकी मूर्ति। अुनकी अिच्छा सिफारिश करनेकी थी, परन्तु बापूके स्वभावसे भी भलीभाति परिचित थे। डरते डरते जिज्ञासा की, 'बापू, का पत्र आया है। कष्टमें मालूम होते हैं। क्या अुन्हें कुछ सहायता दी जा सकती है?' 'हरगिज नही', बापूने तुरन्त दृढता-पूर्वक कहा, 'क्या हम किसी साथीको भी अुसकी अनीतिमें साथ दे सकते हैं? हम तो पुण्यपथके पथिक हैं। अुसीमें हमारा साथ हो सकता है। . . को लिख दो कि जब तक अुसका यही हाल है तब तक वह हमसे मददकी कोअी आशा न रखे।' सचमुच बापू पर 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि' की कहावत सोलह आने चरितार्थ होती थी।

१८०

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें हमने नारेली गावमें राजस्थान सेवक मडलकी तरफसे आश्रमका अेक पक्का मकान बनाया था। अुसके लिअे अेक बार हरिजन-सेवक-सघका कुछ रुपया मडलके नाम अुधार लिखकर काममें ले लिया गया था। मुझे अिसमें कोअी दोष नही दिखाअी दिया, क्योंकि कअी बार सघके लिअे जरूरत पडने पर अिसी तरह मडलकी रकम काममें ले ली जाती थी। परन्तु ठक्करबापा अिस मामलेमें बहुत कडे थे। जब अुनके पास हिसाब गया तो अुन्होंने मुझे अैसी डाट पिलाअी जो मेरे स्वभावके लिअे असह्य हो गअी। मैंने लिखा कि, 'जब मडलका रुपया लगाकर अनेक बार सघकी जरूरत पूरी कर दी गअी तब आपने न दुरुपयोगकी शिकायत की और न सहायताके लिअे धन्यवाद दिया। अब आप अितनी सख्ती कर रहे हैं तो लीजिये यह मेरा त्यागपत्र।' बापा बडे मजबूत आदमी थे। अुन पर मेरे पत्रका कोअी असर नही हुआ। अितना जरूर हुआ कि मेरा अिस्तीफा मजूर करनेके बजाय अुन्होंने मेरा पत्र बापूको, जो अुन दिनों दिल्लीमें ही थे, दिखा दिया। बापूने मुझे बुलाकर समझाया, 'तुम पर कोअी गबनका आरोप नहीं है, केवल यह शिकायत है कि तुमने अेक सस्थाका रुपया अुससे पूछे बिना दूसरीको दे दिया। यह पद्धति गलत है। फिसलनका रास्ता है। किसीको अपना रुपया दे देना निरी असावधानी हो सकती है। मगर दूसरेका ले लेना खतरनाक है। त्यागपत्र वापस ले लो और आयदा किसी भी सस्था या व्यक्तिका धन अुसकी मजूरीके बिना दूसरेको न देनेका नियम बना लो।' मैंने अपनी भूल स्वीकार की और सुधार ली। भविष्यके लिअे मुझे अेक मूल्यवान पाठ मिल गया। बापू अिस तरह अपने साथियोंको माम[illegible] [illegible] भूलें ठीक कराते थे।

१८१

हरिजन-सेवक-संघमें हम लोग हरिजनोंसे शराब और मुर्दार मांसके साथ-साथ सभी तरहका गोश्त भी छोड़नेको कहते थे। अेक दिन अखबारमें अुड़ीसाके दौरेमें बापूका यह कथन पढ़ा कि समुद्रतट पर रहनेवाले गरीबोंकी खुराकमें दूसरी तरह पोषक तत्त्व नहीं मिलते, अिसलिअे मेरा जी नहीं मानता कि अुन्हें मछली खानेसे मना करूं। मैंने अुसी दिनसे हरिजनोंको मांसाहार छोड़नेके लिअे कहना बन्द कर दिया। मगर मेरा यह निश्चय भावुकताका था। सिद्धान्तकी दृष्टिसे मेरी शंका बनी ही रही। अुसका समाधान तब हुआ जब थोड़े ही समय बाद वर्धामें गांधी-सेवा-संघका सम्मेलन हुआ और अुसमें सदस्योंकी योग्यताओं पर विचार किया गया। मैं अुन लोगोंमें से था जो मांसाहारियोंको सदस्य बनानेके विरुद्ध थे। मेरी समझमें नहीं आ रहा था कि हिंसक मनुष्यको अहिंसक संगठनका अंग कैसे बनाया जा सकता है। अिस अवसर पर बापूने जो कुछ कहा अुसका सार यह था "जो लोग पीढ़ियोंसे या दीर्घकालीन अभ्यासके कारण मांसाहारके आदी हैं और गोश्त जिनकी खुराकका अेक कुदरती हिस्सा बन गया है, अुन पर अुसे छोड़नेकी शर्त लगाना अेक प्रकारकी हिंसा होगी। अुनके संस्कारको अनिवार्य हिंसा मानकर सहन करना होगा। हां, जो लोग लुकछुपकर खाते हैं या जिनके यहां पहलेसे रिवाज न होने पर भी अब नये सिरेसे खाने लगे हों या खाना चाहते हों, अुन्हें हम संघका सदस्य नहीं बना सकते।" बापूके विवेकमें जितना साहस रहता था अुतनी ही अहिंसा भी रहती थी। अुसका परिचय बादमें यहां तक मिला कि अेक बार डॉ० सैयद महमूद जब बीमार हालतमें सेवाग्राम आये तो अुन्हें मुर्गीका शोरबा तैयार करा कर दिया। अिसी तरह मौलाना अबुल कलाम आजादको आश्रममें बैठकर सिगरेट पीनेकी छूट थी और पंडित मोतीलालजी नेहरूके लिअे आश्रममें चाय बनवाकर दी जाती थी। मगर ये रियायतें तो वे थीं जो मेहमानोंके लिअे होती थीं। बापू तो मुख्य और गौण वस्तुओंका विवेक और जब्र न करनेका ध्यान घनिष्ठ साथियोंके साथ भी काफी रखते थे। यही कारण था कि किशोरलालभाअी और महादेवभाअी वगैराको अलग भोजनालय रखकर आश्रममें वर्जित शक्कर, मसाले और तली हुअी वस्तुअें भी खानेकी छूट दे रखी थी। सार यह कि बापू अेक व्यावहारिक आदर्शवादी थे।

१८२

१९२८ व १९३० में साबरमतीमें, १९३४में हरिजन-प्रवासके समय और बादमें १९४० के सेवाग्राम निवासमें बापूजीके साथ अुनके 'यंग अिंडिया' और 'हरिजन' पत्रोंमें अनुवाद और पत्र-व्यवहारका काम करते और देखते हुअे मुझे अुनकी अेक पत्रकारके रूपमें रीतिनीतिका प्रत्यक्ष अध्ययन करनेका अवसर मिला। मेरे खयालमें बापू अेक आदर्श पत्रकार थे। वे अिस पेशेको अेक सेवापरायण न्यायाधीशका

पेशा समझते थे। जहा वे पीडित पक्षकी सहायता करना अपना सर्वोपरि ध्येय मानते थे, वहा वे लेखको और सवाददाताओको अुचित शिक्षा भी देते रहते थे। आलोचककी दृष्टिसे वे सर्वथा निष्पक्ष रहनेकी कोशिश करते थे। वे न अपने विरोधियोके गुण प्रगट करनेमे कजूसी करते थे और न अपने समर्थकोके दोष बतानेमे अुन्हे सकोच होता था। जिन लोगोके खिलाफ शिकायतें आती अुनके प्रति अन्याय न होनेका वे बडा ध्यान रखते थे। अिसलिअे पहले अुन्हे लिख कर पूछते थे कि अुन्हे अपने बचावमें क्या कहना है। अुत्तरके लिअे काफी समय भी देते थे। यदि शिकायते व्यक्तिगत ही होतीं और सम्बधित व्यक्ति अुन्हे स्वीकार कर लेते, तो वे अुन्हे प्रकाशित न करके अुन व्यक्तियोको अपना आचरण ठीक करनेकी प्रेरणा देते थे। नाम तो किसीका वे अुसकी अनुमतिके बिना कभी जाहिर ही नही करते थे। गरज यह कि वे किसीको बदनाम नही करते थे, अुसे सुधारनेका ही प्रयत्न करते थे। फल यह होता था कि लोग बहुधा निराधार या प्रमाणहीन शिकायते या तो भेजते ही न थे या अुन्हे वापस ले लेते या सुधार लेते थे और जिनके विरुद्ध सही आरोप लगाये जाते थे वे अुन्हे दूर कर देते थे और प्रकाशनकी नौबत ही नही आती थी। बापू जिन पत्रोको चलाते थे अुनमें अेक शब्द भी अुनके देखे बिना नही छप सकता था। अिसमें वे अपने बडेसे बडे साथीके साथ भी रियायत नही करते थे। वे अपनी जिम्मेदारीका अितना अूचा माप-दड रखते थे।

१८३

सन् १९३८ व १९३९ में मैंने भी अेक पत्र-सपादकके नाते अिस नीतिके अनुसरणका प्रयोग किया तो अुसके कल्याणकारी अनुभव हुअे। अजमेरके रेल्वे कारखानेके विरुद्ध रिश्वतकी अुन दिनो बडी शिकायत थी। कुछ अग्रेज अफसरोके विरुद्ध असतोष था। मैंने प्रधान अधिकारीसे, जो अग्रेज था, मिलकर अुन्हे बापूकी पद्धति समझाअी और अुसकी सम्मतिसे दो अुच्च अधिकारियोके मामले हाथमें लिये। तय यह हुआ कि जो व्यक्ति हृदयसे अपना दोष स्वीकार कर ले और भविष्यमे शुद्ध रहनेका वचन दे दे अुसे मेरी सिफारिश पर क्षमा कर दिया जायगा और जो दोष स्वीकार न करे अुसके मामलेमें अुचित कार्रवाअी की जायगी। तदनुसार मैंने दोनो अग्रेज कर्म-चारियो पर लगाये जानेवाले आरोप अुन्हे लिख भेजे और अुनकी सफाअी मागी। मैंने यह भी सूचित कर दिया कि अुन्हे पत्रव्यवहार करनेमे आपत्ति हो तो मैं अुनसे रूबरू मिल लूगा। अुन्होने आदमी भेजकर मुझे बुलाया।

पहले कर्मचारीका सम्बध निमुक्तियो और तबादलोसे था। वह दोनो पक्षोसे रुपया ले लेता और जिसका काम हो जाता अुसकी रकम रख लेता था और असफल आदमीके दाम लौटा देता था। मैं अुससे अुसके बगले पर मिला। मैंने अुसके कधे पर हाथ रख कर कहा "आप अेक अीसाअी है। अीसामसीहकी यह शिक्षा है कि भूल हो जाय तो अुसे मान कर सुधार लेना चाहिये। आप जवान आदमी है। खरी कमाअी

खाअिये। भगवान बरकत देगा। अगर आपमें घूस लेनेकी कमजोरी सचमुच है, तो अुसे स्वीकार कीजिये और आयदा न लेनेकी प्रतिज्ञा कर लीजिये। मैं गांधीजीका अेक नम्र अनुयायी हू। आप विश्वास करेंगे तो आपको पछतावा नही होगा। मेरे हाथसे आपकी कोअी हानि नही होगी।" अुसने नीचा मुह किये मेरी बात सुनी और अुसकी आखोंमें से आसू निकल पडे। तब अुसकी पत्नी, जो दर्वाजेकी आडमें सब सुन रही थी, सामने आकर कहने लगी "मि० चौधरी, मेरे पति जब यहा आये तब खराब आदमी नही थे। आपके देशभाअियोने अिन्हें यह चस्का लगाकर बिगाड दिया। मैं मि० गाधीकी और आपकी ऋणी रहूगी यदि आप अिन्हे सही रास्ते पर ले आयेंगे।" अुस अग्रेजने अुसी दिनसे रिश्वत छोड दी, विचाराधीन मामलोंका जो जो रुपया अुसके पास रखा हुआ था अुसी दिन लौटा दिया और मुझे लिखकर अुसकी सूचना भेज दी।

१८४

दूसरा अफसर वर्क्स मैनेजर था। जब मैं अुससे मिला तो अुसने आरोपको गलत बताया। मगर अुसके हाथ काप रहे थे और मुखमुद्रा भी कह रही थी कि अुसका दिल कसूर मानता है, मगर जबानकी हिम्मत नही हो रही है। मैंने अुसे यह बात बताकर साहस करनेका अनुरोध किया। परन्तु अुसका साहस नही हुआ। जब मैंने प्रधान अधिकारीको अपनी जाचका नतीजा बताया, तो अेक सप्ताहके भीतर पहले कर्मचारीका अुसकी अिच्छाके अनुसार बम्बअी तबादला कर दिया गया और वर्क्स मैनेजरको रिटायर करके विलायत भेज दिया गया।

१८५

अिसी तरह अजमेरमें अेक डिप्टी पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्टका किस्सा हुआ। अुनके विरुद्ध भ्रष्टाचारकी बडी शिकायतें थी। अुनका शासनमें बडा असर और जनतामें दबदबा था। कअी हाकिम लोग अुनके दरबारी बने हुवे थे। मेरी अनुपस्थितिमें मेरे साप्ताहिक 'नवज्योति' में पुलिसकी कुछ शिकायतें छप गअी थी, जिनका असर अप्रत्यक्ष रूपमें अुन पर पडता था। मेरे लौटने पर अेक दिन रातको मेरे अेक बडे वकील मित्रके साथ वे खुद ही मिलने आ गये। बातें हुअी। मैंने सीधा ही सवाल किया, 'आप रिश्वत लेते हैं?' अुन्हें अचम्भा तो हुआ, मगर कुछ सोचकर बोले, 'अिसका जवाब अगली मुलाकातमें दूगा।' जब फिर आये तो कहा, 'पिछली बातें दरगुजर कीजिये। आयदा कोअी शिकायत नही आयेगी।' मैंने अिसे दोष-स्वीकार और आगेका आश्वासन समझा। अुन्होंने अितनी साफ बात मुझे बापूका आदमी समझकर ही कही और सचमुच जब तक वे रहे— और वे काफी अरसे तक रहे—मेरे पास अुनके विरुद्ध कोअी शिकायत नही आयी।

१८६

राजस्थानके अेक प्रसिद्ध राजघरानेमें अेक युवकका विवाह हुआ। ससुरालवालोंने वचनानुसार दहेज नहीं दिया। वरके माता-पिताने कन्याके मा-बापके अिस कसूरकी सजा लडकीको देना शुरू कर दिया। वधूको 'दुहाग' दे दिया गया अर्थात् पतिदेवने अुससे मिलना छोड दिया। किसी सहृदय व्यक्तिने यह कथा मुझे लिख भेजी। सम्पादकके नाते मैंने लडकीके ससुरको पत्र लिखकर अिस अन्यायकी ओर अुनका ध्यान आकर्षित किया और अुनके अुच्च कुल और वीर अितिहासकी याद दिलाकर और गांधीयुगमें जन्म लेनेके सौभाग्यका अुल्लेख करके अुस निर्दोष अबलाके साथ न्याय करनेका अनुरोध किया। फल चमत्कारी हुआ। आठवें दिन राजा साहबका प्रतिनिधि आकर अुनकी ओरसे धन्यवादके साथ साथ आश्वासन दे गया कि अन्याय दूर कर दिया गया है।

१८७

अेक दिन राजपूतानेकी अेक छोटी रियासतसे अेक महिला आअी। अुन्होंने दीवान पर गंभीर आरोप लगाया कि महिलाको रखेल बनानेके लिअे दीवानने अुसके पतिकी हत्या करा दी है। मैंने अुसके बयानकी नकल दीवानको भेज दी। दीवानने मुझे मिलने बुलाया। अभियोगको अुन्होंने गलत बताया और सफाअीमें न्याय-विभागके सारे कागजात मंगवाकर दिखलाये। मुझे संतोष नहीं हुआ तो बोले, 'Every saint has a past and every sinner a future (प्रत्येक साधुका भूतकाल और प्रत्येक पापीका भविष्य होता है)। और कोअी होता तो मैं यह न कहता। पर आप गांधीजीको मानते हैं, अिसलिअे यह बात कहता हूं।' मैं सन्तुष्ट होकर चला आया। अुधर दीवान साहबने अुस महिलाको रखेल न बनाकर अुससे विवाह कर लिया और अब वह अुनकी विपुल सम्पत्तिका अुत्तराधिकार भोग रही है।

१८८

अेक बार शायद १९२३ में लाहौरके दैनिक 'ट्रिब्यून' के वयोवृद्ध सहकारी संपादक श्री आयंगर पुष्कर स्नानके लिअे अजमेर आये थे। मेरे ही मेहमान थे। बापूके बारेमें अेक दिन बातों ही बातोंमें कहने लगे, "His is the best English in Asia" (अेशियामें अुनकी अंग्रेजी सबसे अच्छी है।) बादके अपने प्रत्यक्ष अनुभवसे अेक पत्रकारके नाते मेरी यह राय बनी है कि वे अपने समयके संसारके सबसे बडे पत्रकार थे। अुन्होंने पत्रकारके धन्धेको प्रत्यक्ष रूपमें अुतना ही अूंचा अुठाकर दिखा दिया जितना मानव-जीवनको। वे जिस क्षेत्रमें सचाअी और

सादगीका नमूना थे। अुन्होंने पत्रकारोंको अपने अुदाहरणसे साबित कर दिया कि वे सत्य, सद्भाव और सहिष्णुताके दूत हैं, अुनके कार्यका आधार नैतिकता और आध्यात्मिकता है। गांधीजीके अनुसार पत्रकारमें परिश्रम, दीर्घोद्योग, निर्भयता और निष्पक्षताका समन्वय होना चाहिये। जो बात लिखी जाय पूरी खोजके बाद, बडी सावधानीके साथ लिखी जाय। वे अेक अेक शब्द चुनकर, तौलकर लिखते थे। चार शब्दोंका काम अेक शब्दसे लेना जानते थे। अुनके वाक्य जितने मीठे होते थे अुतने ही साफ होते थे। अुनके लेखनमें कहीं अत्युक्ति, कटुता या चालाकी नहीं होती थी। वे अिस कलाके महान कलाकार थे। परन्तु कलाको वे कलाके लिअे नहीं पूजते थे। वे अुसे अुपयोगी वस्तुके रूपमें ही मानते थे और संसारके कल्याणके लिअे, दरिद्रनारायणकी सेवाके लिअे, सत्य और अहिंसाके प्रचारके लिअे ही वे अपनी अन्य शक्तियोंकी तरह पत्रकारकलाको, लिखनेकी शक्तिको भी काममें लेते थे। सचमुच अुन्होंने कलमको तलवारसे ज्यादा ताकतवर बना दिया था। जिन्हें 'यंग अिंडिया', 'नवजीवन', 'हरिजन' या 'हरिजनसेवक' पढनेका अेक बार सच्चा चस्का लग गया, वे अुनके लिअे आतुर रहते थे और बापूके लेखोंका अेक अेक अक्षर पढे बिना नहीं छोडते थे। अंग्रेजी और गुजराती भाषाको अुनकी अेक विशेष देन है। मेरा विश्वास है कि अुनकी लेखनीसे निकली हुअी चीज आनेवाली पीढियोंको सदा प्रेरणा देती रहेगी।

१८९

सितम्बर १९३९ में दूसरा महायुद्ध छिड गया। अिस अवसर पर मुझे बापूकी आदर्श राजनीतिज्ञताके दर्शन हुअे। मेरी रायमें आदर्श राजनीतिज्ञ वह है जो अपने अुसूलको न छोडते हुअे शत्रुपक्षके भी सत्यको स्वीकार करके, जनताको अैसा कार्यक्रम दे जिससे अुसे कमसे कम त्याग करके अधिकसे अधिक फल प्राप्त हो सके। युद्धकालमें बापूने अिसी नीतिका अनुसरण किया। वे अपने अहिंसाके सिद्धान्त पर अन्त तक डटे रहे। अुन्हें देशकी स्वाधीनता जैसा बडा प्रलोभन भी कांग्रेस व भारतकी ओरसे मित्र राष्ट्रोंको सैनिक सहायता दिलवानेके लिअे ललचा नहीं सका, और न जवाहरलालजी, राजाजी और सरदार जैसे साथियोंके विछोहका डर ही सत्यपथसे विचलित कर सका। वे ध्रुवकी भांति अिस बात पर अटल रहे कि भारत जिस पक्षको न्याय-पक्ष मानता है अुसका समर्थन तो जरूर करेगा, मगर वह समर्थन नैतिक ही होगा, युद्धके रूपमें हरगिज नहीं। मुझे तो व्यावहारिक दृष्टिसे भी संसारके सबसे पटु राजनीतिज्ञ देश ब्रिटेनकी राजनीतिज्ञतासे भी गांधीजीकी राजनीतिज्ञता बढकर मालूम हुअी। आखिर तो मुख्य बात थी भारतके सद्भावकी। यदि ब्रिटेन अुसे प्राप्त कर लेता तो अिस देशसे युद्धके लिअे धनजन प्राप्त करनेमें कांग्रेस और बापूकी ओरसे जितना विरोध हुआ अुतना न होता और अुनके प्रचंड आन्दोलनसे भारत व संसारमें ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध जो प्रतिकूल वातावरण बना वह न बनता।

१९०

दूसरी खूबी बापूकी राजनीतिज्ञताकी यह थी कि ब्रिटिश साम्राज्यको भारतका सबसे बडा दुश्मन मानते हुअे भी अुन्होंने धुरी राष्ट्रोकी निरकुश और आक्रमणात्मक वृत्तिके मुकाबलेमें मित्र राष्ट्रोकी लोकतत्री और रक्षात्मक पद्धतिकी श्रेष्ठता स्वीकार की। अिसीलिअे अुन्होंने अग्रेजोको परेशान करनेके अिस अुत्तम अवसरका लाभ अुठाकर तुरन्त देशव्यापी सामूहिक सत्याग्रह छेड देनेसे परहेज किया। वे शत्रुकी विपत्तिमे अुस पर हमला करना कायर कृत्य समझते थे। अुनकी अहिंसक शौर्यकी कल्पना हिंसात्मक वीरतासे कही अधिक अुदात्त थी। परन्तु वे व्यावहारिक आदर्शवादी थे। अिसलिअे केवल अग्रेजोकी परेशानीके खयालसे ही भारतकी आजादीकी स्वाभाविक लडाअीको सर्वथा स्थगित या बन्द करनेको भी तैयार नही थे। वे अत्यन्त विवेक-पूर्वक सीढी दर सीढी आगे बढे। अुन्होंने अग्रेजोकी नेकनियतीकी परीक्षा लेनेको मित्र राष्ट्रोसे अुनके अिस दावेका प्रमाण चाहा कि वे ससारकी स्वतत्रताके लिअे लड रहे हैं। अुन्होंने यह माग की कि युद्धकालमें भारतको व्यावहारिक स्वशासन दे दिया जाय और युद्धके समाप्त होने पर भारत पूरी तरह स्वाधीन कर दिया जाय। ब्रिटिश सरकार अिस अिम्तहानमें फेल हुअी। अुसने कोअी स्पष्ट वचन नही दिया। तब बापूने सरकारको काफी मौका देकर पहले कदमके तौर पर प्रान्तोके काग्रेसी मत्रिमडलोसे अिस्तीफे दिलवाये। जब अिससे भी अग्रेजोके स्वार्थने अुनके विवेकको जाग्रत नही होने दिया, तब गाधीजीने देशव्यापी व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू किया। अुसमे यह विशेषता देखने लायक थी कि सब सत्याग्रहियोको पैदल यात्रा करते हुअे दिल्ली पहुचना था, ताकि भारतके कोने कोनेमें काग्रेसका सन्देश पहुच जाय, अधिकसे अधिक देशभक्तोको देशकी ग्रामीण जनताका सम्पर्क और परिचय प्राप्त हो जाय, अुनमें आरामतलब और अभिमानपूर्ण नेतृत्वकी भावनाके बजाय समता, नम्रता और परिश्रमशीलताका सस्कार पडे और सरकारके लिअे भी अिस व्यापक आन्दोलनका मुकाबिला करना आसान न रहे।

१९१

नतीजा यह हुआ कि ब्रिटिश मत्रिमडलकी ओरसे क्रिप्स साहब भारतसे समझौता करने आये। अुनके प्रस्तावोको समझनेमें जहा अन्य भारतीय नेता बहुत दिन अुलझे रहे, वहा गाधीजी अुन्हे देखते ही भाप गये कि अुनमें कुछ दम नही है। अुन्होंने अुन्हे आगेकी तारीखका चेक कहकर सकेत कर दिया कि वह दिवालिये बैंककी न सिकरनेवाली हुडी है। जब अुन्होंने देखा कि ब्रिटिश सत्ताधिकारी अपनी स्वार्थपूर्ण सत्ता बनाये रखनेके लिअे अिस सकट कालमें भी हमारी आपसी फूटका — हिन्दू-मुस्लिम झगडेका — बेजा फायदा अुठानेसे बाज नही आते, तो अुन्होंने जो प्रस्ताव किया अुसमें तो अेक सत्याग्रहीके साहस और शौर्यकी हद ही कर दी। जैसे अुन्होंने गोलमेज परिषदके समय यह कह दिया था कि मुसलमानोके हाथमें कलम दे दी जाय

और वे जो चाहे सो रख लें और बाकी हिन्दुओंके लिअे छोड दें, वैसे ही क्रिप्स मिशनके अवसर पर घोषणा कर दी कि ब्रिटेन भले ही मुस्लिम लीग या और किसी भी भारतीय प्रजा-पक्षके हाथों भारतके शासनकी बागडोर सौंप दे। मगर न ब्रिटिश सरकारकी नियत अच्छी थी और न मित्र राष्ट्रोंको अपने सबल साथीको नाराज करनेकी हिम्मत हुआी और न जिन्नाह साहबका ही यह हौसला हुआ कि देशकी लगाम वे और अुनकी पार्टी सभाल ले। अतमें बापूको विवश होकर अंग्रेजोंके लिअे 'भारत छोडो' का और भारतवासियोंके लिअे 'करो या मरो' का दोहरा नारा बुलन्द करना पडा और देशमें सामूहिक सविनय भंगका प्रचण्ड आन्दोलन छेड देना पडा। अुसका जो परिणाम हुआ वह अेक सर्वविदित अैतिहासिक घटना है। अुसने मानवजातिको यह अमर सन्देश दे दिया कि पराधीन राष्ट्रोंकी मुक्तिका, न्याय प्राप्तिका, राष्ट्रोंके बीच झगडे निपटानेका हिंसा ही अेकमात्र साधन नही है, बल्कि अेक दूसरा अुपाय अहिंसा भी है और वह कही सस्ता, कही श्रेयस्कर और कही चिरस्थायी है। यह बापूके सत्याग्रह मार्गका ही चमत्कार था कि डेढ सौ वर्षके पीडित और पीडकके सम्बन्धोंके बाद भारत और ब्रिटेन आज दुश्मन न होकर दोस्त है।

१९२

अिन तीन वर्षों अर्थात १९३९ से १९४२ के अरसेमें मुझे बापूके सान्निध्यमें सेवाग्राम रहनेका सौभाग्य मिला। अुस समय मेरे पास मुख्यत. पुस्तकालय, वाचनालय, पत्रव्यवहार और 'हरिजन' के अनुवादका काम था। अेक बार राजकुमारी अमृतकौर सेवाग्रामसे शिमले जा रही थीं। मुझे भी अुन्ही दिनो दिल्ली जाना था। मैंने बापूसे पूछा, "मैं राजकुमारी बहनके साथ ही चला जाअू तो?" "खर्चा वह दे तो न लेना।" बापूका यह अुत्तर सुनकर आश्चर्य भी हुआ और दिलको ठेस भी लगी। मैंने कुछ तेजीसे आकर प्रश्न किया, "यह सवाल ही कहा है?" बापू बोले, "वह स्वभावकी अुदार है और अुसके तुम्हारे मीठे सम्बन्ध हैं। कही वह आग्रह कर बैठे और तुम अिनकार न कर सको तो तुम्हारी तेजोहानि हो सकती है। हम गरीब लोग हैं। स्वाभिमान ही हमारी पूजी है। अुसकी रक्षाका हमें सदा ध्यान रखना चाहिये। अिसीलिअे तुम्हे चेतावनीके तौर पर कह दिया है।" अकसर लोकसेवक मिथ्याभिमानको स्वाभिमान मानकर अुद्वेगकारक व्यवहार करते हैं। परन्तु बापू दूसरेसे अुपकार करानेमें अधिक अपमान समझते थे।

१९३

अजमेर मेरवाडेमें कुछ ही समय पहले किसी सार्वजनिक समारोहका सभापतित्व करने अेक प्रसिद्ध राजपुरुष आये थे। अुनका आतिथ्य करनेवाले कुछ कांग्रेसी कार्य-कर्ताओंने अुन्हें मद्यपान करते देखा तो अुन्हे बडा असन्तोष हुआ। अेक रोज मैंने सेवाग्राममें सैरके समय अिस घटनाका जिक्र करके बापूसे पूछा "आप छोटे कार्य-

कर्ताओंके साथ तो अितनी सख्ती करते हैं परन्तु अिस तरहके बडे लोगोके खिलाफ कुछ भी कार्रवाओी क्यो नही करते?" बापूकी आदत थी कि जब कोअी प्रश्न अुनके ख़यालसे अच्छा होता, तब अुसे अच्छा बताये बिना नही रहते थे। अिस सवाल पर भी अैसी ही राय ज़ाहिर करते हुअे अुन्होने कहा, "   तो शराब ही नही पीते, दुश्चरित्र भी है। मगर मैं क्या करू? अरसेसे हमारी राजनीतिमें भी यह पाश्चात्य परिपाटी पड गअी है कि व्यक्तिकी खानगी जिन्दगी और सार्वजनिक जीवन अलग अलग चीज है। मैंने अिस परिपाटीको तोडनेकी बहुत कोशिश की, मगर मैंने हार मान ली, क्योकि अिसमें बडेसे बडे कार्यकर्ता मेरे कडे विरोधी है।   शामको शराबकी बोतल और वेश्याको लेकर बग्घीमें सैरको निकलते थे, मगर किसीकी मजाल नही थी कि अुन्हे कुछ भी कहता। क्योकि वे बडे दबग आदमी तो थे ही, साथ ही अुस समय जनताके प्रमुख सेवक भी थे। पुरानी बातोको छोड दो। अभी अभीकी ताजी घटना सुनाअू। अुस दिन व्यक्तिगत सत्याग्रहके लिअे मैंने विनोबाको प्रथम सैनिक चुना और अुनके परिचयमें ये शब्द रखे कि अुन्होने कभी किसी स्त्रीको छुआ तक नही है, तो मुझे वह वाक्य निकाल देना पडा, क्योकि   ने विरोध किया।   का आग्रह मैं टाल नही सकता। यह है हमारे राजनीतिक क्षेत्रकी हालत। यही गनीमत समझो कि कांग्रेसने मेरा शराबबन्दीका कार्यक्रम स्वीकार कर लिया और अुसके अनुसार बहुत लोगोने मद्यपान छोड दिया। मगर मुझे खानगी जीवनकी शुद्धताको राष्ट्रीय कार्यक्रमका अग बनानेमे अिससे अधिक सफलता नही मिली। अिसलिअे मैंने यह मर्यादा बना ली है कि अिस विषयमें अपने साथियो अर्थात् अपनी सस्थाओके कार्यकर्ताओके प्रति कडाअी रखू और दूसरोके प्रति नरमी।" अपनोके प्रति बापूकी यह कठोरता और दूसरोके साथ अुदारता कल्याणकारी ही सिद्ध हुअी। साथ ही यह भी सही है कि बापूके प्रयत्नसे सार्वजनिक जीवनमें काफी पवित्रता आअी और अपवित्र साधनोका खुला समर्थन या अुपयोग करनेमें सार्वजनिक लोगोको शर्म-सी महसूस होने लगी है।

११४

अिन दिनो राजस्थान और अजमेरके सम्बन्धमें किसी कार्यकर्ता या राष्ट्रीय कार्यक्रमका कोअी मामला बापूके पास आता तो वे अकसर मुझसे भी पूछ लेते थे। अेक दिन व्यक्तिगत सत्याग्रहके सिलसिलेमें अेक कांग्रेस पदाधिकारी सत्याग्रहके अुम्मीदवारोकी सूची लेकर बापूको दिखाने आये। ये सूचिया बापूसे मजूर करा लेना जरूरी था। देशभरके प्रमुख कार्यकर्ताओके प्रत्यक्ष सम्पर्कमें आनेका अुनका यह अेक तरीका भी था। बापूने सूची मुझे देकर पूछा "कुछ कहना है?" मैंने कहा "आपकी शर्तोके अनुसार तो अिस फेहरिस्तमें सिर्फ तीन ही नाम योग्य हैं।" अुन्होने पूछा "यह कैसे?" "अिसलिअे", मैंने अुत्तर दिया, "कि बाकी लोग पहननेके कपडेके सिवा दूसरा कपडा खादीका ही काममें नही लेते और अुनके आश्रित तो खादी पहनते भी

नहीं।' पदाधिकारीने प्रश्न किया, "परन्तु क्या यह जरूरी है?" "बेशक", बापूने जवाब दिया। अैसी शर्तों द्वारा जहां बापू देशभक्तोंके सेवाभाव या महत्त्वाकांक्षासे लाभ अुठाकर खादी आदिका प्रचार करते थे, वहां संख्याकी परवाह न करके योग्यता पर ही अधिक जोर देते थे।

१९५

अेक रातको दस बजे डॉ० सुशीला नय्यर जगाने आअीं। कहा, "बापू याद कर रहे हैं।" मैं पहुंचा तो अेक तार हाथमें देकर पूछने लगे, "अिन्हें जानते हो कौन हैं? कैसे आदमी हैं? क्या मैं अिस मामलेमें पड़ूं?" तार माणिक्यलालजी वर्माकी पत्नी नारायणी बहनका था। माणिक्यलालजी अुन दिनों मेवाड राज्यके बन्दी और बीमार थे। तारमें अुनके मामलेमें हस्तक्षेप करनेको कहा गया था। मैंने कहा, "माणिक्यलालजी वर्षों तक मेरे साथी रहे हैं। बिजौलियामें पथिकजीके मुख्य शिष्य और सहायक थे। अहिंसाको तो पूरी तरह नहीं मानते, मगर किसानों और गरीबोंके सच्चे सेवक हैं। मेरी रायमें आपको सहायता अवश्य देनी चाहिये।" सुबह होते ही बापूने मेवाडके दीवानको, जो अुस समय श्री टी० विजयराघवाचार्य थे, तार दिया कि मेरी सलाह है कि माणिक्यलाल छोड दिये जायं। अुसी दिन स्थानापन्न दीवान श्री प्रभासचन्द्र चटर्जीका अुत्तर आ गया कि आपका तार श्री विजयराघवाचार्यके पास, जो छुट्टी पर मद्रास गये हुअे हैं, भेज दिया गया है। अेक सप्ताहके भीतर माणिक्यलालजी रिहा कर दिये गये। अिस प्रकार अज्ञात किन्तु प्रामाणिक कार्यकर्ताओंको सहायता करनेको बापू सदा तैयार रहते थे।

१९६

काठियावाडके अेक प्रसिद्ध कार्यकर्ता जापानसे लौटे थे। वे कुछ व्यक्तिगत कारणोंसे सार्वजनिक प्रवृत्तियोंसे हटकर विदेश चले गये थे। जापानकी खेती पर वे कोअी पुस्तक भी लिखकर लाये थे। अुनकी प्रति बापूको भेंट करना चाहते थे। बापूसे मिलना भी चाहते थे और झिझक भी थी। मेरे सुपरिचित थे। मुझसे सलाह ली। मैंने कहा, 'आप सार्वजनिक जीवनमें फिरसे आना चाहते हों तो या तो अुनसे सलाह न मांगिये या फिर वे जो सलाह दें अुस पर चलिये।" "मगर बापू स्वयं ही कुछ पूछ लें और सलाह दे दें तो?" अुन्हें डर हुआ। मैंने अुत्तर दिया, "यदि मैंने बापूको ठीक तरह समझा है तो वे अपने आप अिस विषयको न छेड़ेंगे और न कोअी राय ही देंगे। आप अुनके दर्शन करके जापानकी बात करके चले आअिये। वे केवल कुशल पूछेंगे और अिसी विषय पर बात करेंगे।" मेरा अनुमान बिलकुल सही निकला। बापूका कौल था कि मैं किसीका काजी नहीं हूं। अिस कौलकी वे पूरी पाबन्दी करते थे।

१९७

नियमित रूपसे बापू 'बॉम्बे क्रानिकल' और 'टाअिम्स ऑफ अिंडिया' शुरूसे पढ़ते थे। अेकको राष्ट्रीय गतिविधियों और दूसरेको विरोधी पक्षसे परिचित रहनेको देखते थे। दोनों बापूके मुख्य कांग्रेस गुजरात और काठियावाड सम्बन्धी प्रमुख पत्र थे। सेवाग्राम आनेके बाद वे 'नागपुर टाअिम्स' पर भी अेक नजर डाल लेने लगे थे। साप्ताहिकोंमें से श्री नटराजनके 'अिंडियन सोशल रिफार्मर' का अग्रलेख और मासिकोंमें रामानन्द बाबूके 'माडर्न रिव्यू' की सम्पादकीय टिप्पणिया अवश्य देखते थे। मगर अखबारों पर वे आध घंटा रोजसे ज्यादा वक्त खर्च नही करते थे। वे दोपहरके भोजनके बाद लेटे लेटे समाचारपत्रका अवलोकन करते थे, शीर्षकों पर दृष्टिपात कर जाते थे और कोअी महत्त्वपूर्ण समाचार या बयान होता तो अुसे पढ़ लेते थे। अिसीमें अुन्हें नींद आ जाती थी।

परन्तु पत्र-पत्रिकाअें तो पुस्तकोंकी तरह अुनके पास भेंटस्वरूप दुनिया-भरसे ढेर सारी आती थीं। अुन्हें देखकर अुनकी दिलचस्पीकी कतरनें काटकर देना मेरा काम था। अिन्हें वे अपनी 'लाअिब्रेरी' (शौचालय) मे पढते थे। विहंगम दृष्टि भी अुनकी अितनी पैनी थी कि कभी कोअी महत्त्वपूर्ण घटना सम्बन्धी कतरन रह जाती तो फौरन टोक देते थे।

१९८

अेक दिनकी बात है कि हैदराबाद (दक्षिण) के बारेमें किसी अखबारमें समाचार छपा था कि निजामके किसी अिलाकेमें कुओंके पानीसे बहुतसी मृत्युअें अेक साथ हुअी है। समाचारमें कहा गया था कि वह प्रदेश सरकश माना जाता है, अिसलिअे सन्देह किया जाता है कि पानीमें जहर मिलाया गया है और अुसमें राज्याधिकारियोंका हाथ है। अिसकी कतरन मैंने बापूके सामने रखी तो सही, परन्तु डरते डरते। मैंने अुन्हें अपना संकोच बताया तो कहने लगे, "अैसे समाचार मुझे जरूर बताया करो। हिंसा और असत्यकी राजनीतिमें यह सब हो सकता है। हम अैसी चीजोंकी अुपेक्षा नही कर सकते। हमी अुनको हाथमें लेनेका साहस नही करेंगे तो कौन करेगा? हां, हमें यह सावधानी जरूर रखनी चाहिये कि बिना जांच किये कोअी प्रकाशन करके या राय देकर हमारे हाथों किसीके प्रति अन्याय न हो जाय।" जहां तक मुझे याद है बापूने हैदराबाद राज्यको अिस सम्बन्धमें पत्र लिखा था और फिर 'हरिजन' में कुछ लिखा भी था।

१९९

. . . के चरित्रदोषके बारेमें अुनके आश्रमके अेक कार्यकर्ताने अुनके वरिष्ठ अधिकारीको शिकायत लिखी थी। आरोप यह था कि अधिकारीने जाच तो की, परन्तु शिकायत करनेवालेकी जानकारी या मौजूदगीमें नही की और फैसला दे दिया। अिस पर अुसे असतोष हुआ और अुसने अपना असतोष बापू तक पहुचा दिया। बापूने सैरके समय मुझसे जिक्र किया तो मुझे कुछ कहनेमें झिझक हुअी। तब बापू कहने लगे, "मैं तुम्हारा सकोच समझ सकता हू। तुमसे न भी पूछता, मगर मेरी मुश्किल यह है कि किशोरलालभाअीसे कहता हू तो अुन्हे अिस तरहकी घटनाओसे बहुत आघात लगता है। जमनालालजी सबसे ठीक रहते, मगर वे तो चले गये। महादेव भी नही रहे। मुझे स्वय अितना समय नहीं कि खुद जाच करू।" मुझे लाचार होकर जितना मालूम था कहना पडा। सुनकर बापूका चेहरा अेकदम गमगीन हो गया और अेक सर्द आह भरकर कहा, "अिस तरहके दोष कार्यकर्ताओसे अितने हो रहे है, और बडे-बडे कार्यकर्ताओंसे हो रहे है कि कभी कभी मैं निराश होने लगता हू। अितना तो मै सोचने ही लगा हू कि अिस दिशामें मेरा जो अेक बडा और लम्बा प्रयोग चल रहा है वह सफल होता दिखाअी न दिया, तो अिधरसे शक्ति बचाकर अधिक जोर हिंसाके विरोधमें ही लगाअू। मुझे खतरा यही दिखाअी देता है कि यही मेरा रवैया प्रगट होगा तो हमारी अपनी सस्थाओंमें दभकी वृद्धि न हो। अिस मामलेमें मुझे भारी दभ मालूम होता है। मै दभको सबसे खतरनाक बुराअी समझता हू, क्योंकि दभी आदमीके सुधरनेकी गुजाअिश नही होती।" अिस सवादके बाद के आश्रमके अेक कार्यकर्ता मेरे पास भी अेक पुलदा के दुराचरणके प्रमाणोका लेकर आये थे। अिनमें के पिताके आक्षेप और कुछ बहनोके पत्र भी थे। मगर मैंने अुस भाअीको प्रोत्साहन नही दिया, क्योंकि मुझे बापूका सवाद याद था।

२००

मुझे बहुमूत्र रोगका सन्देह हो गया था। बापूको मालूम होते ही मेरे आहार पर प्रतिबध लगा दिये। चावल और अधिक शकरवाले फल बन्द कर दिये। प्यारेलालजीने सूखे फलोंका सुझाव दिया। मैं लेने लगा। बहनको अिसमें अमीरी नजर आअी। अुन्होंने मुझे कडवी बात कह दी। किसीने यह खबर बापूको दे दी तो मुझसे कहने लगे, ". का दिल साफ है। सेवाभावका तो कोअी पार ही नहीं। मेरे आरामके पीछे पागल-सी रहती है। अपने शरीरकी जरा परवाह नही करती। बडे घरकी लडकी होकर भी गरीबोकी तरह खाती, पहनती और रहती है। परन्तु जबान अुसकी कुल्हाडी है। अुसके प्रहार मुझ पर ही होते रहते है तो और किसीकी तो बात ही क्या? बुरा न मानना। सह लेना।" मेरा सारा क्षोभ काफूर हो गया। अुधर अुन बहनको भी कुछ कहा होगा, क्योंकि अिसके बाद अुन्होंने मुझे कोअी कटु बात नहीं कही।

२०१

"   तो आश्रमका साड है।" यह वाक्य अेक दिन सुबहकी सैरको आश्रमसे निकलते निकलते बापूने कहा। कारण यह था कि   भाअी किसी पर बिगड रहे थे और बडे जोर-जोरसे बोल रहे थे। मैंने कहा, "   भाअी अपने नियमोका पालन करानेमें जितनी कडाअी दूसरोके साथ करते हैं, अुतनी दूसरोके नियम स्वय पालन करनेमें नही करते। वे पुस्तकालयसे बिना पूछे ही नही, मना करने पर भी अखबार और किताबें अुठा ले जाते हैं।" "हा, यह दोष भी अुसमें है। परन्तु सबसे बडी कमजोरी है अुसका क्रोधी स्वभाव। जब आवेश आता है तो मुझे भी नही बख्शता। मगर अुसमें अिन अवगुणोकी तुलनामें गुण बहुत भरे है। परिश्रमी गजबका है। वह ब्रह्मचर्यका वीर साधक है। धुनका पक्का, अत्यन्त निर्भीक और साहसी है। किसीकी सेवा करता है तब अपनेको भूल जाता है। खर्च कम करनेमें तो अुसकी जोडके बहुत ही कम कार्यकर्ता हैं।" अिस प्रकार बापू दोषदर्शनकी अपेक्षा गुणोको अधिक देखते, अुनकी वैसी ही कद्र करते और विविध शक्तियोका लोकसेवामें अुपयोग करते थे।

२०२

मालिश बापू रोज कराते थे। मगर अुस समयका भी कअी तरहसे दोहरा अुपयोग कर लेते थे। अेक दिन मुझे भी कोअी जरूरी काम हो गया तो मालिशके समय बुला लिया। मैंने देखा कि वे कुछ जरूरी कागजात पढ रहे हैं। मालिशके समय वे नीदकी कसर भी पूरी कर लेते थे। नीद लेनेमें तो वे अितने पक्के और मधे हुअे थे कि दक्षिण भारतकी हरिजन-यात्रामें मोटरके सफरमें भी सो लेते थे। कभी कभी तो जब चाहते दस-पाच मिनटकी झपकी भी ले सकते थे।

२०३

सवाददाताओसे मुलाकात करते समय बापू बडे जागरूक रहते थे। अुनका आग्रह होता था कि मुलाकातकी रिपोर्ट अुन्हें दिखाकर भेजी जाय। कभी कोअी गलत रिपोर्ट प्रकाशित हो जाती, तो सवाददाताको अुलहना दिये बिना न रहते। कोअी पत्र-प्रतिनिधि भूल स्वीकार न करता और सुझाने पर भी अुसे न सुधारता तो अुससे फिर भेंट नही करते। कअी विदेशी अखबार तो समुद्री तारसे प्रश्न और अुत्तरके लिअे रुपया भेजकर सामयिक समस्याओ पर अुनके विचार प्राप्त किया करते थे। अिन प्रेस तारोंको कमसे कम शब्दोंमें भेजनेकी कला अुन्होंने अितनी विकसित कर ली थी कि अेक भी फालतू शब्द नहीं जाता था। [illegible] भी वे जहा जाते जानकारी कर लेते थे और समाचार पहले भेजनेका ध्यान रखते थे।

'यंग अिंडिया' और 'हरिजन' पत्रोंके लेख वे सफरमें भी ठीक समय पर भिजवा देते थे। रेलगाडीके समयोंकी जानकारी और पाबन्दी भी अिनी तरह करते थे और कहां, किस समय, किस गाडीका सम्बन्ध मिलेगा, यह अुन्हें खूब याद रहता था। मैं जब हरिजनयात्रामें मद्राससे अजमेर लौटा, तो मुझे ठेठ तकके कनेक्शन अितने नहीं बता दिये कि मैं दंग रह गया। और रास्तेमें मुझे कहीं पूछनेकी जरूरत नहीं पडी।

२०४

प्रश्न तो मैं भूल गया हूं, परन्तु कोअी आध्यात्मिक चर्चा थी। मेरी जिज्ञासा पर बापू लम्बा विवेचन कर रहे थे। मैं अुनके हर वाक्य पर 'जी' कहता जाता था। बीचमें कहीं ध्यान अिधर-अुधर चला गया होगा या बात समझमें नहीं आअी होगी, मैं चुप हो गया। बापू भी तुरन्त रुक गये और बोले, 'क्यों क्या हुआ? शंका हो या कुछ न समझे हो तो खामोश न रहकर पूछ लेना चाहिये। गीतामें ज्ञान-प्राप्तिके तीन साधन बताये हैं, प्रणिपात, परिप्रश्न और सेवा। प्रश्न करनेमें संकोच नहीं करना चाहिये और जब तक बात पूरी तरह समझमें न आये, पूछते ही रहना चाहिये। चुप हो जानेमें अेक तरहका असत्य है। सुननेमें भी ध्यान पूरा रखना चाहिये। अन्यथा अुसमें असभ्यताका दोष होता है।' बापू जितने धीरजके साथ ज्ञान-दान करते थे, अुतनी ही अेकाग्रताकी तालीम भी साथ साथ देते रहते थे।

२०५

बापू व्याकरणके बडे भक्त थे। वे भाषाके शुद्ध ज्ञानके लिअे व्याकरणको बहुत महत्त्व देते थे और वैज्ञानिक जानकारीके लिअे अुसे अनिवार्य मानते थे। 'हरिजन' के मेरे अनुवादसे खुश होकर अुन्होंने मुझे भाषाशास्त्रीकी पदवी दे डाली और मुझे आदेश दिया कि 'सैरके समय जब मैं हिन्दीमें बात करूं तो मेरी गलतियां वहीं और तत्क्षण सुधार दिया करो।' अिससे पहले मुझे वे हिदायत कर चुके थे कि 'हरिजनसेवक' के लिअे लिखे जानेवाले मूल हिन्दी लेखों और टिप्पणियोंकी भाषा मैं देख लिया करूं और जहां जरूरत हो, भाषा ठीक कर दिया करूं। अिसे तो मैंने मान लिया, मगर यह नया हुक्म मेरे लिअे बडी परेशानी करनेवाला था। अितने महान व्यक्तिको और बड़े-बड़े आदमियोंके सामने टोकना मुझे बिलकुल नहीं जंचा। मगर बापू कहां माननेवाले थे? झूठी शर्म या मान अुन्हें छू तक नहीं गअी थी। कहने लगे, 'जहां ज्ञान है वहां बच्चा भी गुरु है। अिससे सहजमें मेरी भाषा सुधर जायगी और अिसके लिअे अलग समय भी नहीं देना पडेगा।' मैं मजबूर होकर मगर कंजूसीके साथ अपनी नअी ड्यूटी बजाने लगा। अेक दिन किसी वाक्यमें अुन्होंने 'मैंने बोला' शब्दप्रयोग किया। मैंने कहा, 'मैं बोला' होना चाहिये। बापूने कहा, 'क्यों, कोअी नियम हो तो बताओ।' व्याकरणका तो मुझे भी बहुत शौक था, मगर बचपनका

अभ्यास बहुत पहले छूट गया था। मुझे अुत्तरमें कुछ समय तो लगा, मगर नियम बनाकर बताना पड़ा कि 'सकर्मक क्रियाओंके ही साधारण भूतकालमें कर्ताके 'ने' प्रत्यय लगता है। अकर्मक क्रियाओंके नहीं लगता।' तब कहीं बापूका समाधान हुआ। अुसके बाद तो जब मैं बापूके किसी वाक्यमें शुद्धि करता, तो पहले मन ही मन नियम याद करके या घड़ कर तैयार कर लेता था।

२०६

अिसी सिलसिलेमें अेक मजेदार और खासकर राजेन्द्रबाबूकी बालोचित सरलता और सीखनेकी वृत्तिका अेक किस्सा याद आ रहा है, जो डूगरपुरके महारावल साहबने सुनाया था। बात यू हुअी कि भारतके आजाद होने पर राजाओंसे शर्तें तय करनेके लिअे अेक समझौता समिति (Negotiating Committee) नियुक्त हुअी थी। अुसमें कांग्रेसकी ओरसे नेहरूजी, सरदार, मौलाना और राजेन्द्रबाबू थे। राजाओंके नुमाअिन्दोंमें डूगरपुरके महारावल भी अेक थे। वे राजेन्द्रबाबूके पास ही बैठते थे। अुन्होंने चारों नेताओंका वर्णन अेक अेक वाक्यमें अिस तरह किया "नेहरूजी सच्चे आदमी हैं। अेक दिन अेक बात कहेंगे और भूल हुअी होगी तो दूसरे दिन दूसरी बात कहकर सुधार लेंगे। मौलाना शानदार आदमी हैं। राजाओंने जब अपनी कठिनाअियों पर अधिक जोर दिया तो कहने लगे, 'राजा साहबान, हमारी मुश्किलातका भी तो खयाल फरमाअिये। हमें सोशलिस्ट साथी क्या कहेंगे?' सरदार मजबूत आदमी हैं। जो बात कहेंगे खूब सोचकर मुंहसे निकालेंगे और फिर अुस पर डटे रहेंगे। राजेन्द्रबाबू सरलताकी मूर्ति हैं। मुझसे कअी बार पूछा, 'महाराज साहब, अिसका क्या मतलब है?' मुझे बड़ा संकोच हुआ। मैंने कहा, 'मैं तो आपके सामने बच्चा हूं, मैं आपको क्या समझाअू?' बोले, 'नहीं, नहीं, अिसमें कोअी हर्ज नहीं। मुझे जो नहीं आता पूछ लेता हूं। आपको आता हो तो बता दीजिये।'"

२०७

१९४० या १९४१ की बात होगी। अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष मद्रासके डॉ० लक्ष्मीपति बापूसे मिलने आये हुअे थे। अुनके खयालसे बापूको गलतफहमी-सी थी। अुसीको दूर करने वे आश्रममें कुछ दिन ठहरे थे। सुबह-शामकी सैरके वक्त बापूसे बातें होतीं। बापू मानते थे कि आयुर्वेदकी चिकित्सा अधिक प्राकृतिक, सस्ती और स्वदेशी तो है, पर विज्ञानकी दृष्टिसे अुसकी प्रगति रुक गअी है और आम तौर पर और शल्य-विद्या (सर्जरी) में खास कर वह अेलोपैथीका मुकाबला नहीं कर सकती। डॉ० लक्ष्मीपतिका दावा था कि आयुर्वेद अब भी रोगोंके अिलाजमें किसी और चिकित्सा-प्रणालीसे कम कारगर नहीं है। कुछ दवाअें तो अुसकी अैसी अक्सीर हैं कि किसी दूसरे आरोग्यशास्त्रमें पाअी नहीं जातीं। राज्याश्रय

या प्रोत्साहनके अभावमें अुसका विकास रुक गया है, जो काफी माली मदद मिलनेसे अब हो सकता है। बापूने कहा, "मैं कुछ मरीज आपके हवाले करता हू, अुन्हें अच्छा कर दीजिये। खोजके लिअे साधन चाहिये तो सेवाग्राममें आपको जगह भी दे सकता हू और रुपया भी। आप खोज व प्रयोग करके अपना दावा सिद्ध कीजिये। मै अपनी राय बदल लूगा।" कोअी शोधशाला खोलनेका विचार भी हुआ, पर वह कार्यान्वित नही हुआ। बहरहाल, बापू अपने विचार प्रयोग-सिद्ध अनुभवसे बदलनेको सदा तैयार रहते थे।

२०८

स्वच्छताके मामलेमें बापू बडे कट्टर थे। आदर्श सफाअीकी बात करते हुअे अक्सर वे पाखाने और भोजनालयका साथ साथ जिक्र करते थे और कहते थे कि दोनो ही जगह अेक भी मक्खी नही होनी चाहिये। अिसके लिअे जालियो और फिनाअिल वगैराके खर्चीले साधनोंके बजाय वे सफाअी पर ही जोर देते थे। गरीब देश और अुसके गरीब निवासियोके अल्प सामर्थ्य और प्रमुख हितकी बात सदा अुनके ध्यानमें रहती थी। छूतकी बीमारियोकी रोकथामके लिअे तो अिस दोहरी सफाअीको वे अनिवार्य ही मानते थे। अुनकी संस्थाओंमें अैसी ही सफाअी रखी भी जाती थी। मगर अुनके हर कामकी तरह अिसमें भी साधनोकी अपेक्षा किफायत और मेहनतके स्वावलम्बी तरीकेको ही अधिक महत्त्व दिया जाता था।

२०९

युद्धकालीन व्यक्तिगत सत्याग्रह छेडनेसे पहले वायसरायका बुलावा आया था। वे जल्दीसे जल्दी बापूसे दिल्ली या शिमलेमें मिलना चाहते थे। यह प्रस्ताव था कि बापू हवाअी जहाजसे पहुचें या विशेष रेलगाडीसे। बापू दोनो ही प्रस्ताव नामजूर करके मामूली ट्रेनमें गये। अुस अवसर पर अुन्होने अिस आशाके अुद्‌गार प्रगट किये थे "मै टेलीफोन नही चाहता, पर घनश्यामदासने लगवा दिया। सडक नही चाहिये थी, सो मध्यप्रदेशकी सरकारने वर्धासे सेवाग्राम तक बना दी। मोटर नही चाहिये, मगर जमनालालजी नही मानते। लोग प्रेमसे सुविधायें दे देते है तो ले लेता हू। परन्तु हवाअी जहाज या स्पेशल ट्रेन तो मैं अपने लिअे हरगिज बरदाश्त नही कर सकता। आखिर तो खर्चका यह भार गरीबो पर ही पडेगा न? और मै अेक दिन देरसे पहुचा तो कोअी प्रलय नही हो जायगा। काल-प्रवाह यो ही चलता रहेगा, अिसे कोअी कम-ज्यादा नही कर सका। गति बढ जानेसे ससारका कोअी भला हुआ हो, सो बात भी नही। फिर क्यो अेक नअी व्याधि मोल लू?"

२१०

दिल्लीकी बात है। बापू डॉ० असारीके दामादके यहा ठहरे हुझे थे। मै अपने अेक रिश्तेदार युवकको मिलाने ले गया था। अुस पर समाजवादी विचारधाराका प्रभाव था। परिचयके बाद वह पूछ बैठा, "बिडला अिधर मिल चलाते है और मजदूरोका शोषण करके करोडो रुपया कमाते है और अुधर आपको लाख-पचास हजार गालना दे देते है और खादी पहन लेते है। क्या यह ढोग नही है?" "हम अैसा क्यो समझें?" बापू बोले, "जो जितना अच्छा करे अुतना ही धन्यवादका पात्र है। दूसरे पूजीपति तो अितना भी नही करते। अुनसे तो अच्छे ही है।" बापू गुणग्राहक थे और अपनी अिस वृत्तिसे अपने सदुद्देश्योके लिअे अनेक सहायक पैदा कर लेते थे।

२११

दीनबन्धु अेण्ड्रूज और बापू अेक दूसरेके घनिष्ठ मित्र थे। आपसमे 'चार्ली' और 'मोहन' के नामसे सम्बोधन करते थे। अेक बार सेवाग्राम आये तो लम्बा कुर्ता, जिसका अूपरका बटन खुला हुआ था और चौडी काली किनारकी धोती बगाली ढबसे पहने हुअे थे। मोटरसे अुतरते ही मैंने अुन्हे देखा तो मुझे आश्चर्य हुआ और बापूको खबर दी कि दीनबन्धु तो जनानी धोती पहने हुअे है। अितने ही में दीनबन्धु आ पहुचे। देखते ही बापू बोले, "चार्ली, आज यह भेस कैसे?" "क्यो, क्या हुआ?" अेण्ड्रूज साहबने विस्मयसे पूछा। "हुआ क्या, रामनारायण कहते है, अैसी धोती तो स्त्रिया पहनती है।" अिस मीठे व्यगका अुत्तर भी दीनबन्धुने वैसा ही रसीला दिया, "मुझे भी तो अपने मोहनके पास आना था!" दो बुजुर्गोंका यह विनोद-व्यापार अेक अजीब दृश्य था। बापूका कहना सच था कि अगर अुनमें जिन्दा-दिली न होती तो अितनी झझटोके बीच जिन्दा ही नही रह सकते थे या कमसे कम पागल जरूर हो जाते।

२१२

सन् १९४० में बापूका जन्मदिवस था। सुबह आठ नौ बजेका समय होगा, वर्धाके महिलाश्रमके शिक्षक-शिक्षिकाअें और छात्राअें बापूको प्रणाम करने और अुनकी दीर्घायुकी कामना करने आयी हुअी थी। शायद अुससे कुछ ही दिन पहले बापू जिन्नाह साहबसे असफल वार्तालाप करके बम्बअीसे लौटे थे। लडकियोको प्रवचन करते हुअे अुन्होने ससारमें हिंसाकी शक्तियोके बढते हुअे बलका गभीर चित्र खीचते और देशकी समस्याओ पर विचार प्रगट करते हुअे कहा, "मुझे अहिंसाके सामर्थ्य पर अटूट विश्वास है। मुझे भरोसा है कि किसी न किसी दिन सत्याग्रह अग्रेजो तकका हृदय-परिवर्तन कर देगा। राजाओका तो करेगा ही। मगर जिन्नाह साहब तो हिंसाकी मूर्ति है। अुनका दिल बदलनेकी आशा नही होती।" अिन अुद्गारोको सुनकर अुस समय

तो मेरा जी दहल गया, परन्तु बादके हालातने साबित कर दिया कि बापू मानव-चरित्रको कितना अच्छी तरह पहचानते थे।

२१३

. बहनकी सगाओी . से तय हो गओी थी। वे कालेजकी छुट्टियोंमें सेवाग्राम आश्रम आओी हुओी थीं। अुनके भावी पतिका पत्र डाकसे आया तो किसीने अुड़ा लिया। अुन्होंने बापूसे शिकायत की। बापू अैसी घटनाओंसे बड़े अुद्विग्न हो अुठते थे। अुन्हें अपनी अेक निकटतम आश्रमवासिनी पर सन्देह हुआ और अुसे अुन्होंने अुस महिला पर प्रगट भी कर दिया। परन्तु सन्देह सही नहीं था, अिसलिअे अुन्हें बहुत दुःख हुआ। अिस पर बापूको भी बड़ा पश्चात्ताप हुआ। अुसे शामको अुन्होंने प्रार्थना-सभामें अिस प्रकार प्रगट किया . " का पत्र चोरी जाना गंभीर घटना है। अुस पर तो मैं अुपवास भी कर सकता था। मगर बीचमें मेरा ही अपराध हो गया। मुझे पर शक नहीं करना चाहिये था। मैं अुससे क्षमा मांगता हूं। साथ ही चेतावनी देता हूं कि अिस प्रकारकी घटना फिर हुआी तो मुझे कड़ी कार्रवाओी करनी होगी। लेकिन हमें किसीकी चौकीदारी भी नहीं करनी चाहिये। हमें तो मनुष्यके अच्छेपन पर विश्वास रख कर ही चलना शोभा देता है। चौकीदारी करके अपराध सिद्ध हुअे बिना पहले ही हम किसीको अपराधी मान लेते हैं, तो हम स्वयं अपराधी बन जाते हैं और अुस पर अुल्टा असर होता है।" बापूकी नम्रता अैसी जबरदस्त थी कि वे अपना जरासा दोष भी सार्वजनिक रूपमें स्वीकार कर लेते और अुसका खुला परिमार्जन करते थे।

२१४

बहन के वीरोचित गुणोंसे मुग्ध होकर अुनसे विवाह करने पर अुतारू हो गओी। बापूके सामने प्रस्ताव रखा तो अुन्हें दुःख हुआ कि अितनी आयु, तपस्या व त्यागवाली स्त्री अिस प्रकार बह जाय। अुन्होंने प्रस्ताव पसन्द नहीं किया। बहनको निराशासे गहरा आघात पहुंचा। अुन्होंने खाना-पीना छोड़कर रुदनका आश्रय लिया। मैं अुन्हें हिन्दी पढ़ाता था। अुनकी यह हालत हुओी तो मेरी हमदर्दी हुओी। मैंने पूछा तो अुन्होंने सब हाल कहा और अपना पूर्व अितिहास भी सुना दिया। मुझे अनविकार चेष्टाका भय तो हुआ, परन्तु भावुकतापूर्वक बापूसे पूछा तो अुन्होंने मेरी बात सुनकर कहा, "तुमने अच्छा किया कि मुझे सब कुछ बता दिया। मैं अिसे प्रेम नहीं मानता। . विकारवश मूर्छित अवस्थामें है। और अुसे यह भी भान नहीं कि दूसरा पक्ष तो तैयार ही नहीं है। खैर, यह दौरा जल्दी ही खतम हो जायगा। अभी तो किसीको अुसे कुछ भी नहीं कहना चाहिये। तब तक तुम भी पढ़ाने न जाओ।' बापू अपने पथ-विचलित नजदीकी साथियोंकी भी अैसे मामलेमें निन्दा नहीं करते थे और अुन्हें सही रास्ते पर लानेमें खूब कड़ाओीसे काम लेते थे।

२१५

अेक बार श्रीमती रामेश्वरी नेहरू बापूसे मिलने सेवाग्राम आअी थी। नाश्ते पर मुलाकात हुअी तो कहने लगी · "हरिजन-सेवक-सघका राजपूतानेका काम ठप हो रहा है। मै चाहती हू कि आप फिरसे सभाल लें। दिल्ली पसद हो तो वहा आ जाअिये।" मैंने कहा, "मैं तो बापूके हाथमें हू। वे जैसी आज्ञा देंगे वही करूगा।" अुन्होंने बापूसे बात की। बापूने अिन्कार कर दिया "अभी रामनारायणका स्वधर्म मेरे पास ही रहकर काम करनेका है।" बापू बार बार काम बदलनेको परधर्म मानते थे और अुसके लिअे अनिवार्य अवस्थाके सिवा तैयार नही होते थे।

२१६

अेक बार बापू कही बाहर सफरमें जा रहे थे। डॉ॰ सुशीला नय्यर अुन दिनों बापूके साथ ही रहती थी और जाती-आती थी। अिस बार बापूने अुन्हे सेवाग्राम ही ठहरनेको कहा। सुशीलाबहनको बडी निराशा हुअी और अुन्होंने साथ जानेका यहा तक आग्रह किया कि "यदि मै आपके साथ नही रह सकू तो मेरा आश्रममें रहना व्यर्थ है।" बापूको अिसमें निरा मोह दिखाअी दिया और मोहका पोषण वे किसीमें भी करनेको हरगिज तैयार नही थे। सुशीलाबहनको बहुत दु ख हुआ, परन्तु बापू अन्त तक चट्टानकी तरह दृढ रहे और जो बात अुन्हे अनुचित और हानिकारक लगी अुसे माना ही नही।

२१७

अेक दिन मुझे कुछ जरूरी बात करनी थी। भोजनसे अुठते अुठते वह शुरू हुअी तो मै सकोचवश ठिठक कर पीछे रह गया। मगर बापूमें तो अपना अेक अेक मिनट बचाते हुअे भी दूसरेकी आवश्यकता पूरी करनेकी वृत्ति और कला थी। कहने लगे, "नही, नही, कुछ रास्तेमें बात हो जायगी, बाकी झोपडेमें मुह-हाथ धोते-धोते पूरी कर लेंगे।" वहा पहुचकर देखा तो अेक छोटी-सी लुटिया है, जिसमें कोअी पाव भर पानी होगा। अुसीसे सब काम पूरा कर लिया और बडी खूबी और सफाअीके साथ कर लिया। मैंने कअी बार लोगोंके बीचमें बैठकर भी अुन्हे मुह-हाथ धोते देखा, पर मजाल क्या कि अेक छींटा भी अिधर अुधर बिखर जाय। अितनी किफायत, कुशलता, सुरुचि और सफाअीसे वे अपनी छोटी-छोटी क्रियाअें भी करते थे।

२१८

राजस्थानके वर्तमान मुख्यमंत्री भाअी जयनारायणजी व्यास अुन दिनों जोधपुर म्युनिसिपैलिटीके अध्यक्ष थे। कर्नल फील्ड राज्यके मुख्यमंत्री या यों कहिये कि सर्व-सर्वा थे। अंग्रेज पोलिटिकल अफसर राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं और खासकर रियासती लोकसेवकोंसे विशेष नाराज रहते थे। व्यासजी जैसे सेवकको अुनकी ओरसे कठिनाअी होना कोअी आश्चर्यकी बात नहीं थी। मामूली कठिनाअियोंसे वे घबरानेवाले जीव भी नहीं थे। मगर जब तंग आ गये तो अुन्हें बापूकी सलाह व सहायताकी आवश्यकता महसूस हुअी। अुनका बापूसे परिचय नहीं था, अिसलिअे मुझे मुलाकात तय करनेको लिखा। बापू तो सदा ही सच्चे सेवकोंकी सहायता करनेको तैयार रहते थे। अुन्होंने समय देना मंजूर कर लिया। व्यासजी सेवाग्राम आये और अेक-दो दिन रहकर बापूसे परामर्श करके चले गये। जानेसे पहले बापूको कोअी चीज भेंट करना चाहते थे। अुन्होंने अेक कविता बनाकर मेरे द्वारा बापू तक पहुंचा दी। बापूने पढ़कर कहा "कविता तो अच्छी है, मगर दरिद्रनारायणकी भूख अिससे थोड़े ही मिटेगी। मुझे तो जयनारायणजी अेक गुंडी सूत कातकर देते तो अधिक अच्छा लगता।" काव्यसे बापूको अरुचि नहीं थी, मगर देशमें हरअेकके कवि बननेकी जो हवा चल पड़ी है, वह अुन्हें पसन्द नहीं थी। शेक्सपीयर और टागोर जैसे महाकवियोंके वे कद्रदान थे। सूर, तुलसी आदि संत कवियोंके तो वे भक्त ही थे। मगर अेक दरिद्र और पराधीन देशमें वे सेवकोंसे कविताओंके बजाय अधिक ठोस सेवामें समय लगानेकी आशा रखते थे।

२१९

बा कुछ बीमार हो गअी थी। सेवाग्राममें अलग झोंपड़ेमें रहती थीं। बापू अुन्हें नियमित रूपसे दोनों समय देखने जाते थे। अेक दिन कामकी ज्यादतीसे शामको जाना नहीं हुआ। दूसरे दिन स्नान करके लौटते समय पहुंचे तो मैं भी साथ था। "क्यों क्या हाल है?" बापूने पूछा तो बा बोलीं, "आपकी बलासे। आप तो बड़े आदमी हैं, महात्मा हैं। आपको दुनियाकी चिन्ता है, मेरी क्या चिन्ता होगी?" बापूने बाके सिर पर हाथ रखकर बालोंमें अुंगलियां डालकर कहा, "तुम्हारे लिअे भी महात्मा और बड़ा आदमी हूं?" बाका सारा गुस्सा शांत हो गया। मैं अुस दृश्यको कभी भूल नहीं सकता।

२२०

आश्रममें रोज दतुन करनेका नियम था। अुठते ही दतुन करके प्रार्थनामें जाना होता था। दतुन पहले दिन शामके भोजनके समय ही सबको बाट दिये जाते थे। अक्सर लोग दतुन करके अुसे चीरकर जीभ साफ करके फेंक देते है। अुन पर मक्खिया बैठकर गन्दगी फैलाती है और दतुन कचरे पर पडकर बेकार हो जाते है। बापूने अिसके अुपायके तौर पर यह नियम बना दिया था कि दतुन करके अुसे धोकर अेक टोकरीमें डाल दिया जाय और सूखनेके बाद अुसे अीधनके काममें ले लिया जाय। अिस प्रकार सफाअी भी रहती थी और अुपयोग भी हो जाता था। रद्दी कागजोंके लिअे भी अुनका जलानेका आग्रह रहता था, क्योकि कागजकी खाद नही बन सकती। पाखाने-पेशाबघरके अलावा कही टट्टी-पेशाबके लिअे जाना होता तो वे अुसे मिट्टीसे ढक देने पर जोर देते थे, ताकि बदबू, गदगी और रोग न फैले। थूकने तक पर यही पाबन्दी थी।

२२१

अलवर राज्यके प्रजामडलके साथ मेरा काफी समय तक घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। वहाके कार्यकर्ता अुन दिनो मेरी सलाह लिया करते थे। जब मैं १९४० में अजमेरसे सेवाग्राम चला गया, तो अलवरके कार्यकर्ताओने मेरे मारफत बापूके मार्गदर्शन और सहायताकी माग की। मैं जब अिस सम्बन्धमें अुनसे बातचीत कर रहा था तो सयोगवश श्रीमती विजयालक्ष्मी पडित आ पहुची। अुन्हे देखते ही कहने लगे, "लो, यह आ गअी। तुम्हारा भाग्य अच्छा है। मैं सोच ही रहा था कि अलवर किसे भेजू ? हर जगह राजकुमारी (अमृतकौर) को कष्ट देनेमें सकोच होता है।" यह कहकर अुन्होने श्रीमती पडितको अलवरकी समस्या, जिसे समझनेमें अुन्हे स्वय देर नही लगी, समझाना शुरू कर दिया और बातकी बातमें अलवरवालोकी कठिनाअी हल हो गअी। अुन दिनो अलवरमें शायद कर्नल हार्वे नामक कोअी अग्रेज प्रशासक था। अुस पर अेक महिलाका — और वह भी नेहरू घरानेकी — असर पडना स्वाभाविक था। मानव स्वभावकी पहचान और योग्य आदमीका योग्य स्थान पर अुपयोग कर लेनेकी कला बापूमें विलक्षण थी।

२२२

देशी राज्योकी प्रजाके लिअे काम करनेवाले अेक प्रमुख कार्यकर्ताकी रीतिनीति, विशेषत आर्थिक व्यवहार पर सरदार वल्लभभाअी बहुत नाराज थे। अुन दिनो सरदार स्वास्थ्यलाभके लिअे बापूकी देखरेखमे सेवाग्राम ही थे। अेक दिन सुबह घूमते वक्त बापू मुझे पास बुलाकर कहने लगे "   से तुम्हारा परिचय है ? कुछ सम्बन्ध भी है ?" "हा, बापू, काफी पुराना परिचय और अेक ही क्षेत्रके साथियोका सम्बन्ध भी है," मैंने अुत्तर दिया। "तो अब सम्बन्ध विच्छेद कर लेना।" बापूका यह

आदेश सुनकर मैं चौंक पड़ा। मैंने पूछा, "क्या निजी सम्बन्ध भी?" "सार्वजनिक कार्यकर्ताओंका तो अेक ही सम्बन्ध होता है। फिर भी तुम्हें   से कोअी सरोकार नहीं रखना है।" मैं चुप रहा तो बोले, "सरदारसे बात कर लो। वे तुम्हें सब बात बतायेंगे।" वैसे लौटकर सरदारके साथ अुनके निवास-स्थान पर पहुंचा। महादेवभाअी भी वहीं थे। दोनोंने ही   के विरुद्ध बहुतसी बातें बताअीं। अुनका सार यह था कि "   अितना खतरनाक आदमी है कि वह अपने सम्बन्धोंका सर्वत्र दुरुपयोग करता है। अुसकी सारी मंडली ही वैसी है। हम लोगोंको तो अुससे दूर ही रहना चाहिये।" मैंने श्रद्धासे बापूकी आज्ञा मान तो ली, परन्तु मेरी बुद्धिको वह पटी नहीं। देशके आजाद होने पर जब मुझे .   के साथियोंसे पूरे हालात मालूम हुअे तब प्रतीति हुअी कि बापूने भलेकी ही कही थी।

२२३

गत महायुद्धके समय अेक खूबी बापूकी अहिंसक नीति और कार्य-पद्धतिकी मैंने यह देखी कि वह मनुष्यको कितना निर्भय बना देती है और अुसका विरोधीके बरताव पर भी कितना असर पड़ता है। जिस लड़ाअीमें फ्रांस जैसे शस्त्र-सुसज्जित राष्ट्रने जर्मनीकी शक्तिसे हारकर अितनी जलील शर्तों पर संधि की जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। और अन्तमें जर्मनी, अिटली और जापान जैसे शक्तिशाली देशोंने भी मित्रराष्ट्रोंके आगे बुरी तरह घुटने टेक दिये और दबना स्वीकार किया। अुधर भारत निहत्था होकर भी छाती खोलकर और सिर अूंचा करके जब ब्रिटेन जीत और ताकतके शिखर पर था तब भी अुसका विरोध करता रहा, अुसने अन्यायके सामने सिर नहीं झुकाया और अन्तमें ब्रिटेनको भारतकी आजादी माननेको मजबूर कर दिया।

२२४

हैदराबादमें युद्धकालमें दो सत्याग्रह चल रहे थे। अेक आर्यसमाजकी तरफसे और दूसरा स्टेट कांग्रेसकी ओरसे। दूसरा सत्याग्रह सीधा बापूकी ही देखरेखमें हो रहा था। अुधर आर्यसमाजके सत्याग्रहके दो नेता श्री देशबन्धु गुप्त और श्री घनश्यामसिंह गुप्त भी कांग्रेसी या बापूके ही आदमी थे। वे समय समय पर अपने सत्याग्रहके बारेमें बापूसे सलाह-मशविरा करने सेवाग्राम आते रहते थे और बापू अुन्हें बराबर मार्गदर्शन और सहायता देते थे। अितना ही नहीं, जब यह महसूस किया जाने लगा कि दोनों लड़ाअियां साथ साथ चलनेसे राज्यको गलतफहमी फैलाने और दोनोंको कमजोर बनानेका मौका और बहाना मिलता है, तो बापूने बजाय आर्य-समाजी नेताओंको अुनका सत्याग्रह बन्द करनेकी सलाह देनेके स्टेट कांग्रेसका सत्याग्रह स्थगित कर देना बेहतर समझा। जिस प्रकार बापू किसी भी व्यक्ति या जमातके अच्छे कामोंमें मतभेदोंको भुलाकर मदद ही नहीं देते थे, बल्कि निजी मामलोंकी भांति सार्वजनिक मामलोंमें भी अपनोंसे त्याग कराकर परायोंको श्रेय दिलानेमें अधिक खुश रहते थे।

२२५

औंधके बूढे राजा जितने धार्मिक पुरुष थे अुतने ही देशभक्त भी थे। अुन्होंने बापूके ढंगसे अुनकी सलाहके अनुसार अपनी प्रजाको स्वराज्य देनेका निश्चय किया। अंग्रेज रेजीडेण्ट नाराज हुआ और अुसने राजासाहबको दबाना चाहा। राजासाहब सच्चरित्र थे। नहीं दबे। गांधीजीसे मिलने निकल पड़े। रेजीडेण्टको मालूम हुआ तो अुसकी मोटर भी अुनके पीछे पीछे दौड़ी, मगर चिड़िया हाथसे निकल गअी। राजासाहब अपने युवराज सहित सेवाग्राम पहुंचे। बापूने कह दिया, "आप अपने शुभ संकल्प पर डटे रहिये। मैं आपके साथ हूं। फिर भी अगर अिन्होंने आपका कुछ बिगाड़ कर दिया तो सत्ता हाथमें आते ही हम अुसे सुधार लेंगे।" अुसके थोड़े ही दिन बाद बापूकी वायसरायसे भेंट हुअी। वहां और बातोंके साथ साथ अुन्होंने औंधकी बात भी निकाली और राजासाहबके खिलाफ कुछ कार्रवाअी करनेका संकेत दिया। बापूने दृढ़तापूर्वक राजासाहबका पक्ष लेते हुअे कहा कि "अगर अितने अच्छे राजा और अुसके अितने अच्छे कामको भी हानि पहुंचाअी गअी, तो अिसे मैं अपना विरोध समझूंगा।" नतीजा यह हुआ कि रेजीडेण्टके लाख चाहने पर भी वायसराय, जो गांधीजीसे बड़ी बड़ी समस्याअें सुलझानेमें मदद चाहते थे, अिस छोटेसे मामलेमें भिड़नेको रजामंद नहीं हुअे और राजासाहबका बाल भी बांका नहीं हुआ। बापू अच्छे आदमियों और अच्छे कामोंकी हिमायतमें और वचन-पालनमें जान लड़ा देते थे।

२२६

कुछ समयके बाद औंधके युवराज अप्पासाहब थोड़े दिनोंके लिअे आश्रममें आकर रहे थे। संयोगवश वे पेचिशके बीमार हो गये। अुनकी टट्टी (कमोड) साफ करनेका काम मेरे सुपुर्द हुआ। जब बापूको मालूम हुआ तो मुझसे कहने लगे "तुमने राजाअोंका बहुत विरोध किया है, अब अुनका पाखाना साफ करके प्रायश्चित्त कर रहे हो न?" मैंने तो अिस मजाकको पसंद ही किया, मगर बापू अितने कोमल हृदय और अुदात्त संस्कृतिवाले थे कि अुन्हें शायद शंका हुअी कि मेरे दिलको ठेस तो नहीं पहुंची होगी। तुरंत गंभीर होकर बोले, "अिसे भी देशी राज्योंकी सेवाके व्रतका ही पालन समझो। यह तो अच्छा राजकुमार है। कोअी बुरा भी हो तो रोग या संकटग्रस्त होने पर अुसकी सेवा अुतने ही अुत्साहसे करना हमारा धर्म है।" बुरे और अुसकी बुराअीमें बापू सदा भेद करते थे। बुराअीका विरोध और बुरेकी सेवा करनेका विवेक अुनका हमेशा जाग्रत रहता था।

२२७

डूगरपुरके महारावल साहब राजपूतानेके राजाओंमें अैसे थे जिन्होंने हरिजन-सेवा और भील-सेवाके कार्योंमें हार्दिक सहयोग देकर मेरे मन पर यह असर डाला था कि अगर अुनका बापूके साथ सम्पर्क करा दिया जाय तो औवकी-सी मिसाल राजस्थानमें भी कायम हो सकती है। मैंने अुन्हें बापूसे मिलनेका सुझाव दिया। अुन्होंने अुसका स्वागत किया और मुझी पर मुलाकातकी व्यवस्थाका भार सौंपा। मैंने बापूसे जिक्र किया तो बोले, "शौकसे मिलूंगा।" तय हुआ कि जब महारावल चांदा (मध्यप्रदेश) के जंगलोंमें शिकारसे लौटेंगे तो सेवाग्राममें बापूसे मिलेंगे। मगर शिकारमें बीकानेरके महाराजा गंगासिंहजीसे अुन्होंने अपना यह अिरादा जाहिर कर दिया, तो अुन्होंने अुन्हें अुल्टी-सीधी पट्टी पढ़ाकर बापूकी भेंटके सौभाग्यसे वंचित कर दिया। मैंने बापूको यह भी सुना दिया। अिसी अवसर पर गंगासिंहजीकी कुछ परस्पर विरोधी बातोंका स्मरण अितना तीव्र हुआ कि मुझसे बापूसे कहे बिना नहीं रहा गया, "बापू, यह आदमी अजीब तरहका है। अेक तरफ आपके प्रति आदर दिखाता और जमनालालजीसे दोस्ती बताता है और दूसरी तरफ होनहार राजाओंको आपके पास तक नहीं फटकने देता है। अेक तरफ अंग्रेजोंके प्रति गैरमामूली वफादारीका अैलान करता है और दूसरी तरफ अुनकी हारसे खुश होता है और हार हो जानेकी सूरतमें अुनके खिलाफ दबानेकी योजनायें बनाता है।" पिछली बात पर बापूको आश्चर्य हुआ। अुन्होंने पूछा, "यह कैसे?" मैंने कहा, "पहले महायुद्धमें महाराजा गंगासिंहजी जब अंग्रेजोंकी तरफसे लड़ने फ्रांसके मैदानमें गये थे, तब जाते समय यह हिदायत छोड़ गये थे कि अंग्रेज हार जायें तो बीकानेरकी सेना हिस्सारके निकटवर्ती अिलाके पर कब्जा कर ले। यह बात मुझे अुन अफसरोंमें से अेकने कही है जिन्हें यह हिदायत दी गअी थी। अिसी तरह अेक राजाने, जिनके महाराजा गंगासिंह मेहमान थे, मुझे बताया है कि वे अंग्रेजोंकी हारके लिअे दूसरे महायुद्धमें भी अितने अुत्सुक थे कि स्नानघरमें रेडियो लगवा कर रखते थे कि कहीं कोअी बड़ी खबर सुननेसे न रह जाय और जब पेरिसके पतनका समाचार आया, तो तौलिया लपेटकर बाहर निकल आये और खुश होकर यह समाचार हम लोगोंको सुनाया।" बापू बोले, "मुझे दोनों ही रिपोर्टों पर भरोसा नहीं होता, मगर मेरे जीवनमें अैसे अनेक अनुभव हुअे हैं कि जिन बातों पर मुझे विश्वास नहीं होता था वे सच निकलीं। कपट-नीति क्या नहीं कर सकती?"

२२८

राजस्थान-सेवा-सघ टूट जानेके बाद पथिकजीका बापूजीसे सम्पर्क छूट गया था। मेरे सेवाग्राम पहुचने पर मेरी यही कोशिश रहती थी कि राजस्थानके अधिकसे अधिक नये कार्यकर्ताओंको बापूका मार्गदर्शन प्राप्त हो और पुरानोका अुनसे फिर सपर्क स्थापित हो। बापू मेरे अिस प्रयत्नको बराबर प्रोत्साहन देते थे। पथिकजीको भी बापूसे अपने पुराने सम्पर्क ताजा करनेकी प्रेरणा हुअी। परन्तु अुन्हे बापूको सीधा लिखनेमें सकोच था। कारण यह था कि कअी वर्ष पहले अुन्होंने बापूसे मिलनेकी स्वय ही अिच्छा प्रगट की थी और फिर स्वय ही मिलने नही जा सके थे। अुस अवसर पर बापूजीने पथिकको यह पत्र लिखा था

"भाअी पथिकजी,

आपका खत आज मिला। मैंने तो आपको आपके आदरके पत्रका अुत्तर भेज दिया था। आश्चर्य है आपको नही मिला। मेरे भावमें कुछ भी भेद नही हुआ है। होनेसे मै छुपा नही सकता हू। आप जब चाहे अिस तरफ आ सकते हैं। मद्राससे अेक दिनके फासले पर अक्टोबरके दस दिन तक घूमता हूगा। मद्रासमें आपको जगहका पता मिल जायगा।

मैंने अब्दुल रशीदको* फासीसे बचानेके लिअे सरकार प्रति कुछ भी नही लिखा है। मैंने हिन्दू जनताको अुसको माफी देनेका अवश्य कहा है। आप काकोरीके कैदियोके बारेमें मेरे पाससे क्या चाहते है? किस जनतासे मैं कहू?

भा० कृ० २

आपका
मोहनदास"

अिस पत्रसे बापूकी अिस परिपाटीका पता लगता है कि कार्यकर्ताओको वे तुरत जवाब देनेकी कोशिश करते थे। साथ ही यह भी पता चलता है कि बापूकी हिन्दी अुन दिनो कैसी थी, अुस पर गुजराती वाक्यरचनाका कितना असर था और बादमें अुनकी हिन्दीका कितना विकास हो गया था।

अस्तु, पथिकजीने मुझे लिखा कि वे बापूसे मिलना चाहते हैं और सभव हो तो अुनके साथ काम करनेका अिरादा भी रखते है। मैंने बापूसे पथिकजीका सकोच और अिरादा बताया तो वे कुछ मुस्कराये और कहने लगे, "अितने सुपरिचित व्यक्तिको अितना सकोच होना तो नही चाहिये, परन्तु अुन्हे लिख दो कि जब चाहे आ जाय। हा, अुन्हे भी सबकी तरह यहाके सभी काम हाथसे करने और तुम्हारी तरह किसी न किसी रचनात्मक कार्यकी तालीम लेकर अुसमें लगनेकी तैयारी रखनी होगी।" अिस प्रकार बापू जहा अपनेसे भिन्न विचारके कार्यकर्ताओको भी अपनानेको सदा तैयार रहते थे, वहा बडेसे बडे लोकसेवकोको भी नम्र बनानेका आग्रह रखते थे।

---

* स्वामी श्रद्धानदजीका हत्यारा।

२२९

जिन दिनों हिटलरका बोलबाला था, अुनके देशी-विदेशी प्रशंसक अुन्हें अवतार बताते थे और अुनके निन्दक अुन्हें राक्षस कहते थे। अेक दिन शामकी सैरके समय मैंने बापूसे पूछा "बापू, आपकी हिटलरके बारेमें क्या राय है?" "हिटलरको मैं अेक महापुरुष मानता हूं। अुनके विरोधी भी स्वीकार करते हैं कि वे निर्व्यसनी हैं, यहां तक कि सिगरेट भी नहीं पीते। शराबको वे छूते नहीं। विवाह अुन्होंने नहीं किया। अुनकी कोअी जायदाद नहीं बताअी जाती। चौबीसों घंटे अुन्हें देशका ही ध्यान रहता है। अेक राष्ट्रको नीचेसे अुठाकर अितना अूंचा पहुंचा देना कोअी आसान काम नहीं। जीतना तो वे जानते ही हैं, परन्तु जीतकर अुदार बनना भी अुन्हें आता है। वे चाहते तो बूढ़े मार्शल पेताको अपने यहां भी बुला सकते थे, लेकिन अैसा न करके खुद अन्यत्र जाकर जो शर्तें तय कराअीं और जैसा व्यवहार किया अुसे नाजी पैमानेके अनुसार असाधारण रियायत ही कहा जा सकता है। फिर भी हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि अुनके विचारों और तरीकोंसे हमारा मेल बैठ ही नहीं सकता।" बापूने युद्धकालमें सार्वजनिक रूपमें भी हिटलरके बारेमें जो विचार प्रगट किये, अंग्रेजोंको जो खुली चिट्ठी लिखी और जापानियोंसे जो अपील की, वे अुनके अद्वितीय साहस, सद्भाव और आदर्शवादकी अुत्कटताके ज्वलंत अुदाहरण बनकर अितिहासमें अमर रहेंगे।

२३०

मैं गोसेवा संघके कामके सिलसिलेमें गोपुरी (वर्धा) में रहता था। मेरा परिवार सेवाग्राम आश्रममें था। बापूके आदेशानुसार मैं रविवारको सुबह सेवाग्राम चला आता और सोमवारको लौट जाता। अिसमें अुनका अुद्देश्य यह था कि गोसेवा संघकी सप्ताह भरकी गतिविधियोंकी रिपोर्ट मिल जाय और जमनालालजीकी मंशा यह थी कि संघके दैनिक कार्यों पर बापूकी प्रतिक्रियाअें मालूम हो जायं। तदनुसार मैं सुबह गोपुरीसे अैसे समय रवाना होता कि बापूके सैरसे लौटनेकी हदके स्थान पर अुनसे मेरा मिलाप हो जाय। ज्यूं ही मैं पहुंचता वे प्रसन्न मुद्रासे पूछते, "आ पहुंचे?" और मुझसे वार्तालाप शुरू कर देते। अेक दिन महादेवभाअीने मुझे बताया कि जब बापू आपको दूरसे आते देखते हैं या पुलिया पर बैठा पाते हैं, तो जिनसे बातें करते हों अुसे जल्दी निपटानेकी सूचना देते हुअे कह देते हैं कि, "रामनारायण आ गये। बेचारे अितनी दूरसे आते हैं, अब मुझे अुनसे बात करनी होगी।" मैंने देखा कि मेरे गोपुरी चले जानेके पहले श्री वालुंजकरजी भी जब चर्मालयके बारेमें नालवाड़ीसे अपनी साप्ताहिक रिपोर्ट देने आते थे, तो बापू और सबसे बात करना बन्द करके पहले अुन्हें अवसर देते थे।

२३१

मैंने अपनी विचारधाराके विरुद्ध पारिवारिक दबावमें आकर १९३८ में जीवन वीमा करा लिया था। सेवाग्राम पहुंचने पर अुस भूलको सुधार लेनेकी प्रेरणा हुअी। परन्तु अजनादेवी वीमा बन्द करनेको तैयार नही थी। तय हुआ कि बापूकी राय ली जाय और वे जो फैसला कर दें अुसे शिरोधार्य किया जाय। मुझे तो भरोसा था कि बापू बीमेके विरोधी है, अिसलिअे निर्णय मेरे पक्षमें होगा। परन्तु हुआ अुल्टा ही। शामकी प्रार्थनाके बाद जब हमारी पेशी हुअी तो बापूने पहला ही सवाल यह किया, "बीमा किसके हकमें कराया गया है?" "अजनादेवीके हकमें," मैंने अुत्तर दिया। "तो अुसे पूछो कि वह छोडनेको तैयार है या नही।" अजनादेवीने साफ अिनकार कर दिया। तब बापूने कहा, "मैं बीमेको आस्तिकताके खयालसे अनुचित, देशकी दरिद्रताको देखते हुअे परिग्रह और व्यावसायिक दृष्टिसे नासमझी मानता हू। अिसलिअे वह त्याज्य है। परन्तु न्यायके लिहाजसे अुस पर अजनाका अधिकार है। जब वह अुसे छोडना नही चाहती तो तुम्हे वचन-पालनके लिअे बीमा जारी रखना ही होगा।" बापू पैसे पैसेकी किफायत करनेवाले आदमी थे और मुझे बीमेका खर्च आश्रमसे लेनेमें सिद्धान्तत सकोच था। फिर भी न्याय-नीति और वचन-पालनके लिअे बापू अैसी चीजोको भी बर्दाश्त कर लेते थे।

२३२

गोपुरीकी बात है। अेक बार अेक जटाधारी दढियल युवक आया। कुछ पागल-सा दिखाअी दिया। कहने लगा, "मुझे काम चाहिये। सेवाग्राम गया था। वहा तो मेरी दाल नही गली।" मुझे दया आअी। भाअी राधाकृष्ण बजाजसे, जो गोसेवा सघके मत्री थे, मैंने प्रयोग करनेकी अिच्छा प्रगट की। अुनको भी विचार पसद आ गया। मगर चूकि युवक सेवाग्रामका द्वार खटखटा चुका था, अिसलिअे मैंने बापूसे पूछ लेना मुनासिब समझा। दूसरे ही दिन रविवारको मेरी साप्ताहिक सेवाग्राम यात्रा होनेवाली थी। मैंने पहुचते ही बापूसे पूछा तो कहने लगे, "हा, वह युवक यहा भी आया था। यहा तो अुसे रखनेकी किसीको हिम्मत नही हुअी। तुम्हारी हो तो प्रयोग कर लो। रोटी कपडेमें तो कोअी आदमी आलसी न हो तो क्या महगा है? फिर वह खेती और गोपालनका काम भी जानता है। हा, तुम्हारे धीरज और कौशलकी परीक्षा जरूर होगी।" वह युवक और कोअी नही था, सेवाग्राम आश्रमके वर्तमान कार्यकर्ता श्री अनतराम थे, जिनकी प्रशसा करते करते भाअी बलवन्तसिंहजी और राधाकृष्ण दोनो ही नही थकते। अिस प्रकारके प्रयोग बापू स्वय तो करते ही थे, अपने साथियोको भी करनेमें प्रोत्साहन देते थे। और अिसी प्रकारके प्रयोगोसे बापूको गुदडीके अनेको लाल मिल जाते थे।

२३३

जमनालालजी नागपुर जेलमें थे। अुनके बारेमें स्थानीय पत्रोंमें अैसी खबरें छपी थीं कि सरकार अुनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं कर रही है और बीमारीमें यथेष्ट सुविधायें नहीं दे रही हैं। मैंने अुनके आधार पर 'नवज्योति' में सरकारकी आलोचना कर दी। जब बापूको यह पता लगा तो अुन्हें बुरा लगा। कहने लगे, "सच बात तो अिससे अुल्टी है। सरकारका बर्ताव जितना अच्छा है अुनकी आशा नहीं रखी जाती थी। अुसे तो धन्यवाद देना चाहिये।" आखिर, मुझे अपनी टिप्पणीका संशोधन करके मध्यप्रदेश सरकारसे माफी मांगनी पड़ी और आयदा आश्रममें रहते हुअे राजनीतिक विषय पर न लिखनेका अहद लेना पड़ा, तब कहीं बापूको संतोष हुआ। मैंने अुस दिन पहली और आखिरी बार बापूके रुद्ररूपका दर्शन किया। सत्यके मामलेमें बापू जितने कठोर और विरोधीके अच्छे कामोंकी कद्र करनेमें जितने तत्पर थे।

२३४

जेलसे छूटकर आनेके बाद बापूकी सलाहसे जमनालालजीने गोसेवाको अपना जीवनकार्य बनाया। सन् १९४१ के दशहरेके दिन वर्धामें गोसेवा संघ नामकी अेक अखिल भारतीय संस्था बापूकी कार्यपद्धति पर गोसेवा करनेके लिअे जमनालालजीकी अध्यक्षतामें स्थापित हुअी। मुझे भी यह काम अच्छा लगा। अुस वक्त तक मेरा कोअी कार्यक्रम निश्चित नहीं हुआ था। मगर मेरी रायमें देशी राज्योंकी सेवाकी मेरी प्रतिज्ञा अिसमें बाधक थी। अिसलिअे मैंने बापूकी सलाह ली तो कहने लगे, "प्रथम तो अब देशी राज्योंकी समस्या ही नहीं है। अुन्हें न कांग्रेस रखना चाहती है और न ब्रिटिश सरकार। जब देशी राज्य ही नहीं रहनेवाले हैं, तब अुनके सबंधकी प्रतिज्ञा कहां रहेगी?" मेरे लिअे यह बिलकुल नयी जानकारी थी। अिसे पाकर मैंने अनुभव किया कि मैं अेक भारी भारसे मुक्त हो गया हूं। परन्तु गोसेवाका महत्त्व फिर भी मुझे समझना बाकी था। अुसे बापूने यूं समझाया, "भारत अेक कृषिप्रधान देश है। यहांकी खेती गोवंश पर निर्भर करती है। अिसलिअे गोसेवा खादीसे भी बड़ा काम है। मैं तो अिसे स्वराज्यसे भी महत्त्वपूर्ण समझता हूं, क्योंकि स्वराज्यप्राप्तिके लिअे लोगोंमें लगन पैदा हो चुकी है और गोसेवाकी रुचि देशमें पैदा करनी है। वह स्वतंत्र भारतके निर्माणका सबसे बड़ा काम होगा। अिसीलिअे मैंने अुसे अपने रचनात्मक कार्यक्रमका सबसे बड़ा अंग माना है। मेरे खयालसे गाय ही वह जानवर है, जो हमारे मुख्य राष्ट्रीय अुद्योग खेतीका अेकमात्र आधार बैल देती है और अेक निरामिषभोजी आदर्शवाले राष्ट्रके लिअे जिन भोजन तत्त्वोंकी अत्यन्त आवश्यकता है वे भी दूध, घी वगैराके रूपमें मुहैया करती है। गोसेवाके मेरे

अपने विचार हैं और अुसकी अेक विशेष पद्धतिका कामचलाअू विकास भी हो चुका है। जमनालालजी जैसे कर्मठ सगठनकर्ताके नेतृत्वमें अेक देशव्यापी सगठनकी नीव पड गअी है। अब जरूरत योग्य कार्यकर्ताओंकी है। तुम भी अिस काममें भाग लो तो मुझे खुशी ही होगी।" मेरा समाधान हो गया और मैं गोसेवा सघमें काम करने लगा। बादमें अनेक बारकी बातचीतमें बापूने अिस कार्यकी महानता और अुसकी आवश्यकता मेरे हृदय और बुद्धि दोनो पर अकित कर दी।

२३५

११ फरवरी १९४१ को जमनालालजीका देहान्त हो गया। दूसरे ही दिन सवेरे नाश्तेके बाद बापूने मुझे बुलाकर कहा, "जमनालालजी चले गये, मगर अुनका अुठाया हुआ काम तो पीछेवालोंको करना ही है। जमनालालजी तुम्हारे कामसे सतुष्ट थे और कहते थे कि आगे-पीछे अुनके प्रथम सहायक तुम्ही होगे। अुनके तीन अुत्तराधिकारी है। जानकीदेवी अुनके पद पर बैठी हैं, कमलनयन अुनके धनका वारिस है और राधाकिशन अुनके सेवाकार्यका। वह गोसेवा सघका मत्री है, अच्छा काम करता है, मगर यह काम अुसके बूतेका नही है। मेरी नजरमें तुम्हारे सिवाय कोअी और आदमी अिसे चला सकनेवाला नही है — अभी तो नही है। मैं चाहता हू तुम मत्री बनना स्वीकार कर लो।" मैंने अुत्तर दिया, "बापू, काम पवित्र है, मेरी रुचिका भी है और मत्रीपदका मुझे कुछ अनुभव भी है। जानकीबहन बडी है, अुनकी अध्यक्षतामें काम करनेमें कोअी आपत्ति भी नही है। अुनकी तरफसे कोअी बाधा न आकर सहायता ही मिलेगी। मगर दो बाधाअें है। अेक तो घनश्यामदासजी अुपाध्यक्ष होने पर भी वास्तवमें अध्यक्ष वही होगे और अुनकी मेरी पटेगी नही। दूसरे जमनालालजीने चाहा था और मैंने मजूर किया था कि मैं छ महीने बगलोर जाकर गोसेवाकी तालीम पा लू। वह तालीम ज्ञानकी दृष्टिसे अुपयोगी और वचन-पालनके खयालसे सतोषप्रद होगी। फिर जैसी आपकी आज्ञा।" बापू बोले, "घनश्यामदासजीकी तरफसे कोअी बाधा नही आयेगी। अव्वल तो अुनमें काफी परिवर्तन है और फिर मैं तो बीचमें हू ही। कोअी बाधा आयेगी तो देख लूगा। अलबत्ता, तालीमवाली बात भिन्न प्रकारकी है। ज्ञानवृद्धि लाभदायक और जरूरी होते हुअे भी गौण वस्तु है। अुसमे कही महत्त्वकी बात सस्थाको चलानेकी है। परतु मुख्य चीज नैतिक है और वह वचन-पालनकी है। अिसलिअे तुम तो बगलोर जाओ। मगर यह तो बताओ, तुम्हारे खयालमे मत्रीपदके लिअे कौन आदमी अुपयुक्त होगा?" "स्वामी आनद", मैंने तुरत अुत्तर दिया। "हा, वह ठीक है, यदि स्वीकार कर ले।" अतमें अुन्ही पर भार डाला गया। अिस प्रकार बापू नैतिकताको अुपयोगिता पर सदा तरजीह देते थे।

२३६

बापूने बगलोरकी अिम्पीरियल डेरी अिस्टीटयूटके पारसी संचालक श्री जाल रुस्तमजी कोठावालाके नाम मुझे अेक परिचयपत्र दिया। बापू अिस मस्थाको देख चुके थे और वहाके वातावरणमें गाधीजीको भारतके अेकमात्र गोसेवक राष्ट्रीय नेताके रूपमें याद किया जाता था। मैं पहुचा तो अध्यापको तकको 'गाधीके चेले' को देखनेकी अुत्सुकता हुअी। अेक दो दिनमें ही सबसे परिचित हो गया। विद्यार्थियोका तो कहना ही क्या? अुन्होने शुरूसे अन्त तक अपनी श्रद्धा और प्रेमसे मुझे अुपकृत किया। जब मैं पहुंचा तो छात्रावासमें कोअी पच्चीस तीस विद्यार्थी थे। अुनके चार पाच अलग अलग भोजनालय थे। छात्र हाथसे कोअी काम नही करते थे। अुनके कमरोकी सफाअी, जूतोकी पालिश आदि सब कुछ नौकर करते थे। सिनेमा प्रति सप्ताह अधिकाश लडके जाते थे। कुछ विद्यार्थी रोज नही तो दूसरे तीसरे दिन जानेवाले थे। मद्यपानका प्रचार काफी था और आवारापन तो अुसके साथ लगा ही रहता था। बापूने रवाना होते समय मुझे अेक ही वाक्य कहा था: "जो चीज वहासे लेनेकी है वह लाना और यहासे ले जानी है वह देना।" मैंने अिस सन्देशके प्रकाशमें जाते ही कार्यारभ कर दिया। आशातीत सफलता मिली। सब छात्रोका अेक सम्मिलित भोजनालय हो गया और जो मासाहारी थे अुनके लिअे वे चीजें अलग पकवा कर परोस दी जाती थी, परतु बैठते सब अेक ही पक्तिमें थे। सब छात्र अपने अपने कमरोमें झाडू लगाने, अपने जूते आप पालिश करने और कुछ कपडे भी हाथसे धोने लगे। शराब छात्रालयमें आनी बन्द हो गअी और सिनेमा महीनेमें अेक बार जानेका नियम बन गया। लेकिन अिस पाबदीकी कीमत मुझे भी चुकानी पडी और वह यह कि मुझे अुनके साथ जाना पडता। अलबत्ता, फिल्मकी पसन्द भी मुझी पर छोडी गअी। कुछ विद्यार्थियोने खादी पहननेका व्रत लिया और व्यायाम या पुरुषोचित खेल सबके लिअे अनिवार्य कर दिया गया। पाखाने-पेशाबकी सफाअीके तरीकेमें आश्रमके ढग पर सुधार किये गये और जूठे बर्तन विद्यार्थी स्वय माजने लगे। रातको दस बजेके पहले सब छात्रोका होस्टलमें मौजूद हो जाना लाजिमी हो गया। ये सब सुधार किसी अूपरी दबावसे नही, परतु बापूके विचारो और आदर्शोके प्रभावसे हुअे थे। मेरी सूचनाअें निमित्तमात्र थी। बगलोर डेरी अिस्टीटयूटके अितिहासमें तो यह अभूतपूर्व घटना ही थी। सब विद्यार्थी और कुछ अध्यापक भी मुझे 'भाअीजी' के नामसे पुकारते थे। आज भी जब मिलते है वही प्रेमपूर्ण सबोधन काममें लिया जाता है।

२३७

बंगलोरकी डेरी अिंस्टीटयूटमें सुपरिन्टेन्डेन्ट अेक रिटायर्ड फौजी मि० कॉक्स नामक अंग्रेज थे। बापूके आदमीके नाते अुनकी भी मुझ पर कृपा थी। अुनकी पत्नीका बर्ताव भी वैसा ही था। कभी बार नाश्ते पर बुलाया करती थी। अेक रोज कहने लगी, "आप तो मि० गांधीके अनुयायी हैं, आपको अंग्रेजोंसे कोअी दुश्मनी नहीं हो सकती। अिंस्टीटयूटके संचालक मेरे पतिको तंग करते हैं। मि० कोठावालाको शिकायत है कि अंग्रेज अधिकारियोंने अुन्हें अपने हकसे वंचित रखा। अिसके सिवा मि० कॉक्सका कोअी कसूर नहीं। परन्तु यह कहांका न्याय है कि किसीकी ज्यादतीकी सजा दूसरेको दी जाय? आप मि० कोठावालाको समझाअिये और हमारी मदद कीजिये।" मि० कॉक्सकी तो आंखें ही भर आयीं। मैंने कहा, "कोठावाला साहब और मि० कॉक्स दोनों मेरे गुरु हैं। मेरी स्थिति बड़ी विषम है। मेरा दोनोंमें से किसीको भी कुछ कहना छोटे मुंह बड़ी बात होगी। बापू सुनेंगे तो अुन्हें भी मेरी अनधिकार चेष्टा पसन्द नहीं आयेगी। फिर भी जैसे आपने जिक्र किया वैसे ही स्वाभाविक रूपमें कोठावाला साहब भी मुझसे अपने-आप बात चलायेंगे तो अपनी नम्र सेवाअें देनेमें मैं अपना सौभाग्य समझूंगा।" वह संयोग जल्दी ही हो गया। बात यह थी कि बापूके कारण ही मि० कॉक्सकी अपेक्षा भी कोठावाला साहबका विश्वास और प्रेम मुझ पर अधिक था। वे बड़े सतर्क संचालक भी थे। मेरी गतिविधियोंका अुन्हें पता रहता था और कॉक्स परिवारसे मेरी घनिष्ठता अुन्हें मालूम थी। कभी कभी छात्रालयके प्रबंधके बारेमें बात करनेको वे मुझे बुला भी लेते थे। श्रीमती कॉक्ससे मेरी अुपरोक्त बात हुअी अुसके दूसरे ही दिन अुनका बुलावा आ गया। अिधर अुधरकी बातोंके बाद अुन्होंने ही प्रसंग छेड़ा और अंग्रेज अधिकारियोंके अुनके साथ किये गये दुर्व्यवहारकी लम्बी और हृदयस्पर्शी रामकहानी अुन्होंने भावनाके साथ सुना डाली। अुसीमें मि० कॉक्सका भी जिक्र आया। तब मैंने कहा, "आपके अंग्रेज अफसरोंने आपको सताया और आपने अपने अंग्रेज मातहतके साथ अुदारताका सुलूक किया, यह पता बापूको चलेगा — और वह अवश्य चलेगा — तो आप अुनकी नजरोंमें जितने अूंचे हैं अुससे कहीं अधिक अूंचे अुठ जायेंगे।" बापूके प्रति अुनका आदर अितना अधिक था कि मेरी यह अपील अुनके दिलमें फौरन् घर कर गअी और जहां तक मुझे मालूम है जब तक मैं बंगलोर रहा, दोनोंमें से किसीने भी अेक दूसरेकी शिकायत नहीं की। अुधर कॉक्स परिवार तो अितना अुपकृत हुआ कि अुसने मेरे बंगलोर छोड़नेके अवसर पर अेक विदाअी भोज दिया, जो अेक विद्यार्थीके सम्मानकी दृष्टिसे अिंस्टीटयूटके अितिहासमें अिस तरहकी पहली घटना थी। अिधर कोठावाला साहबका अितना भरोसा जम गया कि अगस्त १९४२ की शायद पहली या दूसरी तारीखको जब रेजीडेंटने अुन्हें बुलाकर कांग्रेसके प्रति सरकारकी नीति बताअी और अिंस्टीटयूटमें अुसे लागू करनेका ब्यौरा समझाया, तो दूसरे ही दिन अुन्होंने मुझे बुलाकर संकेत कर दिया कि क्या होनेवाला है।

२३८

लेकिन बापूके प्रभावका चमत्कार तो सबसे अधिक सेनामें मालूम हुआ। अंग्रेजोंके जमानेमें शायद जलवायुके कारण बंगलोरमें देशकी सबसे बड़ी फौजी छावनी थी। वहांके सैनिक अफसर डेरीमें दूध, मक्खन आदि लेने आया करते थे। अिनमें से कभी शिक्षार्थी भारतीय अफसर भी थे। अुन्हें जब मालूम हुआ कि महात्मा गांधीका आदमी डेरीमें काम सीखने आया हुआ है तो वे छात्रालयमें मेरे पास आने लगे। मैं छात्रालयके विद्यार्थियोंकी तरह अुन्हें भी बापूके संस्मरण और आश्रमजीवनके हालात सुनाया करता था। अुनमें से कुछको सैनिक वातावरणमें मद्यपान और अनैतिक जीवनकी प्रेरणाके प्रति असंतोष था। मैं अुन्हें बापूके शुद्ध जीवनके आग्रहकी याद दिलाकर अुनकी अूर्ध्वगतिको दृढ़ करनेकी कोशिश करता। जिस दिन अुन्हें मालूम हुआ कि मैं वर्धा लौट रहा हूं, वे कुछ अधिक संख्यामें आये। अुनमें अधिकांश सिक्ख, राजपूत और जाट थे। अेक मुसलमान और अेक अीसाअी भी थे। अुन्होंने पूछा, "हमारे लिअे क्या संदेश है?" मैंने कहा, "मैं तो छोटा आदमी हूं, क्या संदेश दे सकता हूं। लेकिन अगर मैंने गांधीजीको ठीक समझा है तो वे चाहेंगे कि आप लोग अपना जीवन शुद्ध रखें और निहत्थे लोगों पर गोली चलानेका प्रसंग आने तो अिन्कार कर दें। मगर अैसी अवज्ञाके गूढार्थ समझकर करें।" अुन्होंने अिसे सहर्ष स्वीकार किया।

२३९

सन् १९४५ में कोअी तीन साढ़े तीन साल बाद जब मैं बापूसे मिला तब मैंने ये सब हालात सुनाये तब तो वे खुश हुअे ही। अिससे पहले बंगलोरके लगभग अेक मासके निवासके बाद ही अुन्हें जो विवरण मैंने भेजा अुसका अुत्साहवर्धक अुत्तर आया। वह यह था -

"दिल्ली, १-४-'४२

चि० रामनारायण,

तुमारा १२-३-'४२ का खत मैं साथ लाया हूं। कल सब नियम और तुम्हारे लिअे जो अभ्यासक्रम है पढ़ गया। अच्छा है। नियम भी ठीक है।

छात्रालयमें सफाअी, हिन्दी वगैराका काम कर रहे हो वह भी अच्छा लगता है। जितना सुवास फैला सकते हो फैलाओ।

महादेवभाअी अच्छे हैं।

बापूके आशीर्वाद"

२४०

बापूको बहुत अधिक काम करते देखकर अुनके पास रहनेवाले सभीको अुनकी नकल करनेकी स्वाभाविक प्रेरणा होती थी। मुझे भी हुअी और मैंने बापूसे अंगीकृत कार्योंके सिवा कोअी और काम देनेकी प्रार्थना की। शायद अुस दिन अुनका मौन था। अिसलिअे अुत्तर अुन्होंने नीचे लिखे अनुसार पत्र द्वारा दिया

"चि० रामनारायण,

तुमारा समय भरा है। अब ज्यादा काम नही लेना। तुमारा मुख्य काम खादी-शास्त्रमें प्रावीण्य पाना है। आश्रमकी पद्धतिसे धुननेमें कुछ भी कष्ट नही होता है। कृष्णदाससे पूछो।

२५–२–'४० बापू"

बापू जहा अपने साथियोसे कसकर काम लेते थे वहा अिस सबधमें भी अुन्हे मोह नही होने देते थे और बूतेसे ज्यादा काम करनेमें प्रोत्साहन नही देते थे। साथ ही यह भी ध्यान रखते थे कि साहित्यिक रुचिवाले कार्यकर्ताओको मुख्यत रचनात्मक या शरीरश्रम-प्रधान कार्यके साथ साथ कुछ लिखने-पढनेका काम भी मिलता रहे ताकि वे अूब न जाय।

२४१

कार्याधिक्यकी भाति बापूके त्यागकी नकल करनेकी प्रवृत्ति भी अुनके साथियोमें रहती थी। मैंने भी अेक बार अिसी वृत्तिसे घी खाना छोड दिया था। अुन दिनो अुनका आदेश था कि अपने खानपान और स्वास्थ्यकी रिपोर्ट समय समय पर अुनके पास भेज दिया करू। मेरे विवरणमें जब अुन्हे अिसका पता चला तो तुरन्त यह अुत्तर भेजा

"मीरजापुर,
ता० १९–११–'२९

भाअी रामनारायण,

तुमारा पत्र मिल गया। मैं घीके बारेमें भूल गया था। मेरे नजदीक तो घीका प्रतिबध करनेकी आवश्यकता नही थी। अब अुसे छोड दिया जाय और आवश्यक मात्रामें घी लिया जाय। शरीर अच्छा बना लेना चाहिये। ता० २५ को प्रातःकाल मेरी ट्रेन अजमेर पहुच जायगी। मेरा मौन होगा।

बापूके आशीर्वाद"

बापू जानते थे कि कार्यकर्ताओंका स्वास्थ्य अुनकी अपनी चीज नही, बल्कि राष्ट्रीय सपत्ति है, और अगर वे तन्दुरुस्त नही रहेंगे तो अुतनी ही सेवाकार्यमें हानि होगी और बीमार होने पर अिलाजका खर्च भी अधिक होगा। अिसलिअे जहा वे भोजनकी सात्त्विकता और सस्तेपन पर जोर देते थे, वहा अुसके पौष्टिक और वैज्ञानिक होने पर भी अुतना ही जोर देते थे। साथ ही वे अुसी त्यागको स्थायी और श्रेयस्कर मानते थे, जो देखादेखी और भावावेशमें न होकर समझके साथ होता था और निभ सकता था।

२४२

ठाकुर केसरीसिंहजी बारहठ राजस्थानके क्रान्तिकारी दलके चार प्रणेताओंमें से अेक थे। वे डिंगल भाषाके ओजस्वी कवि थे और अुनकी कविताके प्रभावसे ही मेवाडके महाराणा फतहसिंहजी लार्ड कर्जनके समय दिल्ली जाकर दरबारमें अुपस्थित हुअे बिना ही मेवाडकी टेक कायम रखकर लौट आये थे। अुन्हे आरा हत्या केसमें आजन्म कारावासकी सजा हुअी थी और अुनकी जमीन, मकान आदि जब्त कर लिये गये थे। परतु जेलमें अुनके साधु चरित्रका अधिकारियो पर अितना गहरा असर पडा कि अुनकी सिफारिश पर सरकारने अुन्हे जल्दी छोड दिया था। आम तौर पर तो यह मशहूर है कि दिल्लीमें लार्ड हार्डिंज पर बम श्री रासबिहारी बोसने फेंका था, परतु हकीकत यह है कि वह काम जोरावरसिंहजीने किया था, जो ठाकुर केसरीसिंहजीके छोटे भाअी थे और मृत्युपर्यन्त गुप्त ही रहे। ठाकुरसाहबके बडे लडके श्री प्रतापसिंहको बनारस षड्यन्त्र केसमें लबी सजा हुअी थी और जेलमें ही अुनका देहान्त हुआ। अिस प्रकार यह सारा परिवार शहीदोका परिवार था। मै प्रतापजीके साथ काम कर चुका था। अिसलिअे केसरीसिंहजी मुझ पर पुत्रवत् प्रेम रखते थे। मेरे बापूके पास रहनेकी अुन्हे खबर लगी तो अुन्होने बापूके निकट रहकर अुनके आदेशानुसार सेवा करनेमें शेष आयु व्यतीत करनेकी अिच्छा प्रगट की। मैंने बापूसे जिक्र किया तो बोले, "केसरीसिंहजी आयगे तो मुझे खुशी होगी। अुनके अुत्कृष्ट जेलजीवनका मुझसे सर तेजबहादुर सप्रूने भी जिक्र किया था। मगर अुन्हे यहाके दैनिक जीवनका पता न हो तो लिख दो। अुसका पालन तो सभीके लिअे आवश्यक है।" मैंने ठाकुरसाहबको सूचना दी और अुनका अुत्तर भी आ गया कि वे आश्रमके सब नियमोंकी सहर्ष पाबन्दी करेंगे, मगर अुनके अेक हाथमें कुछ खराबी थी जिसके कारण कातना अुनके लिअे सभव नही था। बापूने अिस मजबूरीको स्वीकार करके भी अुनके आनेकी स्वीकृति दे दी। परतु भगवानको कुछ और ही मजूर था। ठाकुर साहब बीमार हो गये और थोडे ही समय बाद चल बसे।

२४३

परचुरे शास्त्री नामक संस्कृतके विद्वान बापूके बड़े भक्त थे। वे कुष्ठ रोगसे पीड़ित होकर बापूके बुलाये हुअे सेवाग्राममें रहते थे। बापूने अुनके लिअे अलग कुटिया बनवा दी थी। बापू रोज अुनके पास जाते और अुनके घाव अपने हाथसे धोते थे। अेक दिन शास्त्रीजीको पंखा करनेकी ड्यूटी मेरी लगी थी। अिस बीच बापू आये और जख्मोंकी मरहमपट्टीका काम शुरू करने लगे। तब शास्त्रीजीने हाथ जोड़कर कहा, "बापू, आपके दर्शन मात्रसे मेरा दर्द दूर हो जाता है। आप और अधिक कष्ट न कीजिये।" अिस पर बापू कहने लगे, "शास्त्रीजी, आप बड़े स्वार्थी हैं। मुझे आनंद नहीं लेने देंगे?" वास्तवमें बापूको जितना सुख अैसे रोगियोंकी सेवामें मालूम होता था अुतना शायद ही किसी और काममें मिलता होगा। बीमारोंको देखने जानेमें अुनका कभी नागा नहीं होता था।

२४४

मैं बहुत कमजोर रहने लगा था। चूंकि वैद्य कृष्णलालजी मेरे मित्र थे। अुन्होंने दूध, मोसम्बी और स्वर्ण पर्पटीका प्रयोग करनेका आग्रह किया और स्थायी स्वास्थ्यका आश्वासन दिया। बापूका अिन चिकित्साओंमें विश्वास नहीं था। वे प्राकृतिक अुपचारोंमें ही श्रद्धा रखते थे। भस्मादिके तो वे घोर विरोधी थे। फिर भी जब मैंने वैद्यजीकी बात कही तो अुन्हें बुला भेजा और खाते समय अुनसे बात की। वैद्यजी तो अिस अप्रत्याशित मुलाकातसे कृतकृत्य हो गये। बापू अपना अविश्वास बताते हुअे भी अेक साथीके स्वास्थ्यकी खातिर अुन्हें अवसर देनेको तैयार हो गये। संयोगवश अुनका प्रयोग समाप्त होनेके दूसरे ही दिन मुझे ज्वर आ गया और वह मोतीझरा निकला। बापू पर तो प्रतिक्रिया होनी स्वाभाविक ही थी, मेरा भी भस्मादि पर कभी विश्वास नहीं था। जो था सो भी अुठ गया। बापू प्रयोग करनेको सदा तैयार रहते थे और अुनके सफल होने पर अपनी चिरकालीन राय भी बदल लेते थे और असफल होने पर पुराना मत दृढ़ कर लेते थे।

२४५

युद्धकाल था। बम्बअी और पूनेसे बापूके पास ये शिकायतें बराबर आ रही थी कि वहां स्थित गोरे सैनिक स्त्रियोंके साथ छेड़छाड़ करते हैं। कुछ बलात्कारके प्रयत्नोंके आरोप भी थे। लोगोंमें आतंक और रोष छाया हुआ था। अंग्रेज अधिकारी आनाकानी कर रहे थे। बम्बअीके गवर्नरने तो यहां तक कह दिया था कि मृत्युका आवाहन करनेवाले नौजवान सैनिकोंका यह मनोरंजन क्षम्य माना जाना चाहिये! शायद भारतकी आतिथ्यशीलताका भी अुल्लेख किया गया था। नागरिकोंमें अितना

क्षोभ फैल गया था कि हिंसा होनेका खतरा था। श्री कन्हैयालाल मुशी जैसे जिम्मेदार आदमीने अैसे अवसर पर अहिंसाका पालन करनेमें अपनी असमर्थता प्रगट करते हुअे कांग्रेसकी प्रारंभिक सदस्यता तक छोड दी थी। बापू अपने ढगसे 'हरिजन' में और अखबारी बयानो द्वारा अिस समस्याको हल करनेकी कोशिश कर रहे थे। अपने अनूठे ढगसे वे भारतीयोको वीरता और विदेशियोको शालीनता दिखानेकी सलाह दे रहे थे।

अैसे वातावरणमें अेक महाराष्ट्रीय बहन बापूसे मिलने आयी और अिन घटनाओका जिक्र करके अुसने प्रश्न किया "अगर मेरे धर्म पर आक्रमण हो और कोअी दूसरा अहिंसक अुपाय न हो, तो मैं अपने सतीत्वकी रक्षा हिंसा द्वारा कर सकती हू?" बापूने लम्बा अुत्तर दिया जिसका सार यह था "मै मानता हू कि जो स्त्री पूरी तरह सती है अुस पर कोअी आक्रमण नही कर सकता। शुद्धताका दूसरे पर असर होता ही है और बुरेसे बुरे आदमीकी अुस पर कुदृष्टि डालनेकी ताब नही हो सकती। अैसी हिम्मत तभी होती है जब स्त्रीमें भी कही न कही कमजोरी होती है। अितने पर भी यदि कुचेष्टा की जाय, तो स्त्रीके नाराजगी प्रगट करने और प्रेमपूर्वक अुलहना या साहसपूर्वक फटकार दे देनेसे दुष्ट शर्मिन्दा होकर या डरकर दुष्कर्मसे पराङ्मुख हो जाता है। अिसके बावजूद बहुत ही कम आदमी आगे बढनेका दु साहस कर सकते हैं। यदि फिर भी कोअी करे और स्त्री अपने धर्मकी रक्षाके लिअे प्राण देनेको तैयार रहे, तो अुसे आक्रमणको विफल करनेके अनेक अहिंसक अुपाय अुसी समय सूझ जाते हैं। आक्रमणकारीको काट लेना, नोच लेना, अुसके लात-घूसे मारना वगैराको मैं अहिंसक अुपाय ही मानता हू। ये अुतने ही अहिंसक हैं जितना चूहेका अपनी जान बचानेको बिल्लीको प्रहार करना है, क्योकि वह जानता है कि अुसके प्रहारोंसे बिल्ली तो मरेगी नही और अन्तमें अुसीको अपनी जानसे हाथ धोना पडेगा।

"लेकिन ये सब अुपाय भी कारगर न हो तो अपनी लाज लुटने देनेसे आक्रमण-कारीका वध कर डालना बेहतर है। तुम्हे यही अुपाय नजर आता हो तो बधांके बाजारसे खजर खरीद लाओ और गाधीका नाम लेकर आक्रमणकारीके सीनेमें भोक देना और अपने सतीत्वकी रक्षा करना।" अेक और प्रश्नका अुत्तर देते हुअे बापू बोले, "दुष्टके अधिक शरीर-बलके सामने स्त्रीका कोअी भी अुपाय सफल न हो और वह अपनी रक्षा न कर सके तो अुसे आत्महत्या करनेकी जरूरत नही और न समाजको अुसे तिरस्कृत ही समझना चाहिये। क्योकि वह निर्दोष है, बल्कि अपने सतीत्वकी रक्षाके लिअे जान जोखिममें डालकर सब अुपाय करनेके लिअे कद्रकी हकदार है।" बापू जैसे राष्ट्रीय क्षेत्रमें गुलामीको बरदाश्त करनेके बजाय सशस्त्र क्राति द्वारा आजाद होना अच्छा समझते थे, वैसे ही व्यक्तिगत जीवनमें कायरतासे हिंसाको कही ज्यादा तरजीह देते थे, क्योकि वे कहते थे कि बुजदिल कभी अहिंसाका पालन नही कर सकता। वे मानते थे कि अहिंसा पर अमल करनेवालेमें बहुत अूचे दरजेकी बहादुरी होनी चाहिये।

स्त्री-शिक्षाकी अेक प्रसिद्ध सस्थाके सचालकके विरुद्ध बापूके पास लडकियोंके साथ अनैतिक आचरण करनेकी शिकायत आअी। शिकायत करनेवाले भी और कोअी नहीं, स्वय सरदार वल्लभभाअी थे, जो कभी कच्ची बात नही कहते थे और प्रमाण जुटाकर ही किसी पर अभियोग लगाते थे। अुधर सचालकका अुत्तर यह था कि सरदार गुजरातमें अैसे किसी स्वतत्र और समर्थ कार्यकर्ताका अस्तित्व गवारा नही कर सकते, जो अुनकी अधीनता स्वीकार न करे, अिसलिअे ये आरोप द्वेषवश लगाये गये हैं। बापूको यह दलील तो मान्य नही थी, क्योकि अुनके खयालसे सत्य अक्सर अिसी प्रकार प्रगट होता है। जिनमें आपसमें मेल होता है वे अेक-दूसरेको ढकनेका प्रयत्न करते हैं। जब झगडा होता है तभी आम तौर पर सचाअी जाहिर की जाती है। बापू तो केवल यह देखते थे कि आरोप सच है या झूठ। मगर बापू विवादास्पद या न्याय-अन्यायके मामलोंमें कभी अिकतर्फा बात नही मानते और करते थे। अपनी निश्चित नीतिके अनुसार अुन्होने दोनो पक्षोके सामने स्वतत्र जाच कराकर पच फैसला करानेका सुझाव रखा। प्रस्ताव तो दोनो फरीकोने मजूर कर लिया और बापू पर ही यह भार डालना चाहा। अितना विश्वास था अुनकी निष्पक्षता पर भिन्न विचार रखनेवालोका भी। सरदारकी ओरसे गुजरातके अेक प्रमुख कार्यकर्ता सेवाग्राम आये हुअे थे। अुनसे बापूकी जब बातचीत हुअी अुस समय मैं वही था।

बापूने कहा "मै तो खुशीसे यह काम हाथमें लेता। परन्तु अिस समय देशके सामने जो महान समस्या है अुसमें मैं अितना फसा हुआ हू कि मै अितना वक्त अिस प्रश्नके लिअे नही दे सकता। सेवाग्राम तो छोड ही नही सकता। सस्थाके सचालको और अध्यापिकाओ और छात्राओको यहा बुलानेमें अुन्हे बडा कष्ट होगा, खर्च भी बहुत लगेगा। अैसा करना व्यावहारिक दृष्टिसे भी अवाछनीय होगा। अिसलिअे अैसा किया जाय कि अतिम निर्णय तो मैं कर दू और जाचका काम किसी औरसे करा लिया जाय।" कुछ नाम सूचित किये गये, परन्तु किसी पर समझौता नही हुआ। अतमें अभियुक्तकी तरफसे श्री का नाम आया। दूसरे पक्षकी ओरसे अुनके काग्रेसविरोधी और हिन्दू महासभावादी होनेकी आपत्ति की गअी, तो बापूने कहा, "विचार कुछ भी हो, वे धर्मात्मा पुरुष हैं। वे भ्रष्टाचारको कभी पसन्द नही कर सकते और जानबूझकर अन्याय हरगिज नही करेगे। सरदार बहादुर आदमी हैं। कोअी जोखम हो तो भी अुठा लेंगे और मुझे विश्वास है कि को स्वीकार कर लेंगे।" तदनुसार सरदारको तार देकर पूछा गया तो जैसी आशा थी वैसा ही अुनका स्वीकारात्मक अुत्तर आया।

कुछ दिनके बाद की रिपोर्ट आअी और बापूने निर्णय देते समय वादी पक्षको जो कुछ कहा अुसका आशय यह था · " ने लिखा है कि 'लडकियोने सचालकके विरुद्ध बयान जरूर दिये हैं, परन्तु वे अभियुक्तके सामने आनेको और जिरहके लिअे तैयार नही हैं। अैसी हालतमें यह विचारणीय है कि अभियुक्तकी अनुपस्थितिमें दी गअी

गवाहीके आधार पर अुसको दोषी करार देना कहां तक न्यायसंगत होगा और खास तौर पर जब वह अभियुक्त अैसा व्यक्ति हो जिसने गुजरात और काठियावाडमें हजारों हिन्दुओंको विधर्मी होनेसे बचाकर हिन्दूधर्मकी मूल्यवान सेवा की हो।' मैं . की अिस बातसे सहमत हूं कि अैसी शहादतकी बिना पर किसीको कसूरवार नहीं ठहराया जा सकता। न्यायका यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि मुल्जिमको गवाहसे जिरह करनेका मौका दिये बिना अिंसाफ पूरा नहीं होता। अिसलिअे मजबूरन मुझे अभियोग खारिज करना पडता है। परन्तु मुझे आशा है कि संचालक आत्मनिरीक्षण करेंगे और अपनी भूलको — यदि कोअी भूल हो तो — सुधार लेंगे।" बापू अपने बडेसे बडे साथियोंका भी लिहाज न करके शुद्ध न्याय ही करते थे।

२४७

बापूको कभी लोगोंकी अिच्छानुसार अुनसे अेकान्तमें बातें करनी पडती थीं। यह देखकर बच्चोंको भी अुनसे अेकान्तमें बात करनेका कुतूहल होता था। शायद वे अिसे अेक विशेष गौरव समझते थे। अेक दिन मेरी छ वर्षकी लडकी सुभद्राको भी अैसी ही सूझी। अुसने शामको सैरके समय बापूसे यह मांग की। वे तो बच्चोंको खुश करनेको सदा लालायित रहते थे। दूसरे दिन ४ बजे शामका समय दे दिया। परन्तु वह समय अुन दिनों कांग्रेसकी कार्यसमितिकी रोज होनेवाली बैठकोंके लिअे निश्चित था। अिसका बापूको ध्यान नहीं रहा। परन्तु सुभद्रा कब भूलनेवाली थी? अुसके लिअे तो यह परम सौभाग्यका अवसर था। वह ठीक वक्त पर बापूकी कुटियामें अुनके सामने जा खडी हुअी। मैं वहीं था। बापूके सचिवालयमें काम करनेवालोंको यह छूट थी कि खास तौर पर मनाही न होती तो बापूसे होनेवाली चर्चाओंको सुन सकते थे। कांग्रेस नेताओंको अिस लडकीके जाकर यूं अचानक खडी हो जाने पर कुछ आश्चर्य हुआ, परन्तु बापूकी नजर पडते ही वे कहने लगे, "अरी सुभद्रा, मैं तो भूल ही गया था।" नेताओंसे कहा, "अिस लडकीको मैंने अेकान्तमें बात करनेका यही समय दिया था। आप लोग तो चर्चा चलाअिये, मैं अिसे निपटाकर अभी आता हूं।" यह कहकर बापू अुठे और सुभद्राको बाहर बरामदेमें ले गये। बात तो अधिक करनी ही क्या थी, थोडी देरमें लौट आये। नेताओंके अुत्सुक चेहरे देखकर कहने लगे, "अकसर हम छोटे आदमियोंकी बात पर ध्यान नहीं देते और अुनको दिये हुअे वचनको महत्त्व नहीं देते। परन्तु यह ठीक नहीं। वचन तो वचन ही है और बच्चा हो या छोटेसे छोटा आदमी भी हो तो अुसे अुतना ही महत्त्व देना चाहिये जितना किसी बडे आदमीको देते हैं, क्योंकि अुसमें भी वही परमात्मा निवास करता है, जो बडे आदमीके हृदयमें विराजमान है।" समताके अिस प्रकारके व्यवहारसे बापू छोटे बड़े सबके हृदय सदाके लिअे जीत लेते थे। जिस दिन बापूके निधनके समाचार मिले थे अुस दिन हमारे घरमें सबसे अधिक सुभद्रा रोअी थी और कारण पूछने पर अुसने अिसी तरहकी घटनाओंका स्मरण कराया था।

२४८

सन् १९२८ की वात है। अुन दिनो 'श्रद्धानन्द' नामक हिन्दी साप्ताहिकमें शभक्त विनायकराव सावरकरका कोअी लेख छपा था, जिसमें अुन्होंने अपने विचार गौर प्रणालीके अनुसार बापूकी कडी आलोचना की थी। अिसके अुत्तरमें कानपुरके प्रताप' में अेक-दो अग्रलेख छपे थे, जिनमें वीर सावरकर पर अितने निर्मम प्रहार किये गये थे कि मेरे जैसे गाधी-भक्तको भी अुनमे अमर्यादा प्रतीत हुअी। मैंने अपनी यह प्रतिक्रिया स्व० गणेशशकरजी विद्यार्थी और बापूको सूचित कर दी। मेरे पत्रका बापूने यह अुत्तर दिया

"भाअी रामनारायण,

आपका पत्र मिला। मुझे तो कुछ पता भी नही था कि मेरे बारेमें 'श्रद्धानन्द' में क्या लिखा जाता है। मै अेक दो अखबार चद मिनिटके लिअे देख लेता हू। मेरा बचाव कोअी भी करे वह भी मै नही चाहता हू। मेरे निमित्तसे किसी पर हमला किया जाय वह भी मुझे पसन्द नही है। अिस पत्रका चाहे वैसा अुपयोग करे। मै 'प्रताप'को लिखता हू।

२७–२–'२८

आपका
मोहनदास"

बापू अपने पर होनेवाले आक्षेपोका आम तौर पर जवाब नही देते थे और न यह पसन्द करते थे कि कोअी और ही दे। वे मानते थे कि मनुष्यका आचरण ही अुसकी सबसे अच्छी सफाअी है। अुनके पास जो समय था अुसे वे अिसकी अपेक्षा अधिक अुपयोगी सेवाकार्यमें लगाना बेहतर समझते थे। क्षमा अुनकी वृत्ति और कृतिका अविभाज्य अग था।

२४९

मुझे सन् १९४१ के आरम्भमें सेवाग्राममे मोतीझरा निकल आया। मुझसे पहले अेकके बाद अेक कअी आश्रमवासी अिस रोगके शिकार होते चले गये। बापू अपनी प्राकृतिक चिकित्सा ही करते थे, कोअी दवादारू आम तौर पर नही देते थे। अिसलिअे मेरी बीमारीमें विशेष सावधानी बरती गअी। नतीजा यह हुआ कि मेरे बाद किसीको विषम ज्वरका प्रकोप नही हुआ। वैसे तो बापूके अिलाजमें मुझसे पहलेके भी सब बीमार अच्छे हो गये थे। मगर मेरी बीमारी सबसे लम्बी थी। मुझे २७ दिन ज्वर रहा जो मोतीझरेकी लम्बी मियाद मानी जाती है। अिसलिअे बापूकी चिकित्साका वर्णन दे देना सार्वजनिक हितमें होगा।

जब तक मेरा ज्वर अुतरकर तापमान मामूली नही रहने लगा, तब तक मुझे खानेको सुबह, दुपहर और शामको अेक अेक करके तीन नारगियोंका रस ही दिया

जाता था। पीनेके लिअे अुबालकर ठंडा किया हुआ पानी यथेच्छ ले सकता था। जाडेका मौसम होने पर भी मुझे बरामदेमें लिटाकर रखा जाता था और चारपाअी पर लेटे लेटे ही टट्टी, पेशाब और खानपान आदिकी जरूरतें पूरी करनी पडती थी। तीन बार टेम्परेचर लिया जाता था। रोज गरम पानीमें सोडा और नमक डालकर अेनीमा और गरम पानीमें भिगोये हुअे कपडेसे बदन पोछकर स्पज बाथ दिया जाता था। पहननेके सब कपडे रोज बदले और धोये जाते थे और ओढने-बिछानेके वस्त्रोको धूपमें डाला जाता था। किसी बच्चेको मेरे पास फटकने नही दिया जाता था। मेरे मलमूत्रको दूर ले जाकर जला दिया जाता था, क्योंकि टायफाअिडके कीडे मक्खियो द्वारा खाने-पीनेकी सामग्री पर रख दिये जानेसे दूसरोको यह रोग लग जाता है। अिस विशेष सावधानीसे ही मोतीझरेके रोगियोकी शृंखला आश्रममें टूट पाअी थी। मेरा ज्वर टूट जानेके बाद भी धीरे धीरे दूध, सागभाजी और फल खानेको दिये गये थे। अन्न तो कोअी दो मास बाद शुरू किया गया था। अिसी प्रकार चलने-फिरने और श्रम करनेकी अिजाजत भी शनैं शनैं दी गअी थी। अिस सारे कालमें बापू नियमित रूपसे दोनो समय देखने आते और टेम्परेचर, खानपान और नीद वगैराके बारेमें पूछताछ करके सूचनाअें दे जाते थे। दवा मुझे कुछ भी नही दी गअी।

२५०

यह अुपचार डॉ० दास नामक अेक वयोवृद्ध प्राकृतिक चिकित्सककी देखरेखमें होता था। वे जितने कोमल-हृदय प्राणी थे अुतने ही अनुशासनके पक्के और कुछ कटुभाषी भी थे। अेक दिन किसी मामूली-सी भूल पर मुझे कोअी सख्त बात कह बैठे। मेरे दिलको ठेस लगी और असर चेहरे पर प्रगट हुआ। अितनेमें ही बापू आ पहुचे। देखते ही ताड गये कि कुछ दालमें काला है। पूछा "क्या मामला है?" मैं तो चुप रहा मगर दास बाबूने सब माजरा सही सही सुना दिया। बापू अेकतर्फा बयानको कभी पूर्ण सत्य नही मानते थे। मेरी तरफ जिज्ञासाके रूपमें देखने लगे तो मैंने दास बाबूके वर्णनकी ताअीद कर दी। तब अुनसे कहने लगे "देखो, डॉक्टर, सत्य तभी हितकर होता है जब अुसे प्रिय बनाकर कहा जाय। मैंने सत्यके साथ अहिंसाको अिसीलिअे जोडा है। यह जरूरी नही है कि जो कुछ सच हो वह हमेशा प्रगट ही किया जाय। कभी कभी मौन रखना भी कर्तव्य होता है। परन्तु जब कहना फर्ज हो जाय तो झूठ हम कुछ न कहे, लेकिन जो कुछ कहे वह पूर्ण सत्य होते हुअे भी अिस प्रकार मिठासके साथ कहें कि जिसके विरुद्ध कहना पडे अुसे आघात न पहुचे या कमसे कम बुरा लगे। अिससे अुसे हमारे प्रेम और सद्‌भावका विश्वास होगा और हमारी बातका बुरा असर होनेके बजाय कुछ न कुछ अच्छा ही असर होगा।" सत्य और अहिंसाको अेक ही सिक्केके दो पहलू मानकर व्यवहार करनेमें ही बापूकी महान सफलताओका रहस्य था।

२५१

बापूको किसीका अखबार निकालना पसन्द नही आता था। अपने साथियोको तो वे अिस धंधेमें पडनेसे आम तौर पर मना ही कर देते थे। मगर अिस सम्बन्धमें भी किसी साथीकी ली हुअी जिम्मेदारी या दिये हुअे वचनको निभानेका वे बडा ध्यान रखते थे। मुझे भी अुन्होंने 'नवज्योति' साप्ताहिक चलानेसे मना कर दिया था। मगर जब मैंने अुन्हे बताया कि अुसके लिअे लिखनेका मैंने वादा कर रखा है और छोटा भाअी जो अुसे चलाता था जेल भेज दिया गया है और अुसकी अनुपस्थितिमें पत्रको बन्द न होने देना मैं अपना धर्म समझता हू, तो बापूने तुरन्त स्वीकार किया "कोअी वचन यदि अनैतिक नही है तो अुसे पालन करना हमारा कर्तव्य है। परन्तु अुसका पालन हमारे अपने तरीकेसे ही होना चाहिये। मैंने तुम्हे राजनीतिसे फिलहाल अलग रखना तय किया है, अिसलिअे तुम 'नवज्योति' में अराजनीतिक लेख लिखते रहकर अपना वादा पूरा करो। रही बात 'नवज्योति' को आर्थिक सहायता देनेकी, सो वह भी दुर्गाप्रसादके कारावाससे अुत्पन्न होनेवाले सकटमें देनी जरूरी मालूम होती है। मगर तुम्हे अिसमें न पडने देकर मैं अिसका कोअी अुपाय सोचूगा।" दूसरे दिन अुन्होंने जमनालालजीसे बात की, परन्तु अुन्हें राजस्थानके कामोमें काफी कटु अनुभव हो चुके थे और जयपुरमें कुछ ताजा निराशाअें हुअी थी, अिसलिअे अुन्होंने दिलचस्पी नही दिखाअी। आखिर बापूने किशोरलालभाअी द्वारा कलकत्तेके अेक धनिक देशभक्तको लिखवाकर सहायता देनेकी प्रेरणा की। अिस प्रकार अपने साथियोका वचन पालन करने और अुनके सकट दूर करनेको बापू असाधारण कार्रवाअियां भी कर देते थे।

२५२

मेरे गोसेवाकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिअे बगलोर चले जाने पर स्वामी आनद गोसेवा सघके मत्री नियुक्त हुअे। अुन्होंने बापूसे, यदि वे गिरफ्तार हो जाय तो बादमें सघकी व्यवस्थाके बारेमें सलाह पूछी तो बापूने कहा "रामनारायण बगलोरसे लौटकर सत्याग्रहमें न पडे। अुसे गोसेवाका ही काम करना है।" जब मैं बगलोरसे लौटा तो स्वामीजीने यह पैगाम सुनाया और स्वय हटनेकी अिच्छा प्रगट की। परन्तु विधिको कुछ और ही मजूर था। मुझे मालूम हुआ कि अजमेर सरकारने बाहर चले जानेवाले दूसरे कार्यकर्ताओकी तरह मेरे नाम भी वारट जारी कर दिया था। मैंने गिरफ्तार होकर जानेके बजाय स्वय चला जाना अपने लिअे अधिक गौरवशाली समझा। तदनुसार मैं आश्रमसे चल दिया और अजमेर रेलवे स्टेशनसे ही सीधा जेल भेज दिया गया। फिर भी मेरे मनमें अुस कदमके औचित्यके बारेमें [illegible] रही। परन्तु १९४५ में रिहाअीके पश्चात् जब मैं बापूसे मिला तो अुन्होंने मेरी अिस कार्रवाअीको 'सत्याग्रहीके लिअे अधिक योग्य' कहकर मेरा समाधान कर दिया। शौर्यका हरअेक कदम अुन्हे सदा पसन्द आता था।

२५३

२३-५-'४१ को बापूसे मैंने कुछ प्रश्न किये थे। अुनके अुत्तर मेरी डायरीमें लिखे हैं। प्रश्नोत्तरी यह है :

प्र० — क्या पुस्तकालयकी सफाअी आश्रमका शरीरश्रम नहीं है? क्या भाजी साफ करना ही अनिवार्य है?

अु० — भाजीमें जाना आवश्यक माना जाता है, क्योंकि वह अनिवार्य सामुदायिक कार्य है। जब बहुत आदमी रहे तब अेक दो छूट सकते हैं।

प्र० — सुबह चार बजे अुठते ही शौचादि गये बिना प्रार्थनामें जानेसे सुस्ती आती हो और कब्ज रहता हो तो क्या किया जाय?

अु० — कब्ज जाना चाहिये। चार बजे अुठनेका छोड़ दिया जाय। आम कच्चे या पक्के जो मिलें सो खाकर देखो। रोटीसे कब्ज होनेका संभव है।

प्र० — क्या अपने बुजुर्गोंकी भाषाके दोषदर्शनमें — यदि वह सही हो तो भी — भाग लेना अुचित है?

अु० — कैसे भी बुजुर्ग हों अुनके भाषादोषादिकी ज्ञानपूर्वक चर्चा तो काफी हो सकती है।

*　　　　*　　　　*

यहां सेवाग्रामकी मेरी डायरीके कुछ अंश अुद्धृत करना अुचित होगा।

२५४

१२-६-'४१. यहां आने पर अैसा सुना कि डॉ० दासका प्रयोग सफल नहीं हुआ।

(अिस पर बापूने लिखा अैसा न माना जाय)

राजकुमारी बहनके साथ घूमनेमें बातचीत हुअी। बापूकी क्षमाशीलताका अनुभव तो था। बहनने और भी आश्वासन दिलाया। मगर अिस बार बापूकी सख्ताअीके भी दर्शन हो रहे हैं। जहां तक कहनेका सम्बन्ध है अुन्होंने बहुत साफ और सच्ची बातें कही हैं। मुझ पर अैसी छाप पडी है और राजकुमारी सहमत थी कि कभी कभी बापू बहुत गहरी बात कहनेमें बहुत साधारण ढंग और भाषासे काम लेते हैं। अुसे तुरन्त समझना मुश्किल होता है और बिना पूरा विचार किये झट अुत्तर दे देना ठीक नहीं रहता। कभी कभी अैसा भी लगता है कि वे गलत समझ जाते हैं। और यह भी है कि अेक बार अच्छा या बुरा अुनका खयाल बन जाता है तो मुश्किलसे बदलता है। लेकिन अुनके मनमें हेतु शुद्ध और अुनका स्वभाव अुदार है, अिसमें तो कोअी शक ही नहीं।

२५५

१३–५–'४१ बापूसे समय मागने गया तो आज सुबह घूमनेमें साथ चलनेको कह दिया। मनमें अेकान्तकी बात थी, मगर अुन्होने पूछा तो घबरा गया और निश्चित अुत्तर न दे सका। आखिर अेकान्तमें बात हुआी। मगर सैरके अन्तमे बापूने अेकान्त मागनेके दोष बताये। कहने लगे कि अपने दोष दूसरो पर प्रगट हो तो नम्रता, शुद्धि और साहस बढते हैं।

* * *

२८–५–'४१ यह जानकर सन्तोष हुआ कि बापूको कतरनोके प्रकार और सख्यासे सन्तोष हैं। हा, कुछ पर अस्थायी समझकर अखबारका नाम नही लगाया, जिस पर बापूने कहा कि वह लगाना जरूरी है।

(छोटी छोटी चीजो पर बापू कितनी सूक्ष्म दृष्टि रखते थे। वस्तुत वे master of details थे।)

* * *

३१–५–'४१ बापूसे पुस्तकालयकी जिल्दोके बारेमें बात हुआी। अुन्होने कहा कि हमें गरीबोकी तरह रहनेका प्रयत्न करना चाहिये, अिसलिअे अत्यन्त आवश्यक होने पर ही पैसे खर्चना चाहिये। अत जो पुस्तक बहुत हाथोमें जाय या फट रही हो अुसीकी जिल्द बधवायें। नअी पुस्तकोको अभी रहने दें।

(मानो खर्च करते समय हर दम बापूके सामने दरिद्रनारायणकी मूर्ति खडी हो जाती थी।)

२५६

१२–६–'४१ आज अेक अुग्र, अुत्तेजित या अुन्मत्त युवकने केशोभाअीको मारा। वे खूनमें लथपथ हो गये, मगर प्रतिकारका बल होते हुअे भी शान्तिसे मार खाकर अुन्होने सच्ची वीरता व साधुताका परिचय दिया।

(ये जापानी साधु थे। बापूके साथ सेवाग्राममें रहते थे। गजबके सेवापरायण, हसमुख और सयमी पुरुष थे। आये तब भी सुवर्ण थे, बापूके पास रहकर अुस सोनेमें अहिंसाकी सुगध भी आ गअी थी।)

१६–८–'४१ बापूने आज प्रार्थनामें गुरुदेव (कवीन्द्र रवीन्द्र) को सन्त कहा और अुनके कवित्वसे अुनके देशप्रेम और विश्वप्रेमको अधिक बताते हुअे आत्मशुद्धिकी प्रेरणा की। अुन्होने क्रोध, आलस्य, स्वार्थ वगैरा छोडनेको कहा।

२५७

२१–८–'४१ बापूका यह पत्र मिला

"चि० रामनारायण, तुम्हारा खत तो अच्छा है ही, मर्यादासे बाहर नही जाना। अगर क्षणिक जोश कारण नही है तो त्याग टिकेगा। अन्यथा ज्यादा

कष्टका ही कारण होगा। बरसोंकी आदत बड़ी दृढ़ताके सिवा नहीं छूट सकती है। औश्वर तुम्हें बल दे। बापूके आशीर्वाद। २१–८–'४१"

अिस पर दोपहरको बात हुआी। मैंने कहा, "जोश नहीं, विचारपूर्वक किया है।" बोले, "परिणाम अच्छा आया तो समझा जायगा कि त्याग दिलसे हुआ है। मैंने चेतावनीकी तौर पर कहा है। प्रयत्न तो शुभ है, करने जैसा है। हा. खर्च कहांसे लाओगे? व्यापार तो मैं करने देना नहीं चाहता। हां, तुम सब अैसा काम करो कि खर्च निकल आवे। प्रताप अच्छा लड़का है। मुझे पसन्द है। अंजना भी है।' बापूकी बातसे बड़ा सन्तोष हुआ।

(बात यह थी कि हम दोनों बीमार रहते थे। तीन बच्चे साथ थे। हमारा आश्रम पर काफी भार था। अिससे मनमें असन्तोष रहता था। अुसीको मिटानेके लिअे खानपान वगैरामें कमी करनेका निश्चय किया और बापूको सूचना दी। अुसका जो अुत्तर बापूने लिखा और कहा वह अूपर दिया गया है। अिनमें त्यागका स्वागत करने, विचारपूर्वक त्याग करने और लोकसेवकोंको व्यापारमें न पड़ने देनेका बापूका सतत आग्रह स्पष्ट है।)

२५८

परन्तु हुआ वही जो बापूको डर था। मेरा स्वास्थ्य बिगड़ा और अंजनादेवी घबराअी हुअी बापूके पास पहुंची। बापूका मौन था। अिसलिअे अुन्होंने यह पत्र लिखकर दिया

"चि० रामनारायण,

अंजनासे मैंने सुना था। दुःख हुआ लेकि(न) गभराहट जैसी कुछ नहीं। आज प्रार्थनाके बाद शीघ्र मौन खुलेगा। तब हम तीन बैठ जायेंगे। अेकान्त ही होगा। घूमनेके समय बात करना ठीक नहीं होगा।

८–९–'४१ बापूके आशीर्वाद"

तदनुसार शामको कोअी दो अढ़ाअी घंटे चर्चा हुअी। बा और बापूकी सेविकाअें नाराज हो रही थीं। हमें भी अपनी समस्याओंके लिअे बापूका अितना समय लेने पर बड़ा संकोच हो रहा था। परन्तु अुन्हें तो दूसरेकी बात पूरी तरह समझे अपनी समझाये और कोअी हल निकाले बिना चैन नहीं पड़ता था। आखिर तय हुआ कि आर्थिक समस्या तो यों हल की जाय कि मैं गोसेवा संघका काम करूं और नालवाड़ी (गोपुरी) में रहूं। स्वास्थ्यलाभके लिअे नालवाड़ी जानेसे पहले सेवाग्राम रहकर नीचे लिखा बापूका नुस्खा आजमा लिया जाय

"भोजनमें

दूध ३० तोला
१ मोसम्बी

११ बजे

अेक केला

अेक तोला घी

२० तोलेके कटोरेमें आरामसे जा सके अितनी भाजी

दस ग्रेनसे अधिक नमक नही

भाजीमें लीवू डाल सकते हो।

२ बजे भूख लगे तो ३० तोला छाछ और २० ग्रेन सोडा

और मोसवी अेक

५–२० को

३० तोला दूध

२० तोलेके कटोरेमें भाजी

ककडी मिले तब पाच तोला ककडी कच्ची

अेक मोसवी

रातको वहुत भूख लगे तो अेक केला। केला बरावर चवाकर लेना या मेश करके। यह ज्यादामें ज्यादा है। तीन दिन दस्त न आये तो अेनीमा लेना। मुझको रोजका हिसाब देना। अब तो रोजके रोज क्योंकि कुछ परिवर्तन करना पडे तो करू। लिखके भेजो।"

जब ससारका अितना बडा महापुरुष अपने छोटे-छोटे और दुर्बल साथियोके स्वास्थ्य और सुख-शान्तिमें अितनी दिलचस्पी ले, तो क्या आश्चर्य है यदि वे अुसके अुपकारोके कारण ही अुसके भक्त बने रहे।

२५१

जब मै सेवाग्रामसे अजमेर जेलकी तैयारी करके चला तब और कअी कार्यकर्ताओकी तरह मैने भी समझा था कि बापूने जेल जानेसे पहले कोअी अैसा सन्देश दिया है जिसके अनुसार तोडफोडके कामोकी छूट दी गअी है। अिस कथित सन्देशके अनुसार मैने बगलोरके अेक विद्यार्थीको वहा भी अैसा ही अेक कार्यक्रम बनाकर अुन पर अमल करानेको लिखा। अिसके कोअी दो साल बाद जब अजमेर जेलमें नजरबन्द था, तब मैने अिस सम्बन्धमें २६ जुलाअी, १९४४ को वहासे बापूको यह पत्र लिखा

"परम पूज्य बापूजी,

"श्री चरणोमें सादर प्रणाम। कलके 'स्टेट्समैन' में आपका वह वक्तव्य देखा जो आपने सिंधके गृह-सचिव गजदर साहबके कथनका खंडन करते हुअे दिया है। अुसमें आपने कहा है कि 'मैं तोडफोड़ और अिसी तरहके अन्य कामोंके प्रति विरोध असंदिग्ध रूपसे दोहराता हू।' आपके अिस बयानके कारण ही मैं यह पत्र लिख रहा हू।

"मैं ९ अगस्त, १९४२ को बंगलोरसे सेवाग्राम पहुंचा था। नियत अवधिसे लगभग ३ सप्ताह पहले आ जानेका कारण यही था कि हो सके तो आपकी संभावित गिरफ्तारीसे पहले आपसे भेंट कर लूं। मेरा विचार तो गोसेवाके अंगीकृत कार्यमें ही लगे रहनेका था और जहां तक मुझे मालूम है आप भी यही चाहते थे। परन्तु सेवाग्राममें मुझे पता चला कि अजमेर मेरवाड़ाकी सरकारने मेरे नाम गिरफ्तारीका हुक्म निकाल दिया है। अिसलिअे मैंने यही सोचा कि मैं खुद ही जाकर क्यों न पकड़ा जाअू। तदनुसार मैं २२ अगस्तको परिवार सहित वर्धासे चलकर २४ अगस्त, १९४२ को रातके ९ बजे यहां पहुंचा और रेल्वे स्टेशन पर ही गिरफ्तार कर लिया गया। तभीसे मैं अजमेर सेन्ट्रल जेलमें नजरबन्द हूं।

"किन्तु वर्धासे रवाना होनेके पहले अेक खास घटना हुअी। आपकी गिरफ्तारीके बाद दो सप्ताह मुझे सेवाग्राममें लगे। अुस बीचमें बम्बअीसे आनेवाले अलग-अलग लोगोंसे जो समाचार मिले, अुनसे मैंने और दूसरोंने भी यह नतीजा निकाला कि जेल जाते समय आपने कोअी सन्देश दिया है, जिसके अनुसार तोड़फोड़ आदिके कार्यक्रमको आपकी स्वीकृति प्राप्त है। अिसी खयालके आधार पर १७ अगस्त, १९४२ को मैंने बंगलोरके अेक विद्यार्थीको आपके अुस कथित सन्देशका हवाला देकर अुक्त कार्यक्रमकी प्रेरणा करते हुअे अेक पत्र लिख दिया। अिस पत्रके बारेमें ११–४–'४४ को अजमेरके डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस मीर मुम्ताजहुसैन साहब और १५–४–'४४ को सुपरिन्टेन्डेन्ट ग्रैवहम साहब मुझसे पूछताछ करने आये। मैंने तो अुस वक्त अितना ही बताना मुनासिब समझा कि 'सरकार मुझ पर मुकदमा चलायेगी तो जो सही बात है वह अवश्य स्वीकार करूंगा। लेकिन अभी कुछ नहीं कहना चाहता।' अुस वक्त मेरा यही विश्वास था कि आपके विचारोंको मैंने ठीक तरह समझ रखा है और १७ अगस्त, १९४२ के पत्रमें मैंने विद्यार्थी भाअीको जो कुछ लिखा था वह भी ठीक था। परन्तु सन १९४२–४३ के दंगोंके बारेमें सरकारी प्रकाशनका आपने जो अुत्तर दिया है अुसे ध्यानमें पढ़ जाने पर मुझे शंका हुअी कि मैंने कहीं आपको गलत तो नहीं समझा। अब कल गजदर साहबका आपने जो प्रतिवाद किया है अुससे तो मुझे निश्चय हो गया कि मैंने आपके साथ अन्याय किया और अुसके आधार पर जो कार्रवाअी की वह भी अनुचित थी। अिस पर मैं हृदयसे खेद प्रगट करता हुआ आपसे क्षमा चाहता हूं और जो प्रायश्चित्त अुचित करें वह करनेको तैयार हूं। मेरी अिच्छा यह भी है कि सरकारको सीधा भी कुछ लिखूं। मगर आप अिससे सहमत हों तो कृपया लिखिये कि किस प्रकार क्या किया जाय। यह पत्र यहांके प्रमुख राजबन्दियोंकी सलाहसे लिख रहा हूं। अुत्तर चीफ कमिश्नर साहब अजमेर मेरवाड़ाके मारफत दीजिये।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

छोटू
रामनारायण"

आश्चर्यकी बात यह है कि चीफ कमिश्नरने सरकारके फायदेकी बात होने पर भी यह पत्र बापूके पास नही जाने दिया। तब मैंने अजनादेवीको मुलाकातमें यह सब किस्सा सुनाकर श्री श्रीकृष्णदासजी जाजूके मारफत बापूकी सलाह पूछ लेनेको कहा। अुत्तरमें सेवाग्रामसे २२–२–'४५ को जाजूजीका जो पत्र आया वह यह है

"श्रीमती अजनाबाअी,

आशीर्वाद।

"तुम्हारा ता० १५–२–'४५ का पत्र मुझे यहा दो रोज पहले मिला। कुछ महीनो पहले भी तुम्हारा अेक पत्र आया था। अुसका अुत्तर अुसी समय दे दिया था। परन्तु तुम्हे वह मिला या नही, अुसका पता नही चला। अब तुम्हारे पत्रसे पता चलता है कि तुमको पत्र बराबर नही मिलते है।

"मैंने तुम्हारा पत्र पूज्य बापूजीको बतलाया। अुन्होने जो अुत्तर लिख दिया है, वह नीचे अक्षरश गुजराती भाषामें लिख रहा हू। आशा है तुमको भाषा समझनेमें मुश्किल नही जायगी।

"'रामनारायणे जे जेवु बन्यु छे तेवु पोताने विशे लेखितवार कबूल करवु जोअीअे। तेम करता वधारे सजा भोगववी पडे तो भोगवे। आ ज प्रायश्चित्त छे। ते पण जो अेनु हृदय ने बुद्धि कबूल करे तो ज।

"'अुपरान्त छता जो कअी पण कानूनी गफलत रही गअी होय अने छुटातु होय तो छूटे ज। निवेदनमा ज कहे के निवेदन शुद्धि रूपे छे। कायदानी बारी हशे तो तेनो लाभ लअी छूटशे ज। निवेदननो अूधो अर्थ सरकार न करे।'

"छेल्ला वाक्यनो स्पष्ट अर्थ बापुने पूछता तेना जवाबमा बापुअे कह्यु 'रामनारायणनी कबूलत शुद्धिने अर्थे छे। छूटवानी वृत्तिथी नही। पण अे कबूलतनो अर्थ सरकार अे पण न करे के अेणे गुनो कर्यो अेम अे कहे छे अेटले अेने रोको अथवा वधारे सजा करो। कायदा प्रमाणे, तो अेम न ज कराय।'"

['रामनारायणको जो कुछ हुआ है अुसे अपने बारेमें लिखित रूपमें स्वीकार करना चाहिये। अैसा करनेसे अधिक सजा भुगतनी पडे तो भुगत ले। यही प्रायश्चित्त है। वह भी अुसका हृदय और बुद्धि स्वीकार करे तो ही।

'अिसके बावजूद यदि कुछ भी कानूनी गफलत रह गअी हो और छुटकारा होता हो तो अवश्य छूट जाय। वक्तव्यमें ही कह दे कि वक्तव्य शुद्धिके रूपमें है। कानूनी गुजाअिश होगी तो अुसका फायदा अुठाकर छूट ही जायगा। सरकार वक्तव्यका अुलटा अर्थ न करे।'

पिछले वाक्यका स्पष्ट अर्थ बापूसे पूछने पर अुसके जवाबमें बापूने कहा . 'रामनारायणका अिकबाल शुद्धिके लिअे है। छूटनेकी वृत्तिसे नही। परन्तु अिस अिकबालका अर्थ सरकार यह भी न करे कि चूकि वह कहता है कि अुसने अपराध किया, अिसलिअे अुसे रोका जाय अथवा अधिक सजा दी जाय। कानूनके अनुसार तो अैसा हरगिज नही किया जा सकता।']

"आशा है अूपरके वाक्योंसे वापूजीका अभिप्राय स्पष्ट हो जायगा। यदि अुनको रोक रखनेमें कानूनकी गलती रही हो तो अुसके बल पर कानूनी कार्रवाअी करनेमें बाधा नही समझनी चाहिये। यह पत्र पहुचने पर अुत्तर आप मुझे अवश्य दें। यहा कुशल है, आप बालबच्चे वगैरा सब प्रसन्न होगे। मेरे लायक काम लिखते रहे।

श्रीकृष्णदास जाजूका
आशीर्वाद"

यह अुत्तर मुझे कोअी सात महीने बाद मिला। अिस बीच मैंने पुलिसको लिखा कि अब मैं अिस मामलेकी सब बातें बता सकता हू। अिस पर सी० आअी० डी० अिन्स्पेक्टर चौधरी गुलामहुसैन मुझसे मिल गये और अुन्हे मैंने सब बातें कह दी। बापूके अिस अुत्तरका हाल मालूम होने पर २२ मार्च, १९४५ को मैंने चीफ कमिश्नरको यह पत्र लिखा

"I am writing under the advice of Gandhiji

"On August 17, 1942, I wrote a letter from Sevagram to a student in Bangalore advocating a programme of subversive activities

"On October 2, 1943 I finished writing a book of reminiscences in Hindi and at the close of my narrative alluded to the happenings of August 1942, with particular reference to Ajmer-Merwara, in a spirit of criticism of public apathy towards a campaign of defiance including sabotage.

"Although the aforesaid letter was intercepted by the police during postal transmission and the book is still an unpublished manuscript and no harm could have ensued from either, yet I am convinced, as a votary of truth and non-violence and humble associate of Gandhiji, that I was wrong in holding and expressing the views that I did in both the documents, views which were based on a misunderstanding of the alleged parting message of Gandhiji on the eve of his arrest in August 1942 This realization of error was brought home to me by a statement issued by Mahatmaji on the 25th July 1944 refuting certain charges against congressmen by the Home Minister of Sindh and reiterating his unequivocal opposition to acts of sabotage and the like

"I lost no time in endeavouring to make amends to Gandhiji whom I addressed a letter (copy attached) the very next day i e on the 26th July 1944 Unfortunately, your predecessor, for reasons best known to him, turned down my request to allow the letter to reach its destination I was consequently disabled at that time from obtaining Gandhiji's opinion about the necessity of

my addressing Government directly on the subject Only recently have I been able to know his mind and hence this confession

"In concluding I wish to make it clear that this communication is solely designed as a measure of self-purification and is not actuated by any desire for securing release"

[यह पत्र मैं गांधीजीकी सलाहसे लिख रहा हू।

१७ अगस्त, १९४२ को मैंने सेवाग्रामसे अेक विद्यार्थीको बगलोर पत्र लिखा था, जिसमें तोडफोड़के कामोंकी हिमायत की थी।

२ अक्तूबर, १९४३ को मैंने हिन्दीमें अेक संस्मरणोकी पुस्तक लिखना समाप्त किया था और अपने वर्णनके अन्तमें अगस्त १९४२ की घटनाओंका अुल्लेख किया था, जिसमें अजमेर-मेरवाड़ेका जिक्र करते हुअे विद्रोह और तोडफोडके आन्दोलनके प्रति जनताकी अुदासीनताकी आलोचना की थी।

यद्यपि यह पत्र पुलिसने डाकमें ही अुडा लिया था और वह पुस्तक अभी तक अेक अप्रकाशित पाडुलिपि मात्र है और दोनोंसे ही कोअी हानि नही हो सकती थी, फिर भी सत्य और अहिंसाके अेक हिमायती और गाधीजीके अेक नम्र साथीके नाते मुझे प्रतीति हो गअी है कि दोनो ही दस्तावेजोंमें व्यक्त किये गये विचार रखकर और प्रगट करके मैंने भूल की थी। अुन विचारोंका आधार अेक गलतफहमी थी, जो मुझे अगस्त १९४२ में गाधीजी द्वारा अपनी गिरफ्तारीसे पहले दिन दिये गये कथित सन्देशके बारेमें हुअी थी। अिस गलतीका ज्ञान मुझे अुस बयानसे हुआ जो गाधीजीने २५ जुलाअी, १९४४ को जारी किया और जिसमें अुन्होंने सिंधके गृहमत्री द्वारा कांग्रेसजनो पर लगाये गये आरोपोका खडन किया था और तोडफोड आदिकी कार्रवाअियोंके प्रति अपना असदिग्ध विरोध दोहराया था।

मैंने गाधीजीसे क्षमा-याचना करनेमें कुछ भी देर नही लगाअी और अुन्हे दूसरे ही दिन अर्थात् २६ जुलाअी, १९४४ को अेक पत्र लिखा (नकल साथ है)। दुर्भाग्यवश आपके पूर्वाधिकारीने, न जाने क्यो, मेरी प्रार्थना स्वीकार नही की और अुस पत्रको ठिकाने नही पहुचने दिया। अिस कारण अुस समय तो मै गाधीजीकी राय अिस बारेमें प्राप्त नही कर सका कि मुझे सरकारको सीधा लिखना चाहिये या नही। अुनके विचार मैं अभी हाल ही में जान पाया हू और तदनुसार अपना दोष स्वीकार कर रहा हू।

अन्तमें मैं स्पष्ट कर देना चाहता हू कि यह पत्र केवल आत्मशुद्धिके लिअे लिखा गया है। रिहाअीकी किसी अिच्छासे नही लिखा गया है।]

जेलमें बापूका पथ-प्रदर्शन पाकर मुझे बडा बल मिला और जिस समय हमारे अनेको साथी माफिया मागकर और जलील शर्तें मानकर छूट रहे थे अुस समय भी बापूके विचारो और आध्यात्मिक प्रेरणाके प्रभावके कारण दिलमें कमजोरी नही आअी और न परिवारमें गभीर बीमारिया होने पर भी पैरोल पर जानेका ही प्रलोभन हुआ। सरकार पर भी मेरे अुस पत्रका यह असर जरूर हुआ कि अुसने मुझ पर कोअी केस नही चलाया और मुझे सबके बादकी टोलीमें छोडकर ही सन्तोष कर लिया।

२६०

मगर बापू अपने आदमियोंका ही मार्गदर्शन नहीं करते थे। अपरिचित देश-भक्तोंको सहायता देनेमें भी वे अुतने ही अुदार और तत्पर थे। अिन्हीं दिनों, अजमेर जेलमें अजमेर राज्यके अेक वर्तमान मंत्रीने भूख-हड़ताल कर दी। वे भूतपूर्व सुपरिन्टेन्डेन्टके मित्र थे। अिस कारण जेल कर्मचारियोंको अुनका रुआब मानना और अुनके साथ विशेष व्यवहार करना पड़ता था। जब वह सुपरिन्टेन्डेन्ट बदला और दूसरा आया तो जेल कर्मचारियोंने बदला निकालना शुरू किया। श्री   तेजस्वी आदमी थे। अुन्होंने (दूसरोंकी नजरमें) अेक छोटीसी मांग पर जब तक वह पूरी न हो जाय तब तकके लिअे अनशन शुरू कर दिया जो लगभग तीन दिन तक चला। अुन्हें जबरन् दूध दिया जाता था। स्थिति गंभीर होती जा रही थी। अुनकी पत्नी और मित्रोंकी चिन्ता बढ़ रही थी। अन्तमें अिन लोगोंने बापूको यह सब हाल लिखा तो अुन्होंने तुरन्त भूख-हड़ताल तोड़ देनेकी सलाह तार द्वारा भेज दी। अिस प्रकार बापूने अेक देशभक्तके स्वाभिमान और प्राणोंकी रक्षा कर ली और अुसके अिष्टमित्रोंकी मानसिक पीड़ा दूर कर दी।

२६१

कर्नल बरेथाट नामक अेक पारसी सिविल सर्जन जेलके सुपरिन्टेन्डेन्ट थे। अुनके पक्षपातपूर्ण व्यवहारसे राजबन्दियोंमें असन्तोष था और अन्य कुछ कर्मचारियोंके विरुद्ध भ्रष्टाचारकी शिकायत थी। सुपरिन्टेन्डेन्टसे सुधारके लिअे कहा गया तो सन्तोषप्रद कार्रवाअी नहीं की गअी। अन्तमें तय किया गया कि राजबन्दियोंके सामूहिक हितों और अधिकारोंके बारेमें चीफ कमिश्नरको अेक पत्र लिखा जाय और यदि अेक विशेष अवधिके भीतर अुसका सन्तोषजनक अुत्तर न मिले तो अेक राजबन्दी भूख-हड़ताल करे। पत्र मेरे नामसे भेजा जाना भी निश्चित किया गया। मियाद बीत गअी तो भूख-हड़ताल हुअी। अिस बीचमें चीफ कमिश्नरकी तरफसे राजबन्दियोंके पास तो कोअी जवाब नहीं आया, परन्तु सुपरिन्टेन्डेन्टके नाम अेक गुप्त पत्र आया जो जेल के कर्मचारी मुझे दिखा गया। अुसका अेक शब्दप्रयोग *ipse dixit* मुझे याद रह गया है। सुपरिन्टेन्डेन्टकी मनमानी पर अुन्हें अुलहना दिया गया था। अिससे वे और चिढ़ गये और कुछ राजबन्दियों पर 'शरारत' का अिल्जाम लगाकर तंग करने पर [illegible]। अुस भूख-हड़तालवाले भाअीके कारण भी मेरे मनमें बेचैनी थी। तब मैंने सुपरिन्टेन्डेन्टसे मिलकर अुन्हें सब परिस्थिति बताअी और सुझाव दिया कि या तो राजबन्दियोंकी अुचित मांगें स्वीकार करके अधिकारी भूल-सुधार कर लें या मुझे सजा दें। कर्नल बरेथाटने पूछा "आपका क्या कसूर है?" मैंने कहा, "अिस हड़तालका मुखिया मैं हूं और चीफ कमिश्नरके नाम भेजे गये पत्रका लेखक भी मैं ही हूं।" सुपरिन्टेन्डेन्टने मुझे अेक सप्ताहकी कालकोठरीका दंड दिया, अुसे

सुनकर मैंने अुन्हें कहा, "आपने मुझे सजा देनेमें रियायत की है जो मैं नहीं चाहता। आपको कमसे कम दो सप्ताहका अेकान्तवास देनेका अधिकार है। मैं चाहता हूं कि आप वह पूरा ही काममें लें।" सुपरिन्टेन्डेन्टको मेरे रहस्योद्घाटन और मेरी माग दोनों पर आश्चर्य हुआ और अुन्होंने कहा, "मेरे जीवनमें अैसा अनुभव यह पहला ही है। मुझे अफसोस है मैं आपकी बात नहीं मान सकता।" मैंने मन ही मन बापूको नमस्कार किया, जिनके विचारोंकी प्रेरणासे अिस प्रकारकी स्फूर्तिया होती रहती है।

२६२

हम कथित गाधीवादियोंका जेलमें जैसा चाहिये वैसा आचरण तो नहीं रहा। आपसमें मनमुटाव रहा, हममें से कुछने चोरीसे मगाये हुअे अखबार छुप छुपकर पढे और गुप्त रूपसे बाहरवालोंके साथ अनधिकृत पत्रव्यवहार भी किया। अेक-दोने सहूलियतोंके लिअे अधिकारियोंकी कृपा प्राप्त करनेकी कमजोरी भी दिखाअी और कुछ लोगोंने खादी पहननेकी सुविधा होने पर भी थोडेसे आर्थिक लोभमें आधे मिलके सूतवाला कपडा पहननेमें भी दरेग नहीं किया। कुछ अपमानजनक शर्तों पर छोडे जानेके बाद अुन्हें तोडकर वापस जेल नहीं आये। फिर भी यह बापूके पुण्यका प्रताप ही समझना चाहिये कि गाधीवादियोंका व्यवहार जेलमें और लोगोंसे अधिक शोभनीय या कम अशोभनीय रहा और जहा अनेक प्रमुख काग्रेसियों और पदाधिकारियों तकने सरकारसे क्षमायाचना करके जेलसे मुक्ति प्राप्त करनेमें भी सकोच नहीं किया, वहा गाधीवादियोंमें से अेकका भी अिस प्रकारका पतन नहीं हुआ।

मैंने अिस कारावासमें यह भी देखा कि जो लोग बापूके सम्पर्कमें रह चुके थे या जिनके जीवन पर बापूके विचारोंका प्रभाव पडा था, अुनका व्यवहार जेलमें और अुनके घरवालोंका बाहर दूसरोंकी अपेक्षा अधिक शातिप्रद, स्वाभिमानपूर्ण और सेवामय तथा शालीन रहा। यही हाल खानपानका था। हम लोगोंका भोजन काफी सात्त्विक था। मेरे भोजनालयका तो नाम ही राजबन्दियोंने वैज्ञानिक चौका रख दिया था। प्रार्थना और शरीरश्रमका कार्यक्रम नियमित रहा। लिखने-पढनेका काम भी काफी हुआ।

२६३

बापूके कमरेमें — झोपडेमें कहना अधिक ठीक होगा — दो चीजों पर अुसमें घुसनेवालेका ध्यान फौरन जाता था। अेक तो कागजके मोटे पुट्ठे पर लिखा हुआ यह आदर्श वाक्य · Do not negotiate when you are weak, keep silence when you are in temper (जब तक कमजोर हो समझौतेकी बात न करो; जब तक गुस्सा है चुप रहो।) मैंने जब पहले-पहल यह वाक्य देखा तो कुछ देर तक अुधर देखता ही रह गया। मेरे मनमें ये विचार आये "अिसमें बापूकी सार्वजनिक और व्यक्तिगत व्यवहार-नीतिका रहस्य आ जाता है। जब तक हिम्मत हो

या अहिंसक, जब तक वह अपने पास नहीं है, तब तक किसी भी आन्दोलनके बारेमें विरोधी पक्षके साथ सधिवार्ता करना बेकार है। अिसी प्रकार जब तक क्रोधका विकार प्रबल है, तब तक बुद्धि पर परदा पड़ा रहता है और मनुष्य कुछ भी ठीक विचार नहीं कर सकता। अुसे अुलटी ही अुलटी सूझती है। अिसलिअे सम्यक् विचारके लिअे मनका शान्त होना जरूरी है। वाणीका सयम अिसके लिअे अनिवार्य शर्त है।"

मेरी अिस मुद्रा पर बापूका ध्यान गया तो कहने लगे: "यह वाक्य जितना सार्थक है अुतना ही सरल है। परन्तु मेरे गुरुको भी जानते हो?" मैं जानता था कि बापू राजनीतिमें गोखलेको गुरु मानते थे और रस्किन, टॉल्स्टाय और थोरो तथा रायचदभाअीका अुनके विचारो पर बहुत असर पडा था। परन्तु अुन्होंने किसीको सामान्य अर्थमें गुरु नही बनाया है और जीवित मनुष्योमें तो कोअी अुनका विशेष अर्थमें भी गुरु न तो है और न होने लायक है। मैंने अुत्तर दिया, "जी नही।" तो अपनी डेस्ककी तरफ अिशारा करके बोले, "वे देखो, अेक नही, मेरे तीन तीन गुरु है।" अुनका मतलब बन्दरोकी तीन चीनीकी मूर्तियोंसे था। अुन्होने बताया कि ये अुन्हे अेक जापानी यात्री भेंट कर गया था। अिन बन्दरोमें से अेकके दोनो हाथ कानो पर रखे हुअे थे, दूसरेके आखो पर और तीसरेके मुह पर। बापूने क्रमश यह अर्थ समझाया कि "बुराअी न सुनो, बुराअी न देखो और बुराअी न करो।" अवश्य ही बापूकी यह वृत्ति थी और यदि अुन्हे बुराअी सुननी, देखनी या कहनी पडती थी, तो केवल सुधारके लिअे कर्तव्य-पालनकी दृष्टिसे।

२६४

जनवरी १९४१ में वर्धामें कांग्रेस महासमितिका अधिवेशन था। मौलाना अबुल कलाम आजाद सभापति थे। अुन दिनो बापू और कांग्रेस कार्यसमितिके कथित मत-भेदोकी अखबारोंमें बडी चर्चा थी। भारतीय स्वातत्र्यके विरोधी बातका बतंगड बनाकर अुससे अनुचित लाभ अुठाना चाहते थे। अध्यक्षकी हैसियतसे मौलाना साहबने अिन शानदार शब्दोंमें अपनी और अपने साथियोकी ओरसे सफाअी दी. "लोग हमारे मतभेदोकी बात करते है। वे नही जानते कि हमारे आपसके क्या ताल्लुकात है। वे निरे सियासी नहीं, घरू है। गाधीजी अिस कुनबेके बुजुर्ग है। अुनके हिलाये बिना अिस घरमें अेक पत्ता भी नही हिलता। वे जो हुक्म दें अुसे हम टाल नही सकते। मगर हमारा यह सरदार अजीबोगरीब किस्मका है। वह अपनी कभी नहीं चलाता। हमें पूरी आजादी देता है कि जो हमारा दिलोदिमाग कहे वही करे। हम करते है और जब कोअी रास्ता नही सूझता या कोअी भूल हो जाती है, तो हम अिसके पास रोशनीके लिअे पहुच जाते है। वह रोशनी हमें हमेशा मिल जाती है।" अिसका अुत्तर बापूने भी अुतने ही गौरवपूर्ण ढगसे दिया· "मौलाना साहबने जो कुछ कहा वह आपने सुना। वह ठीक ही है। मतभेदके सिलसिलेमें सबसे ज्यादा नाम जवाहरलालका लिया जाता है। लेकिन मेरा तो राजनीतिक अुत्तराधिकारी वही

होगा। अुसका दिल तो मेरी जेबमें है ही, दिमाग मैं किसीका छीनना नही चाहता। वह काम तो आज भी मेरा ही करता है। सिर्फ भाषा अुसकी अपनी होती है। परन्तु मुझे विश्वास है कि मै मर जाअूगा तब वह भाषा भी मेरी ही अिस्तेमाल करेगा।" मैंने देखा कि जवाहरलालजी मसनदके सहारेसे अुचककर अुसके अूपर जा बैठे और अुनके चेहरेसे साफ झलकता था कि वे अनोखा गर्व अनुभव कर रहे है बापूके अिस स्नेह और वात्सल्यपूर्ण अैलानसे। श्रोतागण चकित थे कि गाधीजीने अपने अनन्य अनुयायी सरदार वल्लभभाअी, राजेन्द्रबाबू या राजाजीको अपना वारिस न बनाकर अैसे आदमीको चुना जिससे कअी बातोमें अुनके विचार नही मिलते थे। मगर गाधीजीकी राजनीतिमें हर जगह त्याग, अुदारता और अुदात्तता भरी थी। वे जैसे महान थे वैसा ही अेक महान निर्णय अुन्होने बातो ही बातोमे अैसे स्वाभाविक ढगसे घोपित कर दिया, जिसने नेताकी निष्पक्षताकी अमर छाप जन-मानस पर लगा दी और भारतीय सार्वजनिक जीवनमें शीर्षद्वेष और महत्त्वाकाक्षाओके सघर्पको चिर काल तक टाल दिया। अनुभवने बता दिया कि बापूका चुनाव कितना सही था और जवाहरलालजीने देशमें अल्पसख्यकोकी रक्षा और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमे शान्तिके बापूके सन्देश पर कितनी सफलतासे अमल किया है।

२६५

सन् १९४५ में जेलसे छूटने पर जब मैं सेवाग्राम पहुचा तो गोसेवा सघकी योजनामें परिवर्तन हो गया था। कार्यकर्ताओने जो व्यवस्था सुझाअी वह अुससे भिन्न थी जो बापूने सन् १९४२ में जमनालालजीके निधनके बाद मुझे बताअी थी। जब अिस नअी व्यवस्था पर विचार किया जा रहा था, तब बापू मौन रहे और अुन्होने अपना प्रस्ताव वहा रखा तक नही। मुझे अिस पर आश्चर्य हुआ। शामको घूमते समय मैंने बापूसे अुनके चुप रहनेका कारण पूछा तो कहने लगे, "मेरी रायमें कोअी फर्क नही पडा है। मगर मै अपना मत किसी पर थोपता नही हू। बिना मागे सलाह देकर मै किसी पद पर अपने आदमीको बिठा भी दू, तो अिससे अुनका स्वाभिमान नही रहता और दूसरोका सहयोग नही मिलनेसे वह काम भी नहीं कर सकता। आज नही तो कल अनुभवसे अुन्हे अपना निश्चय बदलना पडेगा, बशर्ते कि काम ही मुख्य हेतु हो।" जहा लोग पदोके लिअे लडते हो और आपसमें खटपट करते हों, वहा बापू अपने आदमियोको अिन चीजोमें बिलकुल अलग रखते थे। अुनकी स्वा-भिमानकी व्याख्या भी साधारणसे भिन्न थी। किसी योग्य आदमीके योग्य स्थान पर न लिये जानेको वे अुसका अपमान नहीं समझते थे, अुनके जबरन् थोपे जाकर असतोष और असफलताका कारण बननेमें स्वाभिमानकी हानि मानते थे।

२६६

बापूकी सत्यपूजा अुनके शौर्य और साहसमें छानकर प्रगट होती थी। जिन चीजको वे सही समझते थे, अुन पर अमल करनेमें वे लोकलाज या समाजके भयसे, विरोधियो द्वारा दुरुपयोग होनेसे या किसी भी जोखिमसे डरते नहीं थे। अुस पर अमल करने लगते थे। अिन साहस और शौर्यका अेक असाधारण पहलू यह था कि वे जो कुछ करते थे खुलेआम करते थे। अुनका जीवन अक्षरश: खुली किताब था। पुराने ढंगके साधकोका रहन-सहन खान-पान, अध्ययन और अभ्यास अेकान्तमें होता था। बापूका सब कुछ सामूहिक और खुले ढग पर होता था। वे मानते थे कि मोक्षके प्रयत्नोंमें भी दूसरोको हिस्सेदार बनाना व्यक्तिगत साधनासे कहीं श्रेयस्कर है।

अिसी तरह वे प्रलोभनोंसे भाग कर साधना करनेसे अुनके बीचमें रह कर अुनसे अूपर अुठनेके हिमायती थे। वे गृहस्थोंमें रह कर सन्यासीका आचरण करते थे, स्त्रियोंके साथ काम करते हुअे ब्रह्मचर्य और सयमका पालन पसद करते थे, धन होते हुअे भी अुनका मालिक बननेके बजाय सरक्षक बनकर गरीबोंकी सेवाके लिअे सादगी रखनेके पक्षमें थे, बदला लेनेकी ताकत होने पर भी क्षमा करने और हिंसाकी शक्तिके बावजूद अहिंसाका पालन करनेके हिमायती थे तथा पद और प्रतिष्ठाके मिलते हुअे भी अुनसे दूर रहने और मिल जाने पर भी पानीमें कमलकी तरह अुनसे निर्लिप्त रहनेके समर्थक थे।

२६७

अपनेसे बडी अुम्रवालोंके प्रति व्यवहारमें हर हालतमें आदरभाव रखनेकी भारतीय परपराकी वे बड़ी कद्र करते थे और छोटोंसे अुनकी आशा ही नहीं अुनका आग्रह भी रखते थे। वे स्वय तो अुस पर अमल करते ही थे। जिन लोगोंने अुन्हें कवीन्द्र रवीन्द्रके बड़े भाअी 'बड़ा दादा' के सामने बैठते और महामना मालवीयका झुक कर स्वागत करते और विदा करते समय पहुचाने जाते देखा है वे अिसके साक्षी हैं। जो लोग दूसरोंके प्रेम या सम्मानके भाजन होनेके कारण काका, मामा, गुरुदेव आदि नामोंसे मशहूर हो जाते थे, अुन्हे छोटे होने पर भी बापू अिन्हीं नामोंसे सम्बोधन करके अुनकी अिज्जत करनेमें शरीक होते थे।

२६८

हमारे समाजमें खानपानके तरीके अितने दूषित हैं कि जिससे समय, शक्ति और धनका अपव्यय तो होता ही है, मगर स्त्रियोंकी अुनसे खास तौर पर दुर्दशा होती है। अुन्हे न केवल स्वास्थ्य-हानि ही होती है, प्रत्युत राष्ट्रका आधा अग राष्ट्रीय सेवाके लिअे लगभग निकम्मा बन जाता है। स्त्रियोको दिन भर चूल्हेकी शिकार बन कर आंखें खो देनी पड़ती हैं और रातको भी कअी जातियोंमें तो बारह

बारह बजे तक पुरुषोको खिलाने-पिलानेके लिअे जागना पडता है। बापूने अिस बुराअीको मिटानेके लिअे दो व्यावहारिक अुपाय किये। अुन्होने अपने आश्रमोमे सूर्यास्तके पहले भोजनका नियम बनाया, ताकि रात पडने तक स्त्रियोको रसोअीघरसे छुट्टी मिल जाय। अवश्य अिसमें भी बापूका आध्यात्मिक हेतु तो था ही। दूसरे, अुन्होंने खाना बनाने और परोसनेमें पुरुषोको भी स्त्रियोका हिस्सेदार बनाकर अुनका यह भार ही हल्का नहीं कर दिया, साथ ही मर्दोंको अनुभव कराया कि औरतोके प्रति अुनके व्यवहारमें कितना अत्याचार है।

२६९

मुझको लम्बे अर्सेसे स्वप्नदोषकी बीमारी थी। आश्रममें आनेके बाद वह, जैसी कि आशा की जाती थी, वहाके पवित्र वातावरणमे कम होनी चाहिये थी। मगर वह और भी बढ गअी। मुझे अिससे लज्जा हुअी और अिष्ट मित्रोको आश्चर्य। बहुत समय तक तो मैंने अिसे बापूसे छिपाया, मगर बादमें अुन्हे कहना ही पडा। अुन्होने कटिस्नान, रातके समय अेनीमा, मिट्टीकी पट्टी और कअी अुपाय बताये, जो मैंने किये परन्तु सब बेकार गये। तब अुन्होने मुझसे कारण पूछा। मैंने अुन्हे अपनी यह राय बताअी कि आश्रमका ११ और ५ बजेके बीच दोनो पूरे भोजनोका समय, खानेमें तरल पदार्थोका बाहुल्य और गरम गरम खुराक ही मुख्य कारण होने चाहिये। यह बात अुस समयकी है जब मै गोसेवाकी तालीमके लिअे बगलोर जा रहा था। बापूने कहा "मेरा खयाल तो यह नही है, मगर तुम्हारा कोअी सुझाव हो तो बताओ।" मैंने अजमेरके अपने स्वर्गीय मित्र प० रामचद्रजी वैद्यकी सूचनाअें सुनाअी। वे ये थी "दोनो समयके खानोके बीचका समय कमसे कम आठ घटे रखें। अिसमें भी खूब भूख लगे तभी खाये। खानेके समय पाव भर दूधसे अधिक न लें और पतली चीज कम लें। पानी खानेके बाद तीन घटेसे पहले न पियें। खानेके बाद और खास कर रातको बहुत देर न बैठें। भोजन तो सात्त्विक होना ही चाहिये।" बापू बोले, "मैं ये सुविधायें यहा भी दे सकता हू। परन्तु अब तो तुम बगलोर जा रहे हो। वही यह प्रयोग करके देखो। अिससे आश्रमके नियमोंमें अपवाद भी नही होगा। प्रयोग सफल हो गया तो मेरे भी अेक नअी चीज हाथ लगेगी।" मैंने पाच महीने अिस नुस्खेको आजमाया तो वह अक्सीर साबित हुआ। अुसके बाद मुझे स्वप्नदोषका रोग हुआ ही नही। अिसके कोअी साढे तीन वर्ष बाद जब हम मिले तो पहला प्रश्न बापूने अिसी विषयमें किया और अुत्तर पाकर प्रसन्न हुअे।

२७०

रियासतोंके अेक प्रमुख लोकसेवककी व्यक्तिगत कमजोरियां बापूको मालूम थीं। अुनके प्रतिद्वंद्वीकी, जो बापूके अधिक निकट थे, दुर्बलताओंका — कमसे कम अेक विशेष दुर्बलताका — बापूको पता नहीं था। वे मुझ पर स्नेह रखते थे। मुझे अुनके दोषका पता था। शायद १९३६ में वे अचानक बीमार हो गये और थोड़े ही दिनोंमें चल बसे। अुनकी अेक दिन चर्चा चल पड़ी तो बापूने पूछा "अकस्मात् . . . न जाने कैसे बीमार हो गये थे। तुम्हें कारण मालूम है?" कारण मुझे मालूम था, मगर मैं ठिठका कि कहीं बापूको धक्का न लगे। मगर बापूसे बच निकलना कठिन था। साहस करके बोला "हां बापू, मालूम है। . में भी वही दुर्बलता थी जो अुनके प्रतिद्वंद्वीमें है। पहले तो वह प्रतिद्वंद्वीको मालूम नहीं थी, पिछले कारावासके समय वह मालूम हो गयी। . . को अिससे आघात लगा। अुन्हें भय हुआ कि प्रतिद्वंद्वी अिसका दुरुपयोग करेंगे। अिसी डरसे बेचारे मर गये।" बापूको सचमुच धक्का लगा। मेरे खयालसे वह धक्का अितना . . की दुर्बलताकी बातसे नहीं लगा जितना अिस बातसे कि . . के मरनेसे पहले अुन्हें अिस बातकी जानकारी नहीं हुआी, अन्यथा वे अपने अलौकिक प्रेम और वात्सल्यसे . . को शान्ति देते और मानसिक आघातके असरसे बचानेका प्रयत्न अवश्य करते। बापूने अधिक न कह कर अेक गहरा निःश्वास लिया और अितना ही कहा. "देखो, . . . अप्रतिष्ठाके भयसे मर गये और . . निर्लज्ज होकर अैश कर रहा है। पाप तो सभी करते हैं, परन्तु भले और बुरेमें यही फर्क है।"

२७१

सन् १९४० की बात होगी। मैं सपरिवार वर्धा पहुंचा तब सेवाग्राममें जगहका अभाव था। अिसकी सूचना बापूने मुझे पहले ही दे दी थी। अिसलिअे हम जाजूजीके घर पर ठहर गये। अुसके अेक-दो दिन बाद ही चरखा-संघकी बैठक बजाजवाड़ीमें हुआी। कआी घंटे चली होगी। शामको देरसे खतम हुआी। जब सब बिखरने लगे तो बापूने जाजूजीको बुलाकर कहा. "आपसे अेक बात करनी है। रामनारायण सपरिवार आये हैं। सेवाग्राममें अभी स्थानकी बड़ी कमी है। आप अुनके लिअे कुछ समयके लिअे प्रबंध कर दें तो मेरे मन पर बोझा न रहे।" जाजूजीने दूसरे ही दिन व्यवस्था कर दी। मेरे मन पर यह स्थायी छाप पड़ी कि बापू अपने साथियोंकी आवश्यकताओंका कितना ध्यान रखते थे और अुनकी कठिनाअियां हल करनेमें अुन्हें कभी विस्मृति नहीं होती थी। वे कितने व्यस्त थे और मैंने अुन्हें याद भी नहीं दिलाअी थी।

२७२

बापूका नियम पालन गजबका था। दोनों समय डेढ़ मील घूमना अुनका [illegible] नियम था। अिसमें वे रेलके सफर या बीमारीके सिवा कभी नहीं चूकते थे। [illegible] देखा कि जब बरसात पड रही होती तब वे सेवाग्रामके [illegible] बरामदेमें ही घूम कर अपना नियम जरूर पालन कर लेते थे। [illegible] दिनमें अवकाश न मिलनेसे वे वहांकी बर्फीली ठंडमें भी [illegible] जाते थे। यहां भी समयाभावसे जब कभी दिनमें कातना न [illegible] सोनेसे पहले चरखा लेकर बैठते और अपना १६० तार सूत पूरा [illegible] थे। खानेके समयकी पाबन्दी भी अुनकी असाधारण थी। [illegible] चीतमें देर हो जाती और अुसे बीचमें छोडा नहीं जा सकता, [illegible] करते करते भी वक्त पर भोजन कर ही लेते थे। अुनके [illegible] दूसरे लोग — बडेसे बडे — भी कद्र करते और [illegible] थे।

२७३

तुम लोग बापूको मरने देना पसंद करोगे? अगर ये शरण आये हुअे मुसलमान मारे गये तो बापूके मरनेमें सहायक होंगे और अगर बचा लिये गये तो बापूके जिन्दा रहनेमें मदद मिलेगी।" अिस अपीलका दोनों पर चमत्कारी प्रभाव पडा, अुन मुसलमानोंको मकानमें पनाह दी गअी और वे दूसरे दिन पुलिसकी रक्षामें घर भेज दिये गये। अिस प्रकार कोअी दर्जन भर प्राणियोंको बचा लिया गया। गुंडोंके दिलोंमें भी बापूके प्रति अितना पूज्यभाव था! असलमें बापूका यह खयाल सही था कि साम्प्रदायिक दंगोंमें कथित गुंडे अितने दोषी नहीं जितने टट्टीकी आडमें शिकार खेलनेवाले पढेलिखे और राजनीतिक लोग हैं, जो अिन्हें अपना अस्त्र बनाते हैं।

२७४

अुन दिनों पूर्व बंगाल जानेवाली रेलगाडियोंके दूसरे दर्जेके डब्बे हिन्दुओं और मुसलमानोंके लिअे अलग-अलग लगते थे। मुझे त्रिपुरा जाना था। स्टेशन पर पहुंचने पर मालूम हुआ तो रिश्तेदारोंने गांधी टोपी अुतारने और हिन्दू डब्बेमें बैठनेकी सलाह दी। अुस वातावरणमें साधारण हिन्दूसे भी कांग्रेसी ज्यादा कोपभाजन माना जाता था और गांधी टोपी कांग्रेसी होनेकी निशानी थी। अिसलिअे वह ज्यादा जोखिमकी चीज थी। साहसी तबीयत तो थी ही, अिस तरह खतरा देखकर चोला बदलनेमें कायरता लगी। साथ ही बापूके अेक छोटेसे साथीके नाते भी अैसा करना अशोभनीय दिखाअी दिया। यह भी खयाल आया कि कभी बापू सुनेंगे तो क्या कहेंगे? मैंने सबंधियोंकी चेतावनीकी परवाह न करके निर्णय किया कि न केवल टोपी ही न अुतारी जाय, बल्कि मुसलमानोंके डब्बेमें ही बैठा जाय। हां, शौर्यके साथ कुशलतासे भी काम लेनेका निश्चय किया। डब्बेमें घुसते ही अुनमें बैठे हुअे चारों पांचों मुसाफिरोंको मैंने ध्यानसे देखा तो अुनमें से अेकके कपडे रंगीन होने पर भी खादीके मालूम हुअे। मैंने अुन्हींके पास आसन जमाया। जाते ही मैंने गांधीजी और साबरमती तथा सेवाग्रामकी बातें शुरू कर दीं। फल यह हुआ कि मुसलमान यात्री अैसे घुल-मिल गये कि सारा सफर हम लोगोंका नाच साथ खेलते, खाते और हंसी-दिल्लगी करते हुअे पूरा हुआ। मुझे यह देख कर सानंद आश्चर्य हुआ कि अुस दूषित वातावरणमें भी मुसलमानोंके दिलोंमें गांधीजीका कितना सम्मान और अुनके हालचाल सुननेका कितना चाव था!

२७५

गोलंदोमें जब मैं जहाज पर सवार हुआ तो वहां मेरे और मेरे अेक रिश्तेदारके सिवाय सैकड़ों यात्रियोंमें शायद ही कोअी हिन्दू होगा। गांधी टोपी तो सिर्फ मेरे ही सिर पर थी। मेरे चारों ओरके मुसाफिर बडी अुत्सुक दृष्टिसे मेरी ओर देखते थे। शायद मुझे बडा अदूरदर्शी समझते होंगे। दुःसाहसी तो अवश्य मानते होंगे। कुछ

अच्छा शिकार मिलनेकी कल्पना करते हो तो भी कोअी आश्चर्य नही। अस्तु, जब मै अपनी केबिनमें पहुचा तो जहाजकी अग्रेज कपनीका अेक हिन्दू गुमाश्ता आकर धीरेसे कानमें कह गया कि, "बाबू, आपकी बदकिस्मती यहा ले तो आअी है, मगर जानकी खैर चाहते हो तो अपनी कोठरीमें ही रहिये, अिधर अुधर न निकलें।" मेरे लिअे जहाजका सफर वह पहला ही था, अिसलिअे देखने-भालनेकी अुत्सुकता भी कम नही थी। मै अुस भले आदमीकी सीख मानकर डेककी तरफ तो नही गया, मगर केबिनोमें चक्कर लगाने लगा। गाधी टोपी जानबूझकर सिर पर रखी। शायद अिसीको देखकर केबिनसे निकलकर अेक और खद्दरधारी बगाली मेरे पास चले आये। वे नोआखलीके अेक काग्रेसी कार्यकर्ता थे। अिससे हम दोनोको ही काफी अितमीनान हुआ। पूछने पर अुन्होने बताया कि नोआखलीमें जितनी धन-जनकी हानि अखबारोमें बताअी गअी है अुतनी तो नही हुअी, परतु मानव क्रूरताका जो ताडव नृत्य हुआ अुसमें वहाके कुछ हिन्दू काग्रेसियोकी अनुपम निर्भयताका वर्णन सुनकर मुझे अपना साहस फीका मालूम हुआ और मेरी हिम्मत और बेखौफी और भी बढ गअी। बापू अुन दिनो नोआखली क्षेत्रमें ही थे और अुक्त कार्यकर्ताने बताया कि बापूकी अुपस्थितिसे कैसे वहाके हिन्दुओमें विलक्षण साहस और मुसलमानोमें हृदय-परिवर्तन नजर आ रहा है। मैंने मन ही मन बापूकी महानताको प्रणाम कर लिया।

२७६

जहाज पर अग्रेजी ढगसे खाना खिलाया जाता था। अपने रामके लिअे अिस तरह भोजन करनेका प्रथम ही अवसर था। मेरे पासमें लाहौरमें व्यापार करनेवाले अेक यूरोपियन दपति बैठे थे और सामने दो अमरीकी मिशनरी थे। चारोंने ही मुझसे परिचय करनेकी अिच्छा दिखाअी दी। अैसे वातावरणमें गाधी टोपी और खादीके कपडे पहने देखकर अुन्होने मुझे गाधीजीका ही आदमी समझा होगा। मुझे भी छुरी-काटेकी भोजन प्रणालीसे परिचय प्राप्त करना था। पास बैठी हुअी महिलासे सीधा ही सवाल कर बैठा "मै मेजके नियमोसे अनभिज्ञ हू। क्या आप कृपा करके मेरी मदद करेगी?" महिलाने तपाकसे कहा, "जरूर! मगर क्या मैं जान सकती हू कि आपका गाधीजीसे व्यक्तिगत परिचय है?" जब मैंने यह कहा कि मैं अुनके साथ कअी साल तक रहा हू, तब तो वे चारो आदमी मानो मेरे चिपट ही गये। न केवल अुस दोपहरको ही बल्कि शामके खाने पर भी वे मुझसे बापूकी बातोंमें [illegible] करते रहे। कुछ जिरह भी हुअी, कुछ टीका-टिप्पणी भी हुअी, मगर अितना स्पष्ट था कि वे सभी बापूको अेक महापुरुष मानते थे और अहिंसाके अुनके प्रयोगको बडे ध्यान और सहानुभूतिसे देखते थे। [illegible]वश चारो ही पिछले दोनो महायुद्धोंमें काफी धन-जन खो चुके थे। अिसलिअे चारो ही अिस बात पर सहमत थे कि यदि गाधीजी सफल हुअे और ससारसे युद्धका काला मुह हो गया, तो गाधीजी मानव-जातिके सबसे बडे अुपकारक माने जायगे।

२७७

लौटते समय मैं अकेला ही रह गया था। मेरे संत्री पहले चले आये थे। ढाकेके पास पहुचते पहुचते मेरा डब्बा सूना हो गया। अुसमें मैं अेकाकी मुसाफिर था। मनमें कुछ भय हुआ कि अिन दंगे-फसादके दिनोंमें दो गुडे घुस आयें और मार डालें तो? जब ढाका अेक स्टेशन रह गया तो पता चला कि वहा आज भीषण दगा हो रहा है और हिन्दुओ पर आफत आयी हुयी है। जिससे अदेशा और भी बढ गया। मैंने किसी तरह साहस बटोरा और हल्व मामूल रेल्वे स्टेशन आते ही गाधी टोपी सिर पर रखी। अितने हीमें तीन-चार मुसलमान नौजवान नेकर पहने और बन्दूकें हाथमें लिये डब्बेमें घुसे तो क्षण भरके लिअे कल्पना हुअी कि आज खैर नहीं। परतु जल्दी ही मालूम हो गया कि यह राजकर्मचारियोंका अेक शिकारी दल था जो आखेट पर जा रहा था। मैंने अुनसे बातचीतका सिलसिला जारी किया तो अुन्हे भी गाधीजीके हालचाल सुननेको वैसा ही अुत्सुक पाया, और बापूके व्यक्तित्व और विचारोंके प्रति अुनमें अुतना ही आदरभाव देखा जितना अन्य मुस्लिम मुसाफिरोंमें देख चुका था। मेरा अुर्दू भाषा और अिस्लाम धर्मका अभ्यास भी अिस यात्रामें खूब काम आया। मुझे यह भी अनुभव हुआ कि हिन्दू राष्ट्रीय कार्यकर्ताओंने शुरूसे मुसलमान वर्गों और जनसाधारणके साथ जितना चाहिये अुतना घनिष्ठ सम्पर्क न रखकर और केवल मुसलमान कार्यकर्ताओंके लिअे ही अुस क्षेत्रको छोडकर गभीर भूल की थी।

२७८

आशावहन और आर्यनायकम्‌जीकी जोडी सेवाग्राममें कअी दृष्टियोंसे अनुपम थी। अिनका अन्तर्धर्मीय, अन्तर्जातीय और अन्तर्प्रान्तीय विवाह हुआ था। दोनोंकी मातृभाषायें अलग-अलग होनेके कारण और अंग्रेजीके दोनो विद्वान होने पर भी अुन्होंने घरमें राष्ट्रभाषा हिन्दीको ही अपने व्यवहारका माध्यम बनाया था। बापूके संसर्गसे सब कुछ छोडकर आश्रमजीवन अपनाया था। अुनके अेक पुत्र और पुत्री थी। दुर्भाग्यवश पुत्रने कुनैनकी मीठी (Sugar-coated) गोलिया बहुतसी अेक साथ खा ली और सब अुपाय करने पर भी अुनकी मृत्यु हो गअी। माता-पिताको तो अिकलौते बेटेसे वचित होने पर जो आघात पहुचा होगा, अुनकी कल्पना ही की जा सकती है, परन्तु आश्रमवासियोंमें भी अिस असामयिक और दुर्घटनापूर्ण मौत पर मातम छा गया। बापूने अिस घटनाको दो दृष्टियोंसे देखा, अेक व्यक्तिगत और दूसरी सामाजिक। व्यक्तिगत दृष्टिसे अुन्होंने शोकविह्वल माता पर अपना सारा स्नेह और वात्सल्य अुडेल दिया। बालककी अन्त्येष्टि क्रियामें शरीक हुअे और कअी रोज तक लगातार पहाडी पर जाकर अुसकी समाधिकी यात्रा करते रहे। साथ ही हमारी गृहव्यवस्था और बालशिक्षा प्रणालीमें जो दोष हैं अुन्हें बताते हुअे अुनमें अिस प्रकार सुधारनेकी प्रेरणा भी की जिससे अिस प्रकारकी दुखद घटनाओंकी पुनरावृत्ति न हो। वे हर विपत्तिको अीश्वरीय सकेत समझकर अुससे पाठ ग्रहण करनेका अुपदेश देते थे। सचमुच हम

घरोंमें चाहे जो वस्तु चाहे जहां न रख दें और बच्चोंको बिना पूछे कोअी भी चीज न लेनेकी तालीम दें तो अैसी दुर्घटनाअें न हों।

२७९

मैंने १९४२-४५ की नजरबन्दीमें "गाय बनाम भैंस" शीर्षकसे अेक निबंध अंग्रेजीमें लिखा था। बापूको पढनेको दिया तो सेवाग्राममें पंचगनी ले जाकर अुसे पढ़ा। वह अुन्हें पसन्द भी आया, मगर अुसके वैज्ञानिक तथ्योंकी जांच सतीशबाबू और डा० सुशीला नय्यरसे कराये बिना पास नहीं किया। अिस प्रकार जहां बापू साथियोंको प्रोत्साहन देते थे, वहां जिस विषयको खुद अच्छी तरह नहीं जानते थे अुस पर अपनी स्वीकृतिकी मुहर न लगानेकी सावधान नम्रता भी रखते थे। मगर अिस सम्बन्धमें अधिक अुल्लेखनीय बात यह हुअी कि निबंधको डाक रजिस्ट्री द्वारा भेजकर पैसा खर्च करनेके बजाय वर्तमान संसदके अध्यक्ष दादासाहब मावलंकरके पुत्रके हाथ भेजा। बापूने मुझे पहले ही लिख दिया था कि वे दो-चार दिनमें आनेवाले हैं, अुनके साथ निबंध लौटाअूंगा। मितव्ययिताकी हद हो गअी!

मेलेमें जा रहे थे। देश भरमें दंगे-फसाद हो रहे थे। सब मुसाफिर गाडीसे बाहर निकलकर मैदानमें पडे थे। मैं भी अपनी गांधी टोपी लगाये विस्तर पर बैठा था। अितनेमें अेक खादीधारी युवक जो नंगे सिर था आया और कहने लगा "मुसलमानोंमें अैसी सुरसुराहट हो रही है कि हिन्दू मुसाफिरो पर हमला कर दिया जाय। कृपा करके टोपी अुतार लीजिये।" मेरा पहला खयाल बापूकी ओर गया। मनने कहा, "यह गांधीजीके साथी होनेका चिह्न है। अिसे कैसे कलंकित किया जाय? कुछ भी हो, टोपी नहीं अुतरेगी।" यही बात मैंने अुस भाअीसे कह दी और यह प्रस्ताव किया "मुझे तो मुसलमानोंसे द्वेष नहीं है। बापूने जो प्रेम सिखाया है अुसका तकाजा है कि डरने या वैरभावके बजाय संकटग्रस्त मुसलमान यात्रियोंकी सेवा की जाय।" मैं अुठ खडा हुआ और वह भाअी भी मेरे साथ हो लिया। हमने हर डब्बेके पास जाकर देखा और पूछा कि किसीके चोट तो नहीं आअी, किसीको पानी तो नहीं चाहिये और किसी तरहकी मददकी जरूरत तो नहीं? नतीजा यह हुआ कि मुसलमान यात्रियोंके साथ हमारी मित्रता हो गअी और हम दो हिन्दू यात्री थे जिन्हें अुन्होंने अपने डब्बेमें बिठाया और भीलवाडे पर मुसलमानोंका लाया हुआ खाना आग्रहपूर्वक खिलाया।

२८२

अुन्हीं दो वर्षोंमें कअी राजाओंसे मिलनेका काम पडा। मैंने देखा कि सभीका यदि किसी अेक नेताके सद्भावमें विश्वास था तो वे महात्मा गांधी थे। अिस दौरेमें मध्यभारतके अेक छोटे राजासे मुलाकात हुअी। वे अपने यहांके प्रजा-मंडलके कार्यकर्ताओंसे बडे क्षुब्ध थे। आपसमें व्यक्तिगत कटुता अितनी आ गअी थी कि अेक ओरसे झूठे आक्षेपोंका और दूसरी ओरसे नृशंस दमनका आश्रय लिया जा रहा था। हिंसा तककी नौबत आ रही थी। दूसरी ओरसे प्रतिहिंसाकी संभावना थी। राजा नौजवान आदमी थे और अुनकी रानी और भी नवयुवती थी। बहुत सुन्दर जोडी थी। गांधीजीके साथीके नाते अुन्होंने मुझसे पर्दा तोड दिया और अपने पतिदेवको समझानेका अनुरोध किया। मैंने राजा साहबको समझाया कि अैसे समय बापू राजा और व्यक्तिकी हैसियतसे अुन्हें क्या सलाह देते। मैंने बताया "शासनके नाते आप प्रजाको दायित्व-पूर्ण शासन देकर अुसके प्रथम सेवक होनेका गौरव लीजिये। अिस प्रकार आप आन्दोलनकी जड ही काट देंगे। व्यक्तिके रूपमें आप बुराअीका बदला भलाअीमें दें, दण्ड देनेकी शक्ति होने पर भी अपने विरोधियोंको क्षमा कर दें और हिंसाके सामर्थ्यके बावजूद अहिंसाका व्यवहार करें। अिससे निजी संबंधोंमें कायापलट हो जायगी। वैसे भी जो चीज कालशक्ति कल जबरन् करा लेगी वह स्वेच्छासे आज कर देना प्रथम श्रेणीकी दूरदर्शिता है।" "वे लोग अिसे मेरी कमजोरी समझें तो?" राजा साहबको शंका हुअी। मैंने कहा . "गांधीजी यह मानते हैं कि गलती सुधारने या सही बात करनेमें कोअी हमारी दुर्बलता समझे तो भले ही समझे। अिस

कारण हम स्वधर्म पालन न करें यह ठीक नहीं।" राजा साहबने विचार करनेका वचन दिया। कुछ दिन बाद रानी साहिबाका १४-५-'४७ का मेरे पास जो पत्र आया अुसमें अुन्होंने लिखा, " पूज्य पिता, आपने मुझे अुबार लिया।" अिस प्रकार बापूके नाम और कामका असर अमीर-गरीब सब पर पड़ता और अुनके जीवनको कृतार्थ करता था। रानी साहिबाकी अिस कृतज्ञताका कारण अेकमात्र यही था कि बापूकी विचारसरणी और व्यवहार-पद्धतिसे प्रभावित होकर राजा साहबने अनिष्ट मार्गको छोड़कर सही रास्ता अपनाकर अपनी पत्नीको निश्चिंत कर दिया था।

२८३

जनवरी १९४२ की बात होगी। श्री बलवन्तराय मेहता देशी राज्य लोक-परिषद्‌के मंत्री और डॉ० पट्टाभि सीतारामैया अध्यक्ष थे। श्री बलवन्तरायने श्री अमृतलाल सेठका नेतृत्व छोड़कर सरदार वल्लभभाओीके पथप्रदर्शनमें काम करना स्वीकार कर लिया था। सरदार चाहते थे कि वे काठियावाड़में ही रहकर काम करें। मगर वे मंत्रीपद छोड़नेसे पहले चाहते थे कि अुस स्थान पर कोओी अनुभवी कार्यकर्ता प्रस्थापित हो जाय। मुझसे गोपुरी आकर मिले और वह जिम्मेदारी संभालनेका आग्रह किया। मुझे अपने पुराने क्षेत्रका मोह हो आया और मैं अुन्हें अिनकार न कर सका। लेकिन क्षण भरमें संभलकर बोला, "मैं जमनालालजी और बापूकी स्वीकृतिके बिना यह भार नहीं अुठाअूंगा।" तय हुआ कि मैं जमनालालजीसे और डॉ० पट्टाभि बापूसे बात करें। जमनालालजीकी अिच्छा तो मुझे गोसेवा संघसे छोड़नेकी नहीं थी, परन्तु वे देशी राज्य लोक-परिषद्‌के मंत्रीपद पर अेक गांधीवादी सेवकके होनेका महत्त्व भी जानते थे। वे बोले "मैं जरा बापूसे सलाह कर लूं। वैसे मुझे अुम्मीद नहीं है कि वे मंजूरी देंगे।" यही हुआ। बापूने अिस लोभ और मोहमें पड़नेकी अनुमति देनेसे साफ अिनकार कर दिया। शायद डॉ० पट्टाभिको भी यही अुत्तर दिया। वे गीताके 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः' वाले वचनका अक्षरशः पालन करते और कराते थे।

२८४

सीमाप्रान्तके अेक रिटायर्ड अिंजीनियर बापूके भक्त थे। ये दुबले-पतले प्राणी सेवाग्राममें मेरे पड़ोसी और मित्र थे। गृहस्थीके कलहसे अुकताकर शान्ति प्राप्त करने और सेवा व सत्संग द्वारा आध्यात्मिक अुन्नतिके लिअे बापूके साथी बने थे। अेक दिन बातें करते हुअे अुन्होंने बताया कि वे सरहदी गांधी खान अब्दुलगफ्फारखां और अुनके बड़े भाओी डॉ० खानसाहबके बारेमें वही राय नहीं रखते जो आम तौर पर रखी जाती है। वे अुन्हें साम्प्रदायिकतासे परे नहीं समझते। यह सुनकर मैं दंग रह गया! बापूको अुन्होंने अपना यह मत बता दिया था, फिर भी बापूने अुन्हें

अपने साथ रखनेमें सकोच नही किया। जिससे मुझे और भी विस्मय हुआ। परन्तु मैंने देखा कि बापू सबके गुणोंके ग्राहक थे, परस्पर विरोधी तत्त्वोका अुपयोग कर लेनेका विवेक और सामजस्य अुनमें विलक्षण था और बडेसे बडे साथियोंके खातिर भी छोटे साथियोका अुपयोग करनेसे नही हिचकिचाते थे। बापूका आश्रम वास्तवमें विविध तत्त्वोका सगम था। जिसीलिये वे अुसे विनोदमें नभुमेला या शिवजीकी बरात कहते थे।

२८५

मैं सेवाग्रामसे आकर कोअी छ: मास साबरमती आश्रममें रहा था। जिस बीच काग्रेस और सर्वोदयी कार्यकर्ताओमें, रेलयात्रियोमें, राजकर्मचारियोमें और जनताके सभी वर्गोंमें पिछले महायुद्धके कुछ दुष्परिणाम, जो मेरी नजरमें आ रहे थे, मैंने बापूको लिख भेजे। मुझे भय था कि वे जिसे दोपदर्शन न समझ लें, जिसलिये बिन मागी राय देने पर पहले ही क्षमा-याचना भी अुसी पत्रमें कर ली थी। जिस पर पूनासे ८ नवम्बर, १९४५ को बापूका यह अुत्तर आया:

"चि० रामनारायण,

तुम्हारा कार्ड मिला। मुझे अच्छा लगा। अैसी 'बिन मागी राय' भेजते रहो। तुमने जो लिखा है अुसका प्रतिबिम्ब मैंने अपने भ्रमणमे पाया है।

बापूके आशीर्वाद"

जिस प्रकार साथियोको परिस्थितियोका अवलोकन करनेमें बापू प्रोत्साहन देते, देशकी स्थिति-सम्बन्धी अपनी जानकारी बढाते और अपने अवलोकनसे अुन्हे परिचित रखते थे।

२८६

सन् १९२८ में बिजौलियाके दूसरे सत्याग्रहके सिलसिलेमें मेवाड राज्यने मुझे अपने जिलाकेमें घुसनेकी मनाही कर दी और मेवाडसे मिले हुअे ग्वालियर रियासतके प्रदेशोंमें जानेकी भी अुस राज्यको लिखकर मनाही करा दी। मैंने कभी अुस आज्ञाको हटवानेका प्रयत्न नही किया। राज्य तो अपने-आप अैसे हुक्मोको वापस लेने ही क्यो लगा? अन्तमें सन् १९४६ में अर्थात् १८ वर्ष बाद जब बापूको पता चला कि मेरा प्रवेश-निषेध अभी तक जारी है, तो अुन्होने तुरन्त राजकुमारी अमृतकौरसे अुदयपुरके दीवान श्री टी० विजयराघवाचार्यको पत्र लिखवाया। फल यह हुआ कि थोडे ही दिनमें मेरे दाखिलेकी रोक अुठा ली गयी। जिस प्रकार जो काम आन्दोलनसे नही होते थे वे बापूके सद्भावपूर्ण सकेतसे ही सरलतापूर्वक हो जाते थे।

२८७

सेवाग्राममें १९४५ मे मैंने बापूकी दिनचर्या यह देखी

४ मे ४–२० घंटी बजते ही बापू ४ बजे अुठ जाते थे। अुनके बिस्तरके पास ही चौरी हुअी, कुटी हुअी दतुन अेक पानीके गिलासमें डुबोकर रातको रख दी जाती थी। अुनके दात तो थे ही नही, अिसलिअे वे केवल जीभ साफ करते थे। बादामके छिलके जलाकर अुसमें कोयला और नमक मिलाया हुआ मजन भी करते थे। पेशाबका बर्तन भी वही रहता था। अुससे निपटकर वही हाथमुह धोकर प्रार्थनाके लिअे तैयार होते थे। पानी बोतलमें भरा हुआ बिस्तरके पास ही तैयार रहता था। थूकनेको लोहेका तसला भी वही मौजूद रहता था।

४–२० से ५ प्रार्थनामें पहले 'अीशावास्य' अुपनिषद् मत्र और 'नम्यो हो रेंगे क्यो' जापानी बौद्ध मत्र और फिर कुछ पुराणो और शास्त्रोके चुने हुअे श्लोक बोले जाते थे। बापू मौन रहते थे। प्रार्थना अुनके पास ही होती थी। बापू लेटे ही रहते थे। श्लोकोके बाद कुरान, जेंदावस्ता आदिके पाठ और फिर रामधुन होती थी और अन्तमें किसी भारतीय सन्तका हिन्दी, गुजराती या मराठी भजन गाया जाता था। भजनके सिवा और सब कुछ सब मिलकर बोलते या गाते थे। रामधुनके समय बापू हाथोसे ताल देते थे। अन्तमें गीताके अध्यायोका अिस प्रकार पाठ होता था कि सप्ताहभरमें पूरा पारायण हो जाय। हर महीनेकी २२ तारीखको अर्थात् बाके मृत्यु-दिवस पर सम्पूर्ण गीताका पाठ किया जाता था।

५ से ६ प्रार्थनाके बाद बापू गरम गरम पानीमें कुछ सोडा और शहद मिलाकर पीते और फिर सो जाते थे।

६ से ८॥ छ बजे अुठकर शौच जाते थे। शौच वे कमोड पर जाते थे। वहासे निपटकर वे नाश्ता करते थे। नाश्तेमें बकरीका दूध और सन्तरे या आमका रस लेते थे। अुस समय आश्रम व्यवस्थापक या और किसी न किसीको मुलाकात भी देते थे। नाश्ता अपनी कुटियामें करते थे, भोजनालयमें नही।

नाश्ता खतम होते ही वे सैरको निकल जाते थे। बापू चलते बडे तेज थे। पैरोमें तकलीफ हो जानेके बादसे वे किसी न किसीके कधे पर हाथ रखकर चलते थे। वे वर्धाकी सडक पर पौन मील जाते और लौट आते थे। लौटने पर आश्रमके बीमारोको अवश्य देखते थे।

८॥ से ११ अब गाधीजी अपने लिखनेका काम शुरू करते थे। बापूके बैठने और सोनेका साधन भी अेक खास तरहका था। वह अैसा तख्ता था जिसके दो भाग थे। अेक भाग पर बैठकर वे पैर फैला देते थे और दूसरा सोते वक्त सिरहानेका और बैठते समय पीठके सहारेका काम देता था। अुस सारे पर अेक गद्दी लगी रहती थी। वे या तो पत्रव्यवहार निपटाते या 'हरिजन' के लिअे लेख लिखते या कोअी अखबारी बयान तैयार करते थे। करीब ९॥ बजेसे वे मालिश

कराते थे। मालिश अुनकी कनु गांधी, प्यारेलालजी, सुशीला नय्यर या मीराबहन करती थी। वे कड़वा तेल लगवाते थे। अुस समय वे जरूरी कागजात पढ़ते भी थे और बहुधा पढ़ते पढ़ते सो भी जाते थे। फिर वे अेक अलग कमरेमें स्नान करते थे। स्नान वे सदा गरम पानीसे करते थे जो अेक टबमें भरा जाता था। स्नान करनेमें अुन्हें अेक सहायककी आवश्यकता होती थी। अिसमें ११ बज जाते थे।

११ से १॥ ११ बजेकी घंटी बजते ही बापू सम्मिलित भोजनालयमें पहुंच जाते थे। वहां दो कतारोंमें सब आश्रमवासी बैठ जाते थे, जो अपनी अपनी थाली, दो कटोरियां, अेक चम्मच, अेक गिलास और अेक आसन लेकर आते थे। बापूके बैठनेको अुनकी गद्दी आती थी। बापू दोपहरको कुछ मिलाजुला पत्ती-प्रधान साग, और ज्यादातर अुसका पानी, कुछ डबल रोटीके टुकड़े (यह रोटी आश्रममें ही बनती थी, जो मोटे आटेकी और खास तरहसे तैयार की हुअी होती थी।), बकरीका दूध, खाखरा (पतली पापड़ जैसी रोटी), पिसा हुआ नीम, पिसा हुआ लहसन, फलोंका रस, सब कुछ मिलाकर लेते थे। बापूको गरम खानेका शौक था। खूब चबाते थे। अिसीके लिअे वे नकली दांत काममें लेते थे। बच्चों व बीमारोंको वे अपने खानेमें से प्रसादी देते थे। बापूको खानेमें कोअी अेक घंटा लग जाता था। अुस समयका अुपयोग वे अकसर जरूरी मुलाकातें करनेमें भी कर लेते थे। वहांसे अुठकर वे अपनी कुटियामें जाकर अेक छोटीसी लुटियासे हाथ-मुंह धोते थे।

थोड़ी देर अखबार देखते थे। पढ़ते-पढ़ते अुन्हें नींद आ जाती थी। अिस समय कोअी बहन अुन्हें पंखा झलती रहती थी और अुनके पैरोंके तलवोंमें घी मला जाता था। दोपहरके आरामके समय वे पेट और सिर पर मिट्टीकी पट्टी भी लगाते थे।

१॥ से ५ कोअी डेढ़ बजे अुठकर शहद और नीबू मिला हुआ गरम पानी लेते और फिर शौच जाते थे। २ बजेसे ४ बजे तक वे डाक पढ़ते और अुनका जवाब लिखते थे। अुनकी डाक अुनके मंत्रियोंमें से कोअी खोलता था। जो बापूके देखने और निपटानेकी होती, वह अुन्हें दे दी जाती थी। शेषको दूसरे लोग संभालते थे। अुनके पास सैकड़ों पत्र, अखबार और पुस्तकें आदि देश-विदेशसे भेंटस्वरूप आते थे। कार्यकर्ताओंको बापू यथासंभव स्वयं अपने हाथसे ही अुत्तर देते थे। अुनके अुत्तर संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित होते थे। वे अधिकतर पोस्टकार्ड ही काममें लेते थे। डाकके समयका बापू बड़ा ध्यान रखते थे। ४ बजेसे बापू कातते थे। अुसी समय अुनकी महत्त्वपूर्ण मुलाकातें होती थीं।

५ से ९ ५ बजे शामको भोजनकी घंटी होती थी। यह खाना भी बापू सबके साथ खाते थे। सायंकालीन खुराक भी अुनकी लगभग दोपहर जैसी ही होती थी। अिस समय भी कअी बार मुलाकातें होती थीं। खानेके बाद सुबहकी ही तरह और अुसी मार्ग पर बापू टहलने जाते थे। टहलनेके समय भी अकसर लोगोंको बातचीतका अवसर दिया जाता था। अन्यथा बच्चोंसे हंसी-दिल्लगी होती थी। लौटने पर वे फिर बीमारोंको देखते थे।

सध्याकी प्रार्थनामें बाहरके लोगोकी काफी भीड होती थी और अुसमें बापू आश्रमकी, व्यक्तिगत या राष्ट्रीय समस्याओ और घटनाओ पर या किसी आध्यात्मिक विषय पर प्रवचन करते थे। शामकी प्रार्थनामें और सब चीजें तो प्रात कालकी तरह ही होती थी। सिर्फ गीतापाठ नही होता था। अेक खास रागमें रामायणकी चौपाअिया गाअी जाती थी और फुटकर श्लोकोके बजाय गीताके दूसरे अध्यायके स्थितप्रज्ञके लक्षणोवाले अतिम १९ श्लोकोका पाठ होता था। भजन सुबहकी भाति कनु गाधी दिल-रुवा पर गाते थे। आश्रममे कातना सबके लिअे अनिवार्य था। अुसका हिसाब शामकी प्रार्थनामे लिखाया जाता था। यही हाजिरी भी मानी जाती थी। बापूका सूत अटेरते तो कोअी और थे, परन्तु वे कअी बार अपनी पूनिया स्वय ही रुअी धुनकर बनाते थे। सम्माननीय अतिथियोको बापू भोजन और प्रार्थनामें अपने पास बिठाते थे। अुनके सामने बहनें बैठती थी और अुनके अिधर अुधर पुरुषोका स्थान रहता था।

प्रार्थनासे अुठकर बापू ९ बजे तक फिर कुछ लिखते-पढते और चर्चा करते थे। कडाकेके जाडे और बरसातके सिवा बापू सदा खुलेमें सोते थे। वे केवल अेक तहमत लगोटकी शकलमें पहनते थे और ऋतुकी आवश्यकताके अनुसार अेक सूती या अूनी चादर ओढते थे। रातको सोते समय अुनके सिरमें तेल मला जाता था और पैर दबाये जाते थे। बापू आश्रममें खडाअू और बाहर मुर्दार चमडेके चप्पल पहनकर चलते थे।

२८८

अगस्त १९४५ में जब मैंने सेवाग्राम आश्रम छोडते समय बापूसे विदा ली तो मैंने अुनसे पूछा "हिंसाका सबसे बुरा रूप क्या है? आपका अुत्तर मेरे लिअे विदाअी सन्देश होगा।" बापूने अेक क्षण सोचकर कहा, "मेरे खयालसे प्रतिशोध वह रूप है, जैसे दभ असत्यका है। आवेश या क्रोधमें हम किसी पर हाथ अुठा दे या हानि पहुचा दें, तो वह अितना गभीर अपराध नही है, क्योंकि मनुष्यको अुसका वेग शान्त होने पर पश्चात्ताप और प्रायश्चित्तका भाव पैदा होता है। परन्तु जब अिन्सान जान-बूझकर, सोच-विचारकर बदला लेने पर अुतारू होता है, तो वह अिरादापूर्वक हिंसा होती है। अुसमें पछतावे या सुधारकी कमसे कम गुजाअिश रहती है, और वह सबसे खतरनाक होती है।"

अिस सन्देशने अेक नाजुक अवसर पर रामबाण [illegible] काम दिया। सन् १९४८ की बात होगी। अेक दिन अेक कार्यकर्ताने आकर प्रस्ताव किया "[illegible] मैं आपके विरुद्ध गदा प्रचार किया, परचे बटवाये और सार्वजनिक जीवनमें [illegible] विरोध कर रहे हैं और अधिकारियोसे मिलकर भी आपको हानि पहुचा [illegible]। [illegible] समय अुनके दुराचार और भ्रष्टाचारका भडा फट रहा [illegible]। [illegible] सदाके लिअे काटा निकल जाय।" मुझे सबसे पहले बापूका यह सन्देश याद आया [illegible] मैंने अुस भाअीको निराश करके लौटा दिया। मेरे जीवनके [illegible] यह काम मेरी सबसे अच्छी स्मृति है। जिसने मुझे [illegible]।

अंजनादेवीके संस्मरण

१

बापूने मेरी पहली मुलाकात १९२० की नागपुर कांग्रेससे पहले जबकि मारवाड़ी विद्यार्थी-गृहमें हुआी। अुस समय मेरे साथ स्व० केसरीसिंहजी बारहठकी पुत्री चन्द्रमणि-बाअी भी थी। हम दोनों पर्दा तो छोड़ चुकी थीं, परन्तु आभूषण और विदेशी वस्त्र हमारे शरीर पर थे। हम दोनोंने बापूके पैर छूकर कुछ जेवर भेंट किये। बापूने अुन्हें स्वीकार करके हमारे पर्दा छोड़ने पर हर्ष प्रगट किया। "मगर", वे बोले, "अितनेसे काम नहीं चलेगा। तुमको तो स्त्रियोंमें काम करना चाहिये। जेवर सदाके लिअे छोड़ दो। खादी धारण कर लो और यह परिवर्तन २४ घंटेमें करके दिखाओ।" चन्द्रमणिबाअीको सम्बोधन करते हुवे अुनके आभूषणोंकी ओर अिशारा करके कहा, "तुम्हारा पिता फकीर है। जिन्दा शहीद है। अुसकी बेटी होकर यह सब क्या पहन रखा है?" हम दोनों पर अिस प्रथम मिलनका चमत्कारी परिणाम हुआ। हमने अुसी दिनसे खादी धारण कर ली। मैंने जेवर छोड़ दिये और हम दोनोंने स्त्रियोंमें कांग्रेसका कार्य आरम्भ कर दिया। कुछ ही दिनोंमें हमने कांग्रेसके लगभग १,००० सदस्य बना लिये।

२

अुसी समय जमनालालजीकी बड़ी लड़की कमला आअी। अुसके हाथोंकी सोनेकी चूड़ियां देखकर बापू कहने लगे, "यह क्या हथकड़ी पहने हुवे है? मुझे दे दे।" "अच्छा, ले लीजिये," भोली कमलाने तुरंत अुत्तर दिया। "फिर तो नहीं मनवायेगी?" बापूने पूछा। कमला हिचकिचाअी। बापूने चूड़ियां नहीं ली। हमने देखा कि वे बच्चोंसे अुनके माता-पिताकी अनुमतिके बिना कोअी भेंट स्वीकार नहीं करते थे।

३

दूसरी भेंट हमारी नागपुर कांग्रेसके बाद जमनालालजीके बगीचेमें हुआी। अुस समय तक बापूके आश्रमकी महाराष्ट्र शाखा वर्धामें स्थापित हो चुकी थी। विनोबाजी और रमणीकलाल भाअी मोदी साबरमतीसे आ पहुंचे थे। मोदीजीकी पत्नी मानबहन भी अुनके साथ थीं। अुनसे हमारा परिचय हो चुका था। अिस बार हम तीनों साथ थीं। शीतकालका समय था। जानकीबहन, चन्द्रमणिबाअी और मैं पीछे

वह स्पष्ट विरोध प्रगट कर देती है और भविष्यमें अैसी हरकतोंके लिअे मौका नही देती, तो वह निरपराध और सती ही मानी जायगी।"

प्रश्न — यदि प्रेम, भय, किंकर्तव्यविमूढता या घनिष्ठताके कारण स्त्री आरभमें विरोध न कर सके और वात आगे वढ जाय तो?

अुत्तर — तो अुसे चाहिये कि मर जाय या मार दे, मगर अपने धर्म पर आच न आने दे।

५

आश्रमकी लडकिया मासिक धर्मके दिनोंमें भी सम्मिलित भोजनालयमें पगतमें वैठकर भोजन करती थी। अिस पर कुछ वहनोने आपत्ति की और चाहा कि घर पर खाना चाहिये। वापूने महिला प्रार्थनामें कहा. "नाथजी (केदारनाथजी) कहते हैं कि रजस्वलाके हाथका खानेसे अुनका मत्र झूठा हो जाता है। किशोरलाल-भाओी जैसे लोग भले ही अैसा मानें। मैं भी अपवाद तो मानता हू। मगर सवको तो खाना चाहिये।" दूसरे दिन मैंने अिस वारेमें पूछा. "अिस विषयमें दो मत मालूम होते हैं। अेक कहता है कि तीन दिन तक स्त्रीको नहाना, काम करना, वोझा अुठाना और छूना नही चाहिये। दूसरा कहता है यह सब करनेमें कोओी हर्ज नही। आपकी क्या राय है?" वापूने अुत्तर दिया "छूनेमें तो कोओी पाप नही। साधारण कामकाज और नहाना-धोना भी आदतके अनुसार किया जा सकता है। हा, वोझा अुठानेमें हानि हो सकती है। पगतमें वैठकर खानेमें कुछ भी आपत्ति नही होनी चाहिये। मासिक धर्म सन्तानोत्पत्तिके लिअे अिच्छा और अनुकूल स्थिति पैदा करता है। जो ब्रह्मचर्यसे रहना चाहती है अुन स्त्रियोको ये तीन दिन याद ही न रखने चाहिये।"

६

अहमदावादमें अुन दिनो चेचकसे सैकडो वच्चे रोज मर रहे थे। आश्रममें भी दो वाल-मृत्युअें हो चकी थी। अिस पर वातावरणमें कुछ घवराहट हो रही थी। अेक दिन वापूने प्रार्थनामें कहा. "चेचकका टीका लगवानेके वारेमें दो मत है। अेक पक्षमें और दूसरा विपक्षमें। मैं कहता हू टीका नही लगवाना चाहिये। वह खराव चीज है। अिसके लिअे जीती गायका खून लेते है। टीकेसे जहर दवकर दूसरी खरावियां पैदा होती है। मुझे डॉक्टर लोग नही समझा सके है कि अैसा नही है। फिर भी जो माता-पिता चाहे वे टीके लगवा सकते है।" मैं भी प्रतापकी तरफसे चिन्तित थी। परन्तु वापूके विचारोंके कारण अुसे टीका नहीं लगवा रही थी। वापूके अिस स्पष्टी-करणके वाद जव मैंने अैसी अिच्छा प्रगट की, तो वापूने स्वय डॉ० हरिप्रसादको पत्र लिखकर टीका लगवानेकी व्यवस्था कर दी।

७

अेक रोज सेवाग्राममें सुबह घूमते समय चि० सीताने बातो ही बातोमें बापूसे कहा कि भसाली भाअी १५ सेर दूध पीते हैं। बापूको आश्चर्य हुआ तो वह अुन्हे पकडकर भसाली भाअीके पास ले गअी। वहा पहुचकर बापूने पूछा "क्यो भसाली, १५ सेर दूध पी लेते हो?" "हा, बापू", वे बोले, "१७–१८ सेर सेपरेट (मक्खन निकाला हुआ) दूध मिल जाता है तो ले लेता हू। नही मिलता तो नही पीता। बाकी नीमके पत्ते, कच्चा कद्दू और कच्चा पपीता टोकरीमें रखता हू। अुससे काम चला लेता हू।" बापू हसकर चले गये।

८

भसालीभाअी गुजरात कालेजमें प्रोफेसर थे। विलायत हो आये थे। 'यग अिडिया'के सम्पादक भी रहे थे। बडे फैशनेबल आदमी थे। परन्तु बापूके ससर्गमें फकीर बन गये थे। हठयोगके शौकीन थे। वाणीके सयमके लिअे कअी वर्ष तक होठ सी लिये थे और जिह्वा-जयके लिअे सत्तू ही खाकर रहे थे। अिससे जब आखोकी ज्योति मद हो गअी तो बापूके आदेशसे यह सब छोड दिया था। फिर भी अुनका जीवन घोर तपस्यामय तो रहा ही। अुन्होने ब्रह्मचर्यकी साधनाके लिअे साबरमतीमें ५७ दिनका अुपवास किया था। सेवाग्राममें भी अुनका यह हाल था कि दिन भर धूपमें तपते रहते। केवल सिर पर कपडा डाले कातते रहते और लडके-लडकियोको अग्रेजी, गणित आदि पढाते रहते। परन्तु अुन्हे छायामें बिठाते। प्रार्थनामें नही जाते और शामको सात बजे सो जाते थे। रातको बारह-अेक बजे अुठकर चक्की चलाते। अेक रोज किसीने बापूसे कहा "अिस बेवक्त पीसनेसे आपकी नीदमें खलल नही पडता होगा?" "बिलकुल नही", बापूने अुत्तर दिया, "मुझे नीद खूब आती है। माताओके पीसते हुअे बहुतसे बालक सोते है। मुझे भी वह अभ्यास है।" अिस प्रकार बापू अपनी बचपनकी बाते सुनाकर मनोरजनके साथ शिक्षा भी देते थे और अपने आरामके लिअे साथियोके काममें हस्तक्षेप भी नही करते थे।

९

सेवाग्रामकी बात है। मैं और सीता बीमार थी। बापू कही बाहरके सफरसे लौटे थे। मौन दिवस था। मोटरसे अुतरते ही सीधे हमारे पास आये। मैंने कहा, "आप अभी यहा क्यो आये? पहले मुह-हाथ धोकर आराम करना था।" बापूने अपनी छाती पर हाथ धरकर अुगलीके अिशारेसे बताया, "अपने दिलसे तो पूछो?" सच तो यह है कि हम दोनोको बापूके आनेसे बडा सुख मिला था।

१०

बापूको शुद्ध अुच्चारण बहुत अच्छा लगता था। प्रताप और सीता राजकुमारी बहनसे अंग्रेजी और अम्तुल बहनसे अुर्दू पढते थे। यह क्रम बापूकी कुटियाके आसपास ही चलता और बापूको सुनाअी देता था। अेक दिन अुनसे कहने लगे "तुम्हारा अुच्चारण मुझे पसद है। घूमते समय मेरे पीछे पीछे चला करो और जब किसीसे बातें न हो रही हो तो संस्कृतके श्लोक रटा करो। मुझे आनद मिल जायगा और तुम्हारा अभ्यास हो जायगा।" 'अेक पथ दो काज' बापूकी कार्यप्रणालीका अेक खास अग था।

११

खाने-पीनेके सयम पर बापूका बडा जोर था। आश्रमवासियोको हिदायत थी कि बाहर जानेवालोंके यहा भोजन न करें और वर्धामें दिनभर रहना पड़े और आश्रमी भोजन मिलनेमें दिक्कत दिखाअी दे, तो अपना खाना साथ ले जाय। अेक दिन बापूकी सेविकाओमें से अेक लडकीने पारनेरकरजीके यहा खा लिया। बापूको पता लगने पर अुससे पूछा तो अुसने पहले अिनकार करके फिर अिकरार किया। अिस पर बापूने अेक दिनका अुपवास किया। अिसके बाद अुस लड़कीने कभी यह दोष नही दोहराया।

१२

अेक रोज चि० सुभद्राको आश्रममें कही अेक रुपया पडा मिल गया। वह दौड़ी दौडी बापूको देने अुनके पास पहुची तो वे आराम कर रहे थे। अम्तुल बहनने बापूको कष्ट न होनेके खयालसे सुभद्राको अुनके पास जानेसे रोक दिया। बापूने सुन लिया तो कहने लगे, "अम्तुल, अिसे आने दे। बच्चे मेरा जीवन हैं।" फिर सुभद्राकी सराहना करके अुसे व्यवस्थापकके पास रुपया हरिजन-कोषमें देनेको भेज दिया।

१३

बापूके अेक मित्रका लडका कुछ चञ्चल-सा था। वह अपनी पत्नीके साथ दुर्व्यवहार करता था। बापूने अुसे सेवाग्राम बुलाकर अपने पास रख लिया था। मगर वहा भी वह अपनी हरकतोंसे बाज नहीं आता था। अेक दिन पत्नीने बापूसे कहा, "ये मुझे मारते हैं। मैं अिनके साथ नही रहूगी।" बापूने पतिको बहुत समझाया। मगर अुसने अेक न मानी। अुल्टे बापू पर ही दोषारोपण करने लगा कि आप तो हम दोनोका विछोह कराना चाहते हैं। अन्तमें वह आश्रमसे चला गया। थोडे दिन बाद

पश्चात्ताप करता हुआ आया तो बापूने रख लिया। बापू सुबहके भूले हुअे शामको घर आ जानेवालोंको बराबर सुधरनेका मौका देते थे। मगर स्त्रियों पर अत्याचार सहन नहीं करते थे। अिसके लिअे वे पति-पत्नीके वियोग जैसी कडी व्यवस्था करनेमें भी नहीं हिचकते थे।

१४

कविसम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुरका देहान्त हुआ तो आश्रममें १२ घंटेका कताअी-यज्ञ रखा गया। अुस समय बापूको दीनबन्धु अेंड्रूजकी याद आअी और अुन्होंने दुःखके साथ कहा कि अेंड्रूज फंड अिकट्ठा नहीं हुआ। बापूको सम्मिलित कताअीकी केवल मजदूरी द्वारा यह कोष जमा करनेकी सूझी। हम लोगोंने मजाक अुडाया कि अिस तरह ६ लाख रुपया कितने सालमें जमा होगा, तो बापू कहने लगे, "तुम लोग क्या समझो? देखना, अिस सूतका क्या चमत्कार होता है?" अस्तु। दो तीन दिन बाद सम्मिलित कताअी हुअी। अुसका सूत चार-पांच सौ रुपयेमें बिका। स्वयं बापूके १५० तार सूतके तीन हिस्से किये गये, जिसको तीन आदमियोंने ५०-५० रुपयेमें खरीद लिया। सरकारको पता लगा कि बापू अपने सखाके स्मारकके लिअे अितना कायाकष्ट अुठा रहे हैं, तो अुन्होंने बम्बअीसे सन्देश भेजा कि बापू ७ दिन आश्रमका मोह छोड दें तो मैं यहां ७ लाख करा दूंगा। अैसा ही हुआ और बापूकी सूतके चमत्कारवाली भविष्यवाणी पूरी हो गयी। अैसा अटल था अुनका चरखेमें विश्वास।

१५

ने १९३० में निहत्थे असहयोगियों पर गोली चलानेसे अिनकार कर दिया था। अिस पर अुन्हें फौजी अदालतने कअी सालकी कैदकी सजा दी थी। जेलसे छूटने पर बापूने अुन्हें सपत्नीक सेवाग्राम आश्रममें बुला लिया था। वे हमारे पासवाली झोंपडीमें रहते थे। अेक दिन मैं सीताकी आंखें दिखाने अुसे वर्धा ले गअी थी। लौट कर आअी तो सुभद्राको कूकर खांसी (whooping cough) हो गअी। ने शोरकी शिकायतके साथ बापूसे मेरे खाने-पीनेके असंयमकी भी शिकायत कर दी, जो झूठी थी। मुझे भी बुरा-भला कहा। मुझे बहुत बुरा लगा। बापूने जांच करके शिकायतको गलत पाया, तो मेरे झोंपडे पर आये और कोअी घंटे भर तक वहीं घूमते हुअे मुझे समझाते रहे, "लम्बे कारावासके कष्टोंसे का दिमाग खराब हो गया है। वह जो कुछ कहे अुसे सहन कर लेना चाहिये। मैंने भी तो देखो कितनी छूट दे रखी है कि आश्रमके बीचमें पति-पत्नीको साथ रहने देता हूं? अर्जुनलाल सेठीको जानती हो? कितना बडा आदमी था? कैसा देशभक्त था? मगर कैसे पागल-सा हो गया और अन्तमें अेक दरगाहमें मरा। कभी कभी जेल-यातनाओंसे मस्तिष्क बिगड जाता है।" बापू जैसे कार्यव्यस्त और महान व्यक्तिके

अितना समय देने और अैसी असाधारण अुदारता दिखानेकी बातसे मेरा सारा असंतोष काफूर हो गया।

१६

मैं अकसर बीमार रहती थी। अिस कारण मुझ पर खर्च भी अधिक होता था और आश्रमवासियों पर सेवाका भी कुछ भार पड़ता था। अिससे मुझे बड़ा असंतोष रहता था। जब आत्मग्लानि अधिक बढ़ी तो मैंने बापूसे अेक रोज कहा "मेरा आश्रममें कोअी खास अुपयोग नहीं है और मेरा बोझा भी अुस पर काफी पड़ता है। अिससे मनमें बड़ी अशान्ति रहती है। क्या करूं?" बापूने बड़ी मिठाससे मुझे समझाया · "वैसे तो बीमारी अपने बसकी बात है और वह प्रकृतिके नियमोंका अुल्लंघन करनेसे ही होती है। फिर भी जब वह हो जाय, तो अुसका अिलाज करते हुअे अुसे सहन करना ही होगा। मगर तेरा कुछ अुपयोग नहीं या तू कोअी काम नहीं करती, यह बात सही नहीं है। तू भोजनालयमें समय देती ही है और रोज चार-पांच गुंडी सूत कात लेती है। अिससे अधिक क्या करेगी? यह तो काफी अुपयोग है।" मैंने कहा, "मैं बहुत पढ़ी-लिखी तो नहीं, मेरे अिन कामोंका क्या महत्त्व है?" अिस पर बापू कुछ तेज होकर कहने लगे, "वैसे तो सत्याग्रहमें कअी बार भाग लेकर और किसान स्त्रियोंकी सेवा करके तूने पढ़ीलिखी बहनोंसे कम महत्त्वका काम नहीं किया है। परन्तु तेरा वर्तमान कार्य भी राष्ट्रनिर्माणकी दृष्टिसे छोटा नहीं है। काम कोअी छोटा या बड़ा नहीं होता। अीमानदारी, ज्ञान और भावनापूर्वक किये हुअे सभी कार्योंका समान मूल्य है। जरूरत अितनी ही है कि मनुष्य शक्ति भर काम करे और अुसमें कसर न रखे।" अुस दिन मेरी समझमें आया कि सचाअी और पूरी ताकत लगाकर किये हुअे सभी परिश्रमोंकी अेकसी कीमत है।

१७

चि॰ प्रताप खादी विद्यालयकी परीक्षामें बैठा था। नव विषयोंमें प्रथम आया। परन्तु तेरह वर्षकी आयु थी, कांग्रेसका अितिहास पूरा पढ़ाया नहीं गया था, गोलमेज जैसे विषयोंसे अनभिज्ञ था, अिसलिअे अुस विषयमें फेल हो गया। सुबह पास होनेवाले विद्यार्थी बापूके पास आशीर्वाद लेने गये, तो अुनमें प्रतापको न देखकर अुन्होंने पूछा। कारण मालूम होने पर अुसे बुलाया और कहा "क्या पास होनेवालोंको ही आशीर्वाद मिलता है? तेरे साथ अन्याय तो नहीं हुआ?" "नहीं, बापू, हरगिज नहीं। जब मैं अेक विषयमें फेल हूं तो मुझे प्रमाणपत्र क्यों मिलना चाहिये?" प्रतापने अुत्तर दिया। बापू बोले "तेरे जवाबसे मैं खुश हूं। मगर मेरी रायमें तुझे प्रमाणपत्र अवश्य दिया जाना चाहिये।" नियमानुसार प्रमाणपत्र तो प्रतापको नहीं मिला, मगर दूसरे दिन वर्धामें प्रमाणपत्र देनेके समारोहमें बापूने अिस घटनाका अुल्लेख अवश्य

किया। बापू जहा व्यवस्था और नियमोंमें दखल नहीं देते थे, वहा मनुष्यकी असली योग्यताकी कद्र किये बिना नहीं रहते थे।

१८

प्रतापको फेल होनेका दुःख तो हुआ ही, क्योंकि अच्छे-अच्छे कार्यकर्ताओंके मुकाबलेमें अिस छोटेसे बालकने अच्छा दर्जा पाया था। बापूको मालूम हुआ तो अुन्होंने भारतानन्दजी (पोलिश अिंजीनियर मि० मॉरिस फ्रिडमैन) को बुलाकर अुनसे कहा "प्रतापको राजकुमारी अंग्रेजी तो पढाती ही है। तुम कारखानेमें अपना काम भी सिखाओ।" थोड़े दिन बाद जब भारतानन्दजीने बापूको रिपोर्ट दी कि प्रताप अच्छा अिंजीनियर बन सकता है, तब बापूने अुसे वर्धामें रहकर मैट्रिक पास करनेकी अनुमति दे दी। मगर यह शर्त लगा दी कि अुसे छात्रालयमें न रखा जाय और मैं स्वयं अुसके साथ रहू। मुझे अिस घटनासे पता चला कि बापू विद्यार्थियोंके स्वास्थ्य और चरित्रकी रक्षाके लिअे अुनको छात्रावासोंमें रखनेके बजाय माता-पिताके साथ रखनेके ही पक्षमें थे। अिस प्रकार बापू आधुनिक शिक्षाके विरुद्ध होते हुअे भी पात्र देखकर अपवाद कर देते थे। अनुभवने प्रतापके लिअे अुनके निर्णयको बिलकुल सही साबित कर दिया।

१९

सेवाग्राम आश्रममें अविवाहितोंके कपड़े आम तौर पर दर्जीसे सिलवाये जाते थे। रजाअियोंमें डोरे तक अुसीसे डलवानेका रिवाज था। मुझे यह बात खटकती थी। मुझे अपने पास काम कम होनेका असंतोष भी था। मैंने प्रस्ताव किया कि ये कपड़े मैं सी दिया करू। अिस पर आश्रमकी अेक बहनको यह आपत्ति हुअी कि अिससे दर्जीका रोजगार छिन जायगा। बापूको समाधानके लिअे पूछा गया तो अुन्होंने अुत्तर दिया, "यों तो हम भंगीका रोजगार भी छीनते हैं। परंतु स्वावलंबन हमारा ध्येय है। जितना काम हम कर सकें वह तो खुद हमीको कर लेना चाहिये। दूसरोंसे वही करावें, जो हमारे बतेका न हो।"

२०

सेवाग्राममें साप-बिच्छू बहुत थे। बिच्छू काटनेकी घटनाअें अक्सर होती थीं। अेक दिन प्रतापके साथ भी अैसी ही बीती। मुझे सख्त खासी थी। मेरी तकलीफका खयाल करके बापूने प्रतापको अपने पास ही रख लिया। मुझे लगा कि बापूको कष्ट होगा, नींद नहीं आयेगी, अिसलिअे मैंने आग्रह किया कि प्रतापको मेरे ही पास भेज दिया जाय। बापूने अुसे भेज तो दिया, मगर अिस शर्त पर कि प्रतापकी

देखभाल मैं न करूं बल्कि कृष्णचद्रजी और शकरन्जी करे। सुबह बापू स्वय आये और प्रतापको हसी-दिल्लगीसे खुश करके अपने सामने दतुन कराया और दूध और राब पिलाअी। पीते ही प्रताप सो गया। स्त्रियो और बच्चोका, विशेषत बीमारीमें, बापू सचमुच पितासे भी बढकर खयाल रखते थे।

२१

अेक नम्र आश्रमवासी मद्रास लौट रहे थे। रास्तेमें वे आश्रमी भोजनके सिवा कुछ नही खाना चाहते थे। अिसलिअे व्यवस्थापकने अुनके लिअे भोजनालयमें कुछ 'भाखरिया' बना देनेकी हिदायत दी। हम कुछ स्त्रिया रसोअीघरमें खाना बना रही थी। अुनमें से अेक बहनने आलोचना की "आश्रममें-तो सब नवाब बन जाते है। सबको रास्तेके लिअे भी यहासे खाना बनाकर देना पडता है।" अुधर बापूको कहीसे खबर लगी थी कि भोजनालयमें मक्खिया होने लगी है। वे मक्खियोंके सख्त खिलाफ थे। अुनकी स्वच्छताका आदर्श यह था कि टट्टी और रसोअीघर दोनोमें अेक भी मक्खी नही होनी चाहिये। यही देखनेको न जाने कबसे वे आकर हम लोगोके पीछे खडे थे। अुन्होने आलोचना सुनी तो कहने लगे, "हा, नवाब बन जाते है। अिसलिअे भाखरी तो जानेवालेके लिअे बननी ही चाहिये। मेरे लिअे बनती है तो अिस भाअीके लिअे क्यो न बने? मगर ये मक्खिया क्यो है?" अुस दिनके बाद वह शिकायत फिर नही हुअी और भोजनालयका प्रबध भी सुधर गया। कमजोरका पक्ष लेनेमें बापू कभी नही चूकते थे।

२२

बहनके पास फलोका भडार रहता था। बीमारोको आवश्यकतानुसार वही मोसम्बिया बाटती थी। बेचारी अीमानदारीसे मानती थी कि 'बडे' आदमियो और कार्यकर्ताओकी आदतोमें फर्क होता है, अिसलिअे अुन्हे क्रमश बढिया और घटिया दर्जेकी मोसम्बिया देनेका भेद करना अनुचित नही है। तदनुसार अेक रोज मेरे हिस्सेमें जरा अुतरी हुअी मोसम्बिया आ गअी और अच्छी अच्छी बिडलाजी और नरेन्द्रदेवजीके पास पहुच गअी। सयोगवश किशोरलालभाअी मुझे देखने आ गये और अुनकी नजर मोसबियो पर पड गअी। वे तो अैसे भेदभावके कट्टर शत्रु थे। मैंने अुनकी त्यौरी पर कभी बल नही देखा था, मगर आज पड गया और अुन्होंने कृष्णचद्रजीको बुलाकर मोसम्बिया दिखाअी। बात बापू तक पहुची। मुझे तो अिस पर बडा सकोच हो रहा था, मगर व्यवस्थापकजी नही माने। बापूने तुरत ही वह काम बहनसे छीन लिया। अैसे मामलोमें बापू बडे कठोर थे। बडेसे बडेको भी नही बख्शते थे।

२३

अेक बार सेवाग्राममें मुझे, सीता और सुभद्रा तीनोंको अेक साथ कूकर खासी हुअी। बापूने आश्रम व्यवस्थापकको आदेश दिया कि अेक आश्रमवासी हर समय हमारी देखभालके लिअे हमारे पास रहे। वह कातता रहे और जब काम हो अुठकर कर दे। अेक दिनके बाद मुझे बडा सकोच हुआ और मैंने आग्रह करके व्यवस्थामे यह परिवर्तन करा दिया कि वह भाअी दिनमें चार बार आकर हमें सभाल जाय और जो काम हो कर जाय। दूसरे दिन जब बापू देखने आये तो अुस भाअीको वहा न पाकर बिगडे। मैंने बहुतेरी सफाअी देनी चाही, परतु बापू न माने और कृष्णचद्रजीको बुला भेजा। बापूका वह रूप देखकर अुनका तो यह हाल हो गया कि काटो तो खून नही। बापूने तेजीमें कहा, "यहा कोअी न कोअी हरदम रहना ही चाहिये। तुम लोग अिन्तजाम नही कर सकते हो तो मैं आकर रहूगा।" नतीजा यह हुआ कि जब तक हम लोग बीमार रहे यह व्यवस्था ही कायम नही रही, बल्कि स्वय बापूकी देखरेख अितनी अधिक और स्नेहमयी थी कि हमें कभी महसूस ही नही हुआ कि हमारे माता-पिता या बच्चोंके पिताजी पासमें नही है।

२४

जमनालालजीके देहान्तसे पहले जब अुनकी तबीयत ज्यादा खराब हुअी तो वर्धासे बापूके पास फोन आया कि आप रक्तचापकी अपनी दवा लेकर जल्दी आअिये। अितनेमें मोटर भी आ गअी। बापू अुसमें सवार होने लगे तो दूसरा फोन आया कि सेठजी तो चल बसे। यह खबर सुनकर मैं, राजकुमारी बहन और घनश्यामदासजी बिडला भी बापूजीके साथ ही वर्धा चले गये। वहा जाकर देखा तो सेठजीकी माताके सिवा और किसीके आसू नही थे। बापूके ससर्गसे बजाज परिवारको सयमकी अितनी शिक्षा मिल चुकी थी। दिलोंमें दर्द और चेहरो पर रज तो सभीके था। जानकी-देवीका बुरा हाल था। अुन्होंने कहा, "अब मैं जीकर क्या करूगी? मेरी दाहक्रिया भी अिसी चिता पर होनी चाहिये। मैं तो सती होअूगी।" बापूने अुन्हें समझाया, "सच्ची सती वह है जो पतिके पीछे अुसका काम करे। जमनालालजी गोसेवा करते करते गये हैं। तुम्हें वही करते रहना चाहिये। अुनके धनका मालिक कमलनयन है।" जानकीदेवी बोली, "बापू, मेरे पास क्या है जो अुनके नाम पर दू? मुझमें कौनसी योग्यता है जिसे अुनके काममें अर्पण करू?" "क्यों नही?" बापूने कहा, "तुम्हारे पास जमनालालजी जो अढाअी लाख रुपया छोड गये हैं, वह गोसेवामें दान कर दो और अपना शरीर और बुद्धि भी अुसीमें लगा दो। रोटी तो कमलनयन देगा ही। नही तो आश्रम तो है ही।" जानकीदेवीने पानीकी अजलि लेकर अपने पतिदेवके प्रीत्यर्थ बापूकी पवित्र साक्षीमें अुन्हींका बताया हुआ सकल्प ले लिया और हिन्दू नारीके महान आदर्शको पूरा किया।

२५

जानकीदेवीके बाद बापूने अुनकी बूढ़ी सासको संभाला। अुनके पास जाकर बोले, "माजी, रोनेसे प्राणीको दुःख होता है। जमनालाल चला गया तो क्या हुआ? मैं भी तो तुम्हारा बेटा ही हूं।" यों बुढ़ियाको सात्वना देकर औरोंको अर्थीके साथ भेज दिया और बापू और मैं माजीके साथ रहे। पीछेसे श्मशानमें पहुंचे तो अुन्हें जानकीदेवीको अन्त तक सभाले रखना पड़ा। दाहक्रिया गोपुरीमें सेठजीकी कुटियाके सामने ही हुअी थी। अुसके समाप्त होने पर जब हम लोग सेवाग्राम लौटे तो बापू राजकुमारीसे कहने लगे: "मैंने कल ही सपना देखा था कि जमनालाल कैसे गायको बचायेगा। अिसका बड़ा भारी बोझा है। अुसके कंधे अितने मजबूत नहीं हैं। यह तो स्वराज्यसे भी मुश्किल काम है। बेचारा अिसी भारके नीचे दबकर मर गया।" मैं कभी कभी सोचा करती हूं कि जमनालालजी भी चले गये और बापू भी। अब अिस महान कार्यको कौन पूरा करेगा?

२६

अेक बार बा बीमार हो गअीं। डॉक्टरने अुन्हें अुठनेसे मना कर दिया। अिसलिअे बापूने अुनकी कुटियामें कमोड रखवा दिया। बाकी अिच्छा नहीं थी, पर बापू नहीं माने। मुझे अुसे साफ करनेका काम सौंपा गया। मैं अेक दिन तो सफाअी कर आअी। दूसरे दिन बाने मना कर दिया। बोलीं, "बहन, कमोडकी जरूरत नहीं। बापू तो यूं ही किया करते हैं। मैं टट्टीमें ही जाअूंगी।" मैंने बहुत आग्रह किया, परंतु बा माननेवाली कहां थीं? शामको बापू देखने आये तो मैं भी वहीं थी। बापूको जब सारा हाल मालूम हुआ तो कहने लगे, "क्यों अंजना, नापास हो गअी न? बा पास कर दे तो वह सोलह आने पास है।" बाने कहा, "मैं कमोड पर जाअूंगी तो स्वयं ही साफ कर लूंगी।" अुन्होंने वैसा ही किया। बा दूसरोंकी सेवा तो खूब कर देती थीं, परंतु दूसरोंसे सेवा कराती नहीं थीं।

२७

अुसी दिन बापूने कहा, "बा, तुम्हारा खाना अम्तुल यहीं ले आयेगी। रसोडेमें मत जाना।" बाने अुत्तर दिया, "नहीं, मैं तो भोजनालयमें ही जाकर खाअूंगी।" असल बात यह थी कि बाको बीमारीमें भी यह बर्दाश्त नहीं होता था कि बापूके भोजनकी देखरेख वे खुद न करें। अुनका खयाल था कि वे ही बापूका खाना ठीक तरहसे लगा सकती थीं।

२८

अेक समय बापूको लडकियोंके बाल कटवानेकी धुन सवार हुअी। स्त्री-जातिको बालोंसे बडा मोह होता है। वे पुरुषोंके विकारका कारण भी बनते हैं। फिर भी कुछ बहनों और बालिकाओंने बापूके कहनेसे अपने बाल कटवा लिये, बाकीने नही कटवाये। अेक दिन सीताको सिरदर्द हुआ। बापूको अच्छा मौका मिल गया। सीताको देखने आये तो बोले, "बाल कटा देगी तो तेरी पीडा भी मिट जायेगी और बाल भी ज्यादा बढेंगे।" सीताके बाल छोटे थे, बडे होनेकी बात अुसको जच गअी। अुसने बाल कटवा दिये। संयोगवश अुसे बुखार आ गया। बापूने अुसे मोसंबी पर रखा। कुछ दिन बाद अुसने रोटी मांगी तो बापूने अुसे अपनी थालीमें से खाखरा दिया, मगर अेक ही दिया। बा देख रही थीं। अुनसे न रहा गया और सीताको डबल रोटी और देकर खुश कर दिया। बा सदा अिसी प्रकार बच्चों पर स्नेह प्रदर्शित करनेमें बापूसे दो कदम आगे रहती थीं।

२९

बा आश्रमका खाना न खाकर अपने लिअे अलग बनाती थीं। अुसमें [illegible], मसाला और तली हुअी चीजें भी होती थीं। अुनमें से वे बच्चोंको भी देती रहती थीं। बापू अिसे सहन कर लेते थे। मगर समय-समय पर मीठे व्यंग और विनोद द्वारा टोकते भी रहते थे। अेक दिन भोजनके समय कहने लगे "आज तो बडी मसालेदार चीज बनी दीखती है। जी ललचा रहा है। अितना कौन खायेगा? हमें भी खिलाओगी?" बापूको खाना तो क्या था? अमलमें बापू सच्चो तो [illegible] पर ही सबसे अधिक करते थे और दूसरोंकी बातोंको — यदि वे नीति-विरुद्ध न होतीं — अधिकसे अधिक सहन कर लेनेकी अुदारता रखते थे।

३०

बा दीपावली और बापूका जन्मदिवस अच्छे ढंगसे मनाती थीं। [illegible] गांधीजीकी खातिर सादगीका पूरा ध्यान रखती थीं। [illegible] अंग यह था कि आश्रमके सब बच्चोंको [illegible], [illegible] और [illegible] थी। बात यह थी कि बा अेक पतिव्रता नारी [illegible] थीं, मगर वे हिन्दू नारीके रूपमें [illegible] और त्योहार तथा अुत्सव आदि मनाये बिना नहीं रहती थीं।

३१

१९४१ की बापू-जयंतीका दिवस था। महिला आश्रमकी लड़कियां बापूको प्रणाम करने आओीं और अपने काते हुओे सूतकी अेक बारीक धोती अुनको भेंट की। बापूने कहा, "अिन भेंटका अधिकारी मैं नहीं, बा है।" लड़कियोंने कहा, "आप बड़े हैं, अिसलिओे आपको ही स्वीकार करनी चाहिये।" "नहीं, बड़ी बा है", बापू बोले, "असलमें अुम्रमें वह मुझसे छ: महीने बड़ी है। वह कहती है मैं बड़ा हूं। यह घोटाला अिसलिओे हो रहा है कि मेरे स्कूलके रजिस्टरमें अंदाजसे ज्यादा अुम्र लिख दी गओी थी और वही चली आओी है। कोओी जन्मपत्री तो थी नहीं।" धोती छोटी थी। वह बापूके ही काम आ सकती थी। मगर अिस तरह विनोद करके समय-समय पर सबके सुखकी निर्दोष वृद्धि करते हुओे बापू अपनी मानवताका परिचय दिया करते थे।

३२

सुभद्रा छोटी थी। कोओी पांच छह वर्षकी होगी। तकली पर तो वह कातती ही थी। अेक दिन अुसे चरखे पर कातनेकी धुन सवार हुओी। बापू तो बच्चोंके लिओे घरकी मुर्गी दाल बराबर थे। झटसे बोली, "बापू, मैं भी चरखा चलाअूंगी।" बापूने पूछा, "चलायेगी तो सही, मगर तेरा हाथ कैसे पहुंचेगा?" सुभद्रा वहां तो चुप हो गओी, मगर सीधी भारतानंदके पास गओी और अुनसे अपनी कठिनाओी बयान की। वे तो बच्चोंके प्रेमी हैं ही। अुसके लिओे अेक चक्रका पेटी चरखा तैयार करा दिया। अुसी पर महीने दो महीनेमें मोटा सूत कातकर अुसने कपड़ा बुनवा लिया और अेक दिन शामको भोजनके बाद जब बापूजी मुंह-हाथ धो रहे थे तो वहीं जा पहुंची और बोली, "लीजिये, बापूजी, मैंने तो चरखा भी बनवा लिया, अुस पर सूत भी कात लिया और अब अुसीका यह कपड़ा आपको भेंट करने लाओी हूं। आपको लेना होगा।" बापूको तो बच्चोंसे ठठोली करनेका मौका चाहिये। कब चूकनेवाले थे? कहने लगे, "लेकिन भाओी मैं तो दान नहीं लेता। तू दाम ले ले तो मैं कपड़ा ले लूं।" "मैं क्या कोओी बेचने आओी हूं? आप दूसरोंसे भेंट कैसे ले लेते हैं? मेरा कपड़ा खराब है, अिसलिओे नहीं लेते होंगे।" "अरे नहीं, नहीं, सुभद्रा, यह बात नहीं है। कपड़ा तो तेरा बड़ा अच्छा है। मैं अिसके तौलिये बना सकता हूं। मेरी पट्टियोंके काम आ सकता है। दूसरोंसे भेंट लेता हूं वह सब मैं थोड़े ही काममें लेता हूं। मेरा तो अपना ही सूत अितना हो जाता है कि मेरी जरूरतसे बच जाता है तो बाकी दे देता हूं। अच्छा, तू पूरी कीमत न ले तो थोड़ीसी ले ले।" शायद वे लड़कीकी परीक्षा ले रहे थे कि दामोंके लालचमें आती है या नहीं। मगर सुभद्रा टससे मस न हुओी तो अन्तमें अुन्होंने अेक पट्टीके लायक कपड़ा कटवा कर रख लिया। सुभद्रा खुश खुश होकर लौट आओी। शायद वह मन ही मन अपनी जीत पर फूल

रही थी। ससारका वह महानतम व्यक्ति भी अैसी हारोंमें असाधारण आनद अनुभव करता था।

३३

चि० प्रतापको टॉन्सिलकी बीमारी रहती थी। बापूने अपने अुपाय करके देख लिये और अुनसे काम नही चला तो वर्धा ऑपरेशनके लिअे भेज दिया। लौटकर आने पर बापू अुसे अच्छा होने तक रोज दोनो समय देखने आते। पहले ही दिन बापूने पूछा "क्यो, कैसा है?" प्रतापने लिखकर बताया "ठीक हू।" "बोला नही जाता?" बापूने पूछा। "बोला जाता है, मगर डॉक्टरने मना कर रखा है। आपने ही तो सिखाया है कि अनुशासन मानना चाहिये।" बापू बहुत खुश हुअे और खानेके बारेमें जानना चाहा। प्रतापने लिखकर दिया "पतली चीज बताअी है।" बापूने जाकर अपना सेबका रस भेज दिया। अम्तुल बहन लेकर आअी तो प्रतापने लिखकर बताया, "मै तो मोसबीका रस ले चुका हू और बापूका हिस्सा लेना मुझे अच्छा भी नही लगता। आप वापस ले जाअिये।" अम्तुल बहनने कहा, "बापूका आग्रह है। अुनका खयाल है कि अुनसे तुम्हारी जरूरत ज्यादा है।"

३४

बापूके अिस तरहके वात्सल्य और त्यागमय व्यवहारका मनुष्यो पर कितना स्थायी असर होता था, अिसका अनुभव प्रतापके सबधमें ही बडा शुभ हुआ। बात यह हुअी कि बम्बअीमें हम 'तुकाराम' का सिनेमा देखकर लौट रहे थे तब प्रतापने पूछा "पिताजी, विद्यार्थियोंको सिनेमा देखना चाहिये या नही?" अुन्होंने कहा, "नही देखना चाहिये। बापूकी भी यही राय है।" बापूजीके मन और पिताकी आज्ञाने आश्रमके वातावरणसे अुपकृत और परिष्कृत हुअे बालक प्रतापके निर्मल मनको श्रद्धा और अनुशासनमें अैसा बाधा कि अपने विद्यार्थी-जीवनमें एक बार भी सिनेमा देखने नही गया। अनेक अवसरो पर साथियो और बुजुर्गोंने आग्रह किया, परन्तु प्रताप सिनेमा देखने नही गया सो नहीं गया। वह [illegible] गया जब अुसका विवाह होने पर अुसके पिताजी ही अुसे और नववधूको दिखाने [illegible]।

३५

यह अनुभव मुझे अपने सभी बच्चोंके बारेमें हुआ। मैने अपने [illegible] पुत्रियोंको क्वचित् ही पीटा है। लेकिन ये घटनाअें [illegible] छत्रछायामें रहनेका सौभाग्य नही मिला था। मुझे [illegible] और पश्चात्ताप हुआ है। सच पूछा जाय तो [illegible] जबसे ये बच्चे दो वर्ष तक बापूके साथ [illegible]

कोअी खास शिकायत नहीं हुअी। आश्रममें अुन्हें सफाअी, नियमितता, सदाचार, सादगी, परिश्रम, कर्तव्य-परायणता, नम्रता, संस्कृति आदिकी जो शिक्षा मिली, अुनके कारण घरोंमें आम तौर पर बच्चोंके झूठ बोलने, चीजें चुराने, खाने-पहननेमें दुराग्रह करने, लड़ाअी-झगडा करने, गाली-गलौज करने, पढनेसे जी चुराने और अन्य कुटेवोंसे जो समस्यायें अुत्पन्न होती हैं अुनका सामना मुझे नहीं करना पडा। बुद्धि, हृदय और शरीर-विकासका यह सामजस्य मैं बापूके सान्निध्यका ही परिणाम समझती हू।

३६

अिस सुपरिणामका परिचय देनेवाली अेक घटना मुझे और भी याद आ रही है। सन् १९४३ की बात है। सीता-प्रताप दोनों बाहर मोतीझिरेमें रोगशय्या पर पड़े थे। अुनके पिताजी अजमेर जेलमें नजरबन्द थे। हमारे परिवारके मित्र होमियो-पैथ डॉ० राजपालजी और अुनकी धर्मपत्नीका अिलाज था। अुनके यहा खुफिया पुलिसके अिस्पेक्टर पुरी भी अिलाजके लिअे आया-जाया करते थे। हमारी निगरानी तो अुनका काम ही था। जब अुन्हें मेरी परेशानीका पता चला तो डॉक्टरजीको सुझाया कि "चौधरानीजी चाहे तो मैं चौधरीजीको पैरोल पर छोड़नेकी सिफारिश कर सकता हू।" मैं जानती थी कि वे अिस प्रकार छूटना हरगिज पसन्द नहीं करेंगे। मैं स्वयं भी अैसी जलील प्रार्थना सरकारसे करनेको तैयार नहीं थी। तब डॉक्टरजीने प्रतापको टटोला। मेरी परेशानीका भय और पिताके दर्शनोंका प्रलोभन दिखाया। लेकिन प्रतापने कहा. "मैं अपने लिअे अपने वीर पिताकी देशभक्तिको बट्टा नहीं लगा सकता। और बापू सुनेंगे तो मेरे लिअे क्या खयाल करेंगे?"

३७

अुन्हीं दिनों प्रतापने किसी बात पर चिढकर सीताके अेक चांटा लगा दिया। यह बात मेरे मुहसे प्रसगवश जेलमें मुलाकातके समय अिनके पिताजीके सामने निकल गअी। अुन्हें बडा दु.ख हुआ। अुन्होंने प्रतापको लिखा कि, "बापूके साथ रहकर अहिंसाका पाठ सीखे हुअे लड़केके लिअे यह गंभीर भूल है। अिसका तुम्हें हार्दिक पश्चात्ताप हो तो सीतासे क्षमा-याचना और आयदा अैसा न करनेकी प्रतिज्ञा करो। अिसकी सूचना मुझे तीन दिनमें न मिलेगी तो मैं अुपवास करूगा।" बेचारे प्रतापके लिअे अपने कारावासी पिताका दु ख और प्रायश्चित्त असह्य था। अुसने अुनकी आज्ञा पालन करके समय पर सूचना भेज दी। दुर्भाग्यवश सेन्सरके कारण वह अुन्हें वक्त पर नहीं मिली और अुन्होंने अुपवास किया। परन्तु अुस दिनके बाद प्रतापने अपनी बहनों पर कभी हाथ नहीं अुठाया!

३८

अेक जर्मन यहूदी युवती छुट्टियोंमें बापूके सत्संगके लिअे सेवाग्राम आकर रहा करती थी। अेक बार वह अपने साथ अपनी कुतियाको भी ले आओी। बापूने पूछा: "अिसे क्यों लाओी हो? अिस पर खर्च क्यों किया?" युवतीने कहा "यह मुझे बहुत प्रिय है। न लाती तो अिसे कष्ट होता। अिसे लानेमें खर्च नहीं करना पड़ा, क्योंकि टोकरीमें बन्द करके ले आओी हूं।" बापूको और भी बुरा लगा। बोले: "यह तो चोरी हुओी। वैसे भी तुम्हें प्यार करनेकी चीज ही चाहिये तो किसी जानवरके बजाय किसी गरीब बच्चेकी परवरिश करो।" युवती शर्मिन्दा हो गओी। बापू प्राणीमात्रके प्रति दयाभाव रखते हुअे भी मनुष्य और पशुका विवेक यहां तक रखते थे कि गायकी खातिर भी मुसलमानोंसे लड़नेकी हमेशा निन्दा करते थे।

३९

बापू सैरको जाते तब तेज चलते थे। अिसके लिअे सहारेके तौर पर दो लड़कियोंके कंधों पर हाथ रखकर चलते थे। अिस पर लड़कियोंमें स्पर्धा होने लगी तो अुनकी बारियां बांध दी गओीं। अेक दिन अुस यहूदी लड़कीकी बारी थी। वह कुछ देरमें पहुंची तो सुभद्रा बीचमें ही कूद पड़ी और बापूजीका हाथ पकड़कर अपने कंधे पर रख लिया। अिधर बारीवाली लड़की पहुंची और अुसने अपना हक मांगा तो सुभद्रा मचल गओी। अुधर सुभद्राका कद बहुत छोटा होनेके कारण बापूको सुभीता होनेके बजाय अुल्टी दिक्कत हो रही थी। वे तो कुछ नहीं कह रहे थे, मगर मुझे बुरा लग रहा था। मैंने सुभद्राको हट जानेके लिअे जरा झिड़क कर कह दिया। बापूको यह कैसे सुहाता? अुन्होंने मुझे अुलहना दिया और सुभद्राको तब तक समझाते रहे जब तक बात अुसकी समझमें नहीं आ गओी। अन्तमें अुसने खुशीसे यहूदी युवतीके लिअे जगह कर दी। संसारकी बड़ी-बड़ी समस्याओंको हल करनेवाले गांधीजी अिस प्रकार बच्चोंकी छोटी-छोटी बातोंमें भी अुतनी ही दिलचस्पी लेते, अुन्हें तालीम देते और स्वयं आनन्द लूटते थे।

४०

अेक दिन सायंकालीन प्रार्थनामें रेहाना बहन तैयबजीने देशमें अन्नकी कमीका प्रश्न छेड़ा और बापूसे अुसका हल पूछा। बापूने कहा कि अन्न-अुत्पादनका सारा बोझा किसान पर ही नहीं डालना चाहिये। सभी खानेवालोंको बूतेके माफिक पैदावार करनी चाहिये। हमारे पास जो भी फालतू जमीन हो अुसमें मूंगफली, शकरकंद और शाक-भाजी वगैरा बोकर अुसका अुपयोग करना चाहिये। बापू तो जो कहते थे वही करते थे। अुन्होंने अपने दालानमें खेती शुरू कर दी। फिर तो सभीने अुनका अनुगमन आरम्भ कर दिया। बापूके पास रचनात्मक सुझावोंका भंडार भरपूर रहता था।

४१

बापू बड़े सरगरम आहारशास्त्री और प्रयोगकर्ता थे। दूधको अुबालनेसे अुसका 'सी' विटामिन नष्ट हो जाता है और अुबाले बिना दूधमें रोगके कीटाणु होनेकी सभावना रहती है। अिसलिये बापू अुसमें टमाटर या नीबू डालकर खानेकी सलाह देते थे। वैसे भी आश्रममें नीबू काफी होते थे। मगर अुनका रस काममें लेकर छिलके फेंक दिये जाते थे। मुझे यह खटकता था। अेक दिन मैंने सुझाव दिया कि छिलके काच या चीनीके बर्तनमें भर दिये जाय और अुनमें थोडासा नीबूका रस और नमक डाल दिया जाय तो अेक अच्छा स्वादिष्ठ और लाभदायक खाद्य बन सकता है। बापू तो प्रयोगोंके लिअे अुत्सुक और किफायतके लोभी थे ही। अुन्होंने तुरन्त अनुमति दे दी। १५ दिन बाद जब वह निर्दोष अचार आश्रममें परोसा गया तो यह नअी चीज सबको बड़ी पसन्द आअी। फिर तो नीबूका बिना ममालेका यह अचार हमेशा बनने लगा।

४२

अिसी तरह आश्रममें खोपरा बहुत काममें आता था। गीले खोपरेको तो किस-कर बीमारो और कमजोरोंको दे दिया जाता था और छूछको या तो शाकमें मिला दिया जाता था कृष्णचन्द्रजी वगैरा कोअी खा लेते थे। शाकमें छूछ मिलाने पर कुछ आपत्ति की गअी, तो बापूने अुसे अनुचित बताया और छूछके अुपयोगका समर्थन किया। वे तो किसी भी स्वास्थ्यप्रद प्रयोगको सदा ही प्रोत्साहन देते थे।

४३

सुभद्रा कोअी पाच छह वर्षकी होगी। बापूकी रामायण और छोटीसी लालटैन अुसको पसन्द आ गअी। अेक दिन माग बैठी। बापू तो विनोदके साथ साथ बच्चोंको हर बातमें शिक्षा भी देते थे। झट बोले, "तू दोहा पढकर सुनायेगी तो दे दूगा।" सुभद्राने शर्त कबूल कर ली, मगर अुसे तो वर्णमाला भी नही आती थी। बापूने अपनी रामायण और लालटैन अुसे दे दी। साथ ही अुसे समझा दिया कि अुन्हें सभाल-कर रखे और प्रार्थनाके समय ले आया करे। सुभद्राने सीतासे सुनकर दो-तीन दोहे रट लिये और रामायणमें अुनका स्थान वगैरा पहचान लिया। अुनमें से अेक दोहा यह था .

> रघुकुल रीति सदा चलि आअी ।
> प्राण जाहिं पर बचन न जाअी ।।

अेक दिन जाकर अुसने बापूको दोहे सुना दिये। बापूके पूछने पर, यह भी बता दिया कि दोहे किस पृष्ठ पर हैं। बापू सारी कारस्तानी समझ गये और बोले

"तुझे जितनी देर दोहे सीखनेमें लगी अुतनी देर तूने रामायण रख ली। अब जब तू रामायण पढ़ने और समझने लगेगी तब तुझे रामायणकी अेक पुस्तक मिल जायगी।" नतीजा यह हुआ कि जो सुभद्रा पहले राजी नही थी अुसने लिखना-पढना सीखना शुरू कर दिया। जब हमने सेवाग्राम छोडा तो वचनानुसार सुभद्राको सटीक तुलसीकृत रामायणकी अेक प्रति ही नही मिली, बल्कि बादमे पत्र द्वारा भी बापू अिस सम्बन्धमें अुसे प्रेरणा देना नही भूले, जैसा कि महाबलेश्वरसे १५-५-'४५ को भेजे हुअे अुनके अिस पत्रसे प्रगट होता है

"चि० सीता, तेरा खत अच्छा है। सुभद्रा तो अब मुझे रामायण सुनायेगी। तेरा अभ्यास भी अच्छा लगता है। प्रतापने बहुत अच्छा किया है। जुगलकिशोरजी कहा सीखे? माकी क्या चिकित्सा चलती है? मैं अुत्तर दू या नही मुझे लिखा कर। जहा तक मुझे स्मरण है पारनेरकरजीने मुझे कुछ दिया नही। शायद बात की होगी। पिताजीको मेरे आशीर्वाद। मैं आशा रखता हू वह बिलकुल अच्छे और ताकतवर हो जायगे।

बापूके आशीर्वाद"

४४

जेलमे अेक बार प्रतापके पिताजीको दिलका दौरा हुआ। मुझे बडी चिन्ता हुअी और घबराहट महसूस हुअी। अुसी मनोदशामें शान्तिके लिअे मैंने बापूको सब हालचाल लिखे। अुत्तरमे अुनका यह पत्र आया

"महाबलेश्वर, २-५-'४५

चि० अजना,

तुमारा खत मिला है। रामनारायणकी मै फिकर नही करता हू। वह बहादुर है। अच्छे हो जायेगे। तुमने खत दिया सो अच्छा ही हुआ है। लडके सब अच्छे हैं सुनकर खुश होता हू। अब तो सब बहुत मोटे लगते होंगे। अुनका अभ्यास क्या हो रहा है लिखो। तुमने ठिकाना नही दिया है। तुम कैसी हो? मैं अच्छा हू।

बापूके आशीर्वाद"

अिस प्रकार प्रियजनोके बारेमें अपनी बनी हुअी अच्छी राय आहिर करके बापू सान्त्वना व प्रसन्नता प्रदान करते थे, साथ ही पता न लिखने जैसी छोटी-मोटी भूलोका सकेत भी करते थे। अिस पोस्टकार्डमें बापूकी हिन्दीमें बच्चोंके लिअे 'लडके', पढाअीके लिअे 'अभ्यास' और बडेके लिअे 'मोटे' — ये मुहावरेदार शब्द ध्यान देने लायक है।

४५

आश्रम छोड़ते समय बापूने मुझसे कहा था कि "तू काफी सूत कातती रहेगी तो वह अच्छी सेवा समझूंगा।" तदनुसार हमने साल भरमें कोअी ८ लाख गज सूत कातकर और लगभग १२५ गज कपड़ा भी घरके सूतका बुनवाकर बापूकी ७८ वीं वर्षगांठ मनाअी। यह सूचना देते हुअे मैंने बापूको अुनके जन्मदिन पर प्रणाम भेजे और आशीर्वाद मांगे। अिसका जवाब अुन्होंने मुझे यह दिया।

"नयी देहली, २०-९-'४६

"चि० अजना,

तुमारा खत मिला। जो हिसाब तुमने भेजा है अुसके लिअे अवश्य धन्यवाद देना चाहिये। रोज ४ गुंडी (६४० तारकी अेक) कातती हो अुसमें कितना समय लग जाता है? सुभद्रा जो कातती है अुसका समय कितना जाता है?

नीता क्या करती है?

बापूके आशीर्वाद"

बापूके लिअे हमारे जैसे हजारों नहीं तो सैकड़ों कार्यकर्ता होंगे। सबके बच्चोंके नाम याद रखना, अुनकी पढ़ाअी और स्वास्थ्यके बारेमें पूछताछ करना कितना कठिन काम है? परन्तु बापूके हृदय और स्मृति-सागरमें अिन सब बूंदोंके लिअे बराबर स्थान था।

४६

सेवाग्राम आश्रममें अेक दिन हमारी झोंपड़ीके पीछे पड़ी हुअी लकड़ियोंमें अेक सांप घुस गया। मुझे अपने लिअे तो नहीं, परन्तु बच्चोंके लिअे डर लगा। भाअी मुन्नालालजी सांप पकड़नेमें विशेषज्ञ माने जाते थे। अुन्हें सूचना दी तो वे अपना काठका लम्बा चिमटा लेकर चले आये। अपनी सारी कला खर्च करके वे कोअी घंटेभरमें सांपको पकड़ पाये, परन्तु अिस कशमकशमें वह घायल हो गया। खैर, अुसे तो रिवाजके मुताबिक जंगलमें छोड़ दिया गया। मगर बापूको अुस हिंसक पशुका भी जख्मी होना खटकता रहा। शामकी प्रार्थनामें अुन्होंने अिस घटनाका अुल्लेख करते हुअे कहा, "आम तौर पर सांप निर्दोष प्राणी होते हैं। वार होने पर ही क्रोधमें आकर काटते हैं। अुन्हें अधिक नरमी करके पकड़ना होता है। मनुष्य और पशुमें यही भेद है कि पशु प्रकृतिके अनुसार चलता है और मनुष्यको बुद्धिसे चलना चाहिये।"

अेक बार बापूके पास अुनकी अेक लाडली गोद ली हुअी बेटीकी शिकायत आअी कि अुसका पति अुसके साथ मारपीट करता है। अुन्होंने दोनोंको मिलने बुलाया। रूबरू होने पर अुन्होंने युवकसे कहा "पति-पत्नीका सबंध प्रेमका और दर्जा बराबरीका है। जो अिसे न निभा सके वह अयोग्य है। मारपीट करोगे तो . को छीन लूंगा।" लडकीको शायद यह खयाल न होगा कि बापू अितना सख्त रुख लेंगे। अन्तमें अुसीने कहा, "बापू, अेक बार समझाकर और मौका दीजिये।" बापू तो अुदारताके भंडार थे ही, राजी हो गये। मगर वे स्त्री-जाति पर होनेवाले जुल्मको सहन नहीं कर सकते थे और अुसके विरोधमें कडीसे कडी कार्रवाअी करनेको भी तैयार रहते थे।

४८

अेक बार प्रेमाबहन कंटक हाथ-पैरोंमें मेंहदी लगाकर सेवाग्राम आअी। आश्रम-वासियोंको यह अटपटा लगा। कुछने अुनकी खिल्ली भी अुडाअी। प्रेमाबहनने अिसकी परवाह नहीं की। बापूजी प्रेमाबहनको देखकर मुस्कराये तो सही, मगर अुन्होंने आश्रमवासियोंसे कहा "तुम प्रेमाबहनको नहीं जानते। यह जब कालेजमें थी तो अेक डंडा रखती थी और लडकियोंको छेडनेवाले लडकोंकी अुससे अच्छी तरह खबर लेती थी। अिनके चरित्र पर सन्देह नहीं किया जा सकता।" बापू भीतरी गुणोंका विश्वास होने पर किसीकी बाहरी त्रुटियोंकी परवाह नहीं करते थे।

४९

सन् १९३४ में हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें बापू अजमेर आये थे। बा भी साथ थीं। अुनके टट्टीके पॉट अुठानेका काम मैंने अपने जिम्मे लिया था। मगर बाने मुझे अुठाते देख लिया। फिर क्या था? अुठाने ही नहीं दिया और खुद ही साफ किया। अैसी थीं बा कि किसीको अपना काम तो करने ही नहीं देती थीं, बस चलते बापूका भी नहीं करने देती थीं।

५०

अुस अवसर पर बापूके दलके लिअे भोजनका प्रबंध मेरे और मास्टर भोला-नाथजी बाकलीवालके सुपुर्द था। भोजन और सब तरह बापू और अुनके साथियोंके अनुकूल ही था। बापूने भी पसन्द किया। लेकिन मास्टरजीके जीमें आया कि इनके लोगोंको कुछ मीठा खिलाया जाय। मैंने बापूको नापसन्द होनेकी बात कही। इतने ही में बा आ पहुंची और पूछा, "क्या मामला है?" मास्टरजी बोले, 'बा, आपके साथवालोंको कुछ रसगुल्ले खिलाये जायं तो कुछ आपत्ति है?" बा ता

समझती ही थी कि आश्रमवालोंको समय-समय पर कुछ स्वादिष्ठ चीजें मिल जाया करें तो अच्छा है। कहने लगी, "नही रे, क्या हर्ज है? खिलाओ तुम तो।" हमने खाना परोसनेके बाद रसगुल्ले परोसे। बापूने देखते ही कहा : "अरे, अरे, यह क्या आफत है?" हम जानते थे, अिसलिअे बापूको तो परोसनेका साहस किसे होता? दूसरोंके लिअे हमने सब किस्सा सुना दिया तो बापू हंसकर बोले . "बासे परवानगी ले ली है तो फिर मेरी क्या चलनेवाली है? बा अैसा ही करती है। मुझे अच्छा लगता है।"

५१

सेवाग्रामके खादी-विद्यालयमें अेक दिन विनोबाका प्रवचन हुआ। प्रताप अुसका विद्यार्थी था। प्रवचनमें विनोबा नमक पर कुछ बोले होंगे। अुससे प्रभावित होकर अुसने चार मास तक नमक छोड़नेकी प्रतिज्ञा कर ली। मैंने अिसमें जोखम समझकर बापूको सूचना दे दी। अुन्होंने तुरंत प्रतापको बुलाकर समझाया . "प्रतिज्ञा समझकर लेनी चाहिये। नमक हड्डीके विकासके लिअे जरूरी है। ३० वर्षकी अुम्र तक वह लाभदायक और बादमें हानिकारक नही तो अनावश्यक है। अिसलिअे तुम्हें यह प्रतिज्ञा नही लेनी चाहिये। अंजना ले तो अच्छा है।" बापू ज्ञानपूर्वक ली हुअी प्रतिज्ञाका ही समर्थन करते थे और अज्ञानमें किये हुअे प्रण अनुचित समझते थे और अुन्हें छुड़वा देते थे।

५२

सरकारने ओझा नामक खुफिया पुलिसके सिपाहीको होशियार समझकर आश्रमकी निगरानीके लिअे नियुक्त किया। भीतर आनेकी हिम्मत तो नहीं होती थी, अिसलिअे बेचारा बाहर घूमता या बैठा रहता। बापूको दया आअी। अुन्होंने कहा . "भाअी, तुम कष्ट क्यों अुठाते हो? आश्रममें रहा करो। वहा सर्दी, गरमी और बरसातसे बच सकोगे।" ओझा आश्रममें रहने लगा। धीरे-धीरे अुसके मन पर बापूजी और आश्रम-जीवनका असर पड़ने लगा। फिर तो वह दिन-भर चरखा चलाता और आश्रमका काम करता रहता। सन् '४२ के आन्दोलन तक तो अुस पर अैसा रंग चढ़ गया कि वह गुप्तचरी करना भूल गया और बापूकी गिरफ्तारीके थोड़े ही दिन बाद अुसने नौकरीको लात मार दी। मैंने साबरमतीमें भी देखा था कि पुलिसका आदमी आश्रममें आनेवालोंके नाम-पते पूछने आता तो व्यवस्थापक खुशीसे बताते थे। बापूके यहा कोअी छुपानेकी बात ही नही थी।

५३

जाजूजीके लड़के नारायणका विवाह हुआ था। नअी नवी बहू आअी थी। जाजूजीकी पत्नी—जिन्हें हम बाबी कहते हैं पुत्रवधूको लेकर बापूके आशीर्वादके लिअे आश्रम आअी। मेरी झोंपडी पहले-पड़ती थी, अिसलिअे मैं भी साथ हो गअी।

सूची